ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत चमत्कार

एक पुरातन ऋषि का दिव्य जन्म

१४ सितम्बर सन् १९४२, में उत्तर-प्रदेश के गाजियाबाद जिले के, ग्राम खुर्रमपुर-सलेमाबाद में एक विशेष बालक का जन्म हुआ। बालक जन्म से ही एक विलक्षणता से युक्त था। और विलक्षणता यह कि जब भी यह बालक सीधा, श्वासन की मुद्रा में, कुछ अन्तराल लेट जाता या लिटा दिया जाता, तो उसकी गर्दन दायें-बायें हिलने लगती, कुछ मन्त्रोच्चारण होता और उसके उपरान्त विभिन्न ऋषि-मुनियों के चिन्तन और घटनाओं पर आधारित ४५ मिनट तक, एक दिव्य प्रवचन का प्रसारण होता। पर एक अपठित ग्रामीण बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जन-मानस आश्चर्य करने लगा, बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनों की गूढ़ता के विषय में कोई भी कुछ कहने की स्थिति में नहीं था। इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनों से ही हुआ। कि यह आत्मा सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालों में, श्रृङ्गी ऋषि की उपाधि से विभूषित और सतयुग के काल में आदि ब्रह्मा के शाप के कारण इस युग में जन्म लेने का कारण बनी। इस जन्म में अपठित रहने की स्थिति में जैसे ही यह शरीर श्वासन की मुद्रा में आता तो कुछ अन्तराल बाद इस दिव्यात्मा का पूर्व जन्मों का ज्ञान उद्बुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष में उपस्थित सूक्ष्म शरीरधारी दिव्यात्माओं के समक्ष एक सत्संग सदृश्य स्थिति बन जाती जिसमें इस महान आत्मा का सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के लिए प्रवचन होता। जिसमें इस आत्मा के पूर्व जन्मों के शिष्य महर्षि लोमश मुनि पूज्य महानन्द के प्रवचन भी होते। क्योंकि इस दिव्यात्मा का स्थूल शरीर यहां मृत्यु लोक में स्थित होने के कारण वहां सत्संग में दिये जाने वाला दिव्य प्रवचन इस शरीर के माध्यम से यहाँ उपस्थित जन-मानस को भी सुनाई देते हैं। इन प्रवचनों में ईश्वरीय सृष्टि का अद्भुत रहस्य समाया हुआ है, जो किसी भी मनुष्य को, समाज और राष्ट्र को उच्च कोटि का जीवन जीने का कारण पैदा करने का सामर्थ्य रखते हैं। -**श्रृङ्गी ऋषि वेद विज्ञान प्रतिष्ठान**

१ चरित्र से संसार विजय—19 10 1976

जीते रहो, देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मंत्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो इस संसार का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है। हम उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन, प्रायः हमारे प्रत्येक वेद मंत्रों में होता रहता है। क्योंकि वे सूत्र से मानो कटिबद्ध है।

"ओ३म" रूपी धागा

इससे पूर्वकाल में बेटा! हमने सूत्रों के संबन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था कि यह संसार एक सूत्र में पिरोया हुआ है और वह जो सूत्र है उसका नाम है ओ३म रूपी धागा। उस धागे को सूत्र कहा जाता है। जब हम ये विचारने लगते है कि एक ही सूत्र में ये ब्रह्माण्ड अथवा प्रत्येक लोक लोकान्तर पिरोया हुआ है। मानो देखो, एक-एक परमाणु एक-एक अणु मानो उसी धागे में पिरोया हुआ है। ये जगत् एक प्रकार की माला है। जो उस माला को धारण कर लेता है वो इस संसार से खिलवाड करने लगता है।

मेरे पुत्रों! जो इस संसार सागर से ऊर्ध्वागति को जाना चाहता है वो मानो चेतना में कटिबद्ध हो जाता है। जिस चेतना के लिए मानो वो पिपासी है अथवा प्रयत्न करता रहता है। शान्त मुद्रा में जब विद्यमान हो जाता है तो मानो देखो, चेतना से अपने को भिन्न वह स्वीकार नहीं करता। वह अपने को और उस चेतना दोनों को एक ही मानो एकोकी स्वीकार करके अग्रणीय बन जाता है। वो उस महान अग्नि की विद्युतधारा, में रमण करने लगता है जिस धारा के पश्चात् बेटा! मानो अमरावती को प्राप्त हो करके सोम रस का पान करता है। आज मैं उस सम्बन्ध में, तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट नहीं करने आया हूँ। आज का हमारा वेद का ऋषि अथवा वेद का मंत्रः हम जो उसकी मंत्रणा करते हैं अथवा एक-एक मंत्र के ऊपर चिंतन प्रारम्भ करते हैं। तो हमें बेटा! यह संसार ऐसा प्रतीत होने लगता है जैसे मानो ये ब्रह्माण्ड एक आभा में ओतप्रोत है और उस आभा में प्रत्येक प्राणी अपने में कटिबद्ध हो रहा है और उसी आभा में रमण करता हुआ परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन कर रहा है। अथवा उसको दृष्टिपात् कर रहा है।

विज्ञानमयी संसार

आओ, मेरे पुत्रों! मैंने बहुत पुरातनकाल में निर्णय देते हुए कहा था कि यह संसार बेटा! विज्ञानमयी माना गया है। प्रत्येक मानव ये चाहता रहता है कि मेरा मानवीय जीवन विज्ञानमयी होना चाहिए। परन्तु जब विज्ञान में रमण करने लगते है, तो विज्ञान एक ऐसी वस्तु है जो इसको जानने के पश्चात्, मानों कोई शेष नहीं रहता। परन्तु वह दो प्रकार का विज्ञान है। मैंने दो प्रकार के विज्ञान की मीमांसा कई काल में की है। एक विज्ञान वह कहलाता है जो भौतिक विज्ञान है और एक विज्ञान वह है जिसे हम आध्यात्मिक विज्ञान कहते है। बेटा! भौतिक विज्ञान तो परमाणुवाद है। ये भौतिकवाद है, नाना प्रकार की चित्रावली-वाद है। लोक-लोकान्तरों में जो मानों उसमें रिभ्रृत रमण कर रहा है उसका नाम भौतिकवाद है।

आध्यात्मिक विज्ञान

परन्तु वह जो आध्यात्मिकवाद है, वह आध्यात्मिकवाद क्या है? वह मानव की उड़ान है। आध्यात्मिकवाद वह है जो आत्मा का विज्ञान है। आत्मा का विज्ञान क्या है? आत्मा का विज्ञान उसे कहते, जिस कारण से मानव

दुखित रहता है। उस दुःख के कारणों को जानने का नाम मुनिवरो! देखो, आध्यात्मिक विज्ञान कहलाता है। कोई भी मानव यह जो अपने में काल्पनिक अथवा कल्पना करने लगता है और उन वाक्यों का चिंतन करने लगता है और यह जानने लगता है कि वास्तव में मुझे उस धारा को जानना है, उस विज्ञान को जानना है। जिससे मानों देखो, मुझे दुःख न हो। दुखद् और सुखद् दोनों को त्यागना है, दोनों से मुझे उपराम होना है।

मेरे प्यारे! उपरामता क्या है? बेटा! वो त्याग में उपरामता है। वो संसार के नाना पदार्थो को मानो त्याग देता है। उसे खिलवाड़ करके त्यागता है। तो वो मानव देखो, संसार में उदासीन नहीं होता। मेरे प्यारे! जो भी मानो इस संसार में आध्यात्मिक विज्ञान को जानना चाहता है वो भौतिकवाद के मार्ग से होकर के जाता है। यह मैंने कई काल में तुम्हें वाक्य प्रगट किये हैं। आज मैं कोई नवीन बात तुम्हें प्रकट नहीं करा रहा हूँ क्योंकि जो भी मानव जाता है इस संसार से, वह भौतिक मार्ग से होकर के जाता है। परमाणुवाद को जानकर के जाता है। बुद्धि, मेधा, ऋतम्भरा, प्रज्ञावी चारों प्रकार की बुद्धियों को जानकर के मानव, उस आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है। आध्यात्मिकवाद का प्रवेश क्या है? आध्यात्मिकवाद क्या है?

जीवन की सुगन्धि

मेरे प्यारे! देखो, अपने मानवीय दर्शन को जानना। क्योंकि जब मानव दर्शन करता है। जैसे यज्ञशाला में यजमान विराजमान हो जाता है और देखो, त्यागपूर्वक अपनी पत्नी से कहता है हे देवी! आज मैं मानवीय दर्शन के लिए अपने मनस्तव का त्याग कर रहा हूँ, ममता का त्याग कर रहा हूँ। मानो मैं अपने अभिमान का त्याग कर रहा हूँ। मेरे प्यारे! देखो, जैसे वह कहता है। जैसे ये साकल्य मानो भस्माभूत हो करके और स्वाहा कह करके जब हम मानो देवत्व को प्राप्त होते है। तो वह 'देवं ब्रह्माः' मैं अपनी इंद्रियों का शोधन कर रहा हूँ ऐसे ही जैसे मानो नाना साकल्य अग्नि में भस्म हो जाते हैं और भस्म हो करके सुगन्धि देते हैं और दुर्गन्धि को निगल लेते हैं। इसी प्रकार हे देवी! मैं अपने मानव जीवन को, मानवीय दर्शन को जानना चाहता हूँ। मेरा मन्तव्य केवल यही है कि मैं अपनी मानवीय नाना त्रुटियों को भस्म करता हुआ और अपने विचारों से सुगन्धि देना चाहता हूँ। मैं अपने विचारों की उड़ान उड़ना चाहता हूँ। कौन-सी उड़ान उड़ना चाहता हूँ? मैं स्थूल, सूक्ष्म, और कारण शरीरों को जानना चाहता हूँ? क्योंकि जो आत्मा के ये मानो देखो, आत्मा जिनमें कटिबद्ध रहता है। जिसमें चेतना, अपना कार्य करती रहती है। मैं उस चेतना को जानने के लिए मानो सदैव तत्पर होना चाहता हूँ।

अन्तःकरण की यज्ञवेदी

मेरे पुत्रो! उस समय देखो, यजमान यह कहता है पुरोहित से, हे पुरोहित! तू वास्तव में अन्नाद है, मेरा भोज्य है। हे पुरोहित! तू मेरा भोज्य है, क्योंकि तू मुझे भोजन देता है। तू! आत्मा की सामग्री देता है, आत्मा का भोजन देता है। जैसे नाना प्रकार के भौतिक पदार्थो का पान करता हुआ मेरे उदर की पूर्ति होती है मानो मेरा शरीर पौष्टिक बनता है। हे पुरोहित! मैं तेरे उपदेश का पान करता हुआ, मैं तेरे वेदामृत का पान करता हुआ, मैं प्रकाश को अपने में धारण करता हुआ, मैं प्रत्येक इंद्रियों के विषय को जानना चाहता हूँ? और प्रत्येक इंद्रियों के विषय को जान करके उनका साकल्य बनाकर के देखो, अग्नि में आहुति, मैं अन्तःकरण को यज्ञवेदी बनाना चाहता हूँ और यज्ञवेदी बनाकर के, मैं काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह को देखो, मानो इसमें भस्माभूत करके, मानो देखो, हाँ, जो मेरा सखा है। मैं उसी को जानना चाहता हूँ जैसे अग्नि, प्रदीप्त हो रही है अग्नि की अग्नि को सप्तजिह्वावादी कहते है। वह अग्नि का ऊर्ध्वा मुख हो रहा है। और ऊर्ध्वा मुख क्यों हो रहा है? क्योंकि उसका सखा ऊर्ध्वा भाग में है। वह कौन है? मानो देखो? वह सूर्य है। वह सूर्य देखो, उस अग्नि का प्रतिनिधित्व कर रहा है। इसीलिए अपने सखा के लिए जाता है। इसी प्रकार मेरा जो अन्तरात्मा है। वह अपने पिता के लिए प्रेरित हो रहा है, अपने पिता

के लिए लहलाहित हो रहा है। मानो देखो, वह भी अपने महान तीनों कारणों को, तीनों शरीरों को जानकर के अपना उत्थान करना चाहता है। मेरे प्यारे! यजमान जब यज्ञशाला में प्रवेश हो करके कहता है तो मानो देखो, यजमान उसे सद् उपदेश देता है। वेद की वाणी को देता है। वेद की वाणी में जो मानो रहस्यतम होता है। उसे परिणत करा देता है।

तो मेरे प्यारे! वह अपने मानवीय धारा को जानता है। अपनी मानवीयता दिग्दर्शन करता है।

अयोध्या में याग

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नही हूँ, केवल संक्षिप्त परिचय करने चला आता हूँ और वह परिचय क्या है? मैं तुम्हें उसी परिचय पर ले जाना चाहता हूँ। बेटा! मैंने इससे पूर्व शब्दों में, मैं अयोध्या में वास कर रहा था अयोध्या की चर्चा कर रहा था। भगवान् राम के यागों की चर्चा कर रहा था। मेरे प्यारे! जब वह मानो देखो, याग प्रारम्भ हो गया, तो उस समय महाराजा भरत और शत्रुघ्न ने अयोध्यावासियों ने भगवान् राम और सीता को मुनिवरो! देखो, यज्ञशाला में प्रवेश करा दिया। यज्ञशाला में वे प्रवेश हो गये। मानो देखो, यज्ञशाला में यजमान के रूप में राम और सीता ओत-प्रोत हो गये। मेरे प्यारे! देखो, महर्षि विभाण्डक और देखो, उनके जो कुल पुरोहित महर्षि वशिष्ठ थे और माता अरून्धती विद्यमान थी मेरे प्यारे! देखो, नाना ऋषि विद्यमान थे वहाँ, महाराजा विश्वामित्र इत्यादियों का समूह एकत्रित हो रहा था। एक बुद्धिमानों की सभा, सभा एक सम्मेलन के रूप में, कार्यशाला के रूप में मानों देखो, याग हो रहा था। याग होते हुए भगवान् राम से महाराजा विश्वामित्र ने ये कहा कि हे राम! तुम लंका को विजय करके आए हो, मानो तुम्हें ये पता है कि 'विजय' शब्द क्या है?

समाज की सेवा

उस समय भगवान् राम कहते है कि ये जो विजय शब्द है मानो देखो, इसको विजयं अब्रहाः देखो, मैंने कोई विजय नहीं किया है। आज जो मानो अपने मानवीय जीवन को मानो देखो, मानवीय दर्शन को नहीं कर सकता। आज मानवीय दर्शन को नहीं पा सकता वह संसार को क्या विजय कर सकता है। मेरे प्यारे! राम ने कहा है कि मैंने मानो अपने इंद्रियों को कुछ-कुछ जाना है। इस संसार को विजय करने वाला मैं कौन हूँ? मानो देखो, विजय कौन कर सकता है? दशानन को कौन विजय कर सकता है? जो दर्शनों मानो देखो छः दर्शन और चारों वेदों को जानने वाला है उसे कौन विजय कर सकता है? मानो देखो, मैं विजय नहीं कर सकता। वह विजय नहीं, वह तो समाज की एक सेवा है। मैं मानव समाज का मानो देखो, मुझे समाज ने अपना प्रतिनिधित्व चुना है। चुनौती प्रदान की है। मुझे निर्वाचन किया है। और मैं अपने कर्तव्य का पालन करके आ रहा हूँ। मैं विजय करके किसी को नहीं आया। क्योंकि विजय तो मैं स्वतः जब मैं अपने को विजय कर सकूँगा। जब मैं जानूँगा की मैं अयोध्यापुरी का वासी बन गया हूँ।

सुचरित्र से नम्रता

मेरे प्यारे! देखो, राम में कितनी नम्रता थी। ये नम्रता मानव में कैसे आती है? नम्रता उस काल में आती है जब मानव देखो, सुचरित्र होता है। उस मानव में ये नम्रता आती है। जो मानव देखो, ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्वागति को बनाने वाला होता है। मेरे प्यारे! देखो, राम जैसा महा योगेश्वर संसार को विजय कैसे कर सकता है? मानो देखो, हनुमान जी जैसा महासिद्धियों को जानने वाला देखो, जो दीपक, अग्नि के राग को जानने वाला हो, जल पर रमण करने वाला हो, अपने स्थूल और सूक्ष्म शरीर की क्रिया को करने वाला हो। आज वह मानव, आज वह महापुरुष मुनिवरो! देखो, लंका को कैसे विजय कर सकते है?

मानो देखो, विजय नहीं, उन दोनों ने ये कहा था कि विजय करके नहीं आए है। हम तो केवल देखो, सेवा करके आये है, हम सेवक हैं संसार के। क्योंकि प्रभु के राष्ट्र में न कोई बलवान है, न कोई बलिष्ठ है। भगवान् के राष्ट्र में तो मानो सब अपने अपने कर्तव्य का पालन करने के लिए आये है। वाह रे, मेरे देव! ये महापुरुषों की शैली है उच्चारण करने की। ऋषि मुनियों के समीप वे नम्रता से कहते है कि महाराज! हम तो अपने कर्तव्य का पालन करके और विभीषण को वहाँ का, राष्ट्र का प्रतिनिधित्व प्रदान करके हम मानो देखो, लंका से इस अयोध्या में आ पधारे हैं। यहाँ भरत के द्वार आ गये। मानो यहाँ भी हमें समाज की सेवा करनी है समाज को कर्तव्य में लाने का हमारा कर्तव्य है।

मैंने जब ये मानो श्रवण किया तो मुनिवरो! देखो, नाना ऋषियों ने ये कहा हे राम! ये तुम्हारा विवेक और नम्रता इस प्रकार ही बनी रहे। ये तुम्हारी नम्रता बनी रहे, क्योंकि इससे राष्ट्र, समाज ऊँचे बनते है। क्योंकि राष्ट्र और समाज को ऊँचा कोई भी मानव बनाना चाहता है तो वह सबसे प्रथम अपने राष्ट्र में ये विचारे कि मेरे आपसे ये समाज सुचरित्र भी बन सकता है अथवा नहीं, क्योंकि सुचरित्र बनाना, महानता को लाना यही मानो देखो, उसका कर्तव्य कहा जाता है। यही कर्तव्यवाद है।

तो मेरे प्यारे! देखो, याग प्रारंभ होने लगा, उद्गान गाये जाने लगे। जटापाठ, धनपाठ, मालापाठ में बेटा! वेदों का पठन-पाठन मानों देखो, स्वरों में पठन-पाठन की प्रणाली परम्परागतों से ही हमारे यहाँ मानी जाती है। मेरे पुत्रो! देखो, जब समाज में मानों गान होने लगा तो मुनिवरो! देखो, याग समाप्त होने के पश्चात् मध्यकाल में मानों बुद्धिमानों की विचारधारा के लिए मानों देखो, बुद्धिमानों का एक समाज एकत्रित हुआ। उस समाज में भरत जी ने ये कहा-कि महाराज! मेरी इच्छा ये है कि आपने संसार में मानों देखो, बहुत कार्य किया। लंका में संग्राम किया है, मानो आपने पातालपुरी में संग्राम किया अब इच्छा ये है कि आप राष्ट्र के वैभव को स्वीकार करो। मानो देखो, राष्ट्र को भोगो। ये भोगना क्या है? ये समाज को कर्त्तव्य में लाना है।

राष्ट्र का पालन

मेरे प्यारे! भगवान् राम ने और लक्ष्मण दोनों ने एक स्वर में कहा कि हमारी इच्छा ये है भरत! कि तुम्हीं इस राष्ट्र का पालन करो। मानो देखो, समाज को कर्त्तव्य में लाना है, ये कार्य तुम स्वतः ही करो। परन्तु हम तो तुम्हारी मानो सेवा कर सकते हैं, राष्ट्र के प्राणियों की सेवा कर सकते हैं। भरत जी ने कहा-नहीं, भगवन्! ये मेरा कार्य नहीं है क्योंकि मैं तो आपका सेवक हूँ। मैंने जो ये तेरह वर्षों का राष्ट्र का पालन किया है। ये भी मैंने केवल आपका दायित्व किया है आपके चरणों की वंदना की है। मैंने गायत्राणी छंदों का पठन-पाठन किया है। और तप किया है। प्रभु! से ये प्रार्थना करता रहता था कि राम जब तक आए, प्रजा में अनुशासन बना रहे। मानो वेद के पठन-पाठन करने वाले ब्राह्मण गृह-गृह में पुरोहितपने का कार्य करते रहें। जिससे अयोध्या का राष्ट्र मानो देखो, उसकी सुरक्षा हो सके। मैं तो ये प्रार्थना प्रभु से करता रहा हूँ, मैं तो आपके चरणों की वंदना करता रहा हूँ। आपकी पादूका मानो देखो, राजस्थली पर विद्यमान है। मैं इस राष्ट्र का अधिकारी नहीं हूँ।

चरित्र की स्थापना

मेरे पुत्रो! देखो, वह कितना महान त्याग है विधाताओं का। कितना स्नेह है विधाताओं का। इसीलिए समाज में इस प्रकार का त्याग स्वतः आ जाता है। मेरे पुत्रो! देखो, प्रजा में राष्ट्र की बिल्कुल आवश्यकता नहीं रहती। परिणाम क्या? वेद के आचार्यो ने ये कहा-कि राम! ये भरत क्या कह रहे हैं? राम ने कहा-कि आपने भी श्रवण किया है और मैं भी श्रवण कर रहा हूँ। परन्तु मेरी इच्छा तो यह है कि मैंने इतना संग्राम किया है अपने कर्तव्य का पालन किया है। अब मेरा शेष कर्त्तव्य क्या रह गया है? मैं ये नहीं जानता हूँ कि मेरा शेष कर्त्तव्य क्या रह गया

है? आपको यह प्रतीत है, मुझे महर्षि वशिष्ठ ने पूज्यपाद गुरुओं ने ये कहा था कि अब तुम इस संसार में चरित्र की स्थापना कर दो। तो मानो देखो, राष्ट्र में अस्त्रों और शस्त्रों को लो और तुम विज्ञान के द्वारा मानो विज्ञान को लाना और चरित्र को लाना यह तुम्हारा कर्त्तव्य है। मानो मैंने इनकी आज्ञाओं का पालन किया है और आज्ञाओं का पालन करते हुए मैंने सर्वत्र देखो, लंका में और लंका के राष्ट्र को ये शिक्षा दी है, ये घोषणा की है कि तुम्हारे राष्ट्रो में चरित्र होना चाहिए। और चरित्रवाद की मानो देखो, यही कृतिभा, यही उसकी प्रतिमा होती है।

रावण देखो, मृत्यु की शैय्या पर स्थिर होता है दुष्चरित्रवादी जो प्राणी होता है उसकी संसार में मृत्यु होती है और जो चरित्रवान होते है उनकी संसार में पूजा होती है, वे पूजा के पात्र कहलाए गए है। इसीलिए मेरी इच्छा यह है कि मानों मैंने ये कार्य, मैंने कर्त्तव्य का पालन किया है विभीषण को राष्ट्र का राज दिया है मानो हनुमान के पुत्र मकरध्वज को पातालपुरी का अधिराज बनाया और देखो, यहाँ पृति सोमवृतिक नाम के राजा को मैंने राष्ट्रीय चुनौती प्रदान की है।

सेवा के लिए जन्म

अब मेरा शेष क्या कार्य रह गया? जैसे मानो ये संसार चरित्र की आभा का पालन कर रहा है इससे मेरा राष्ट्र भी मानो देखो, हमारा ये रघुवंश परम्परागतों से मानो मेरे बाबा, महाबाबा ने महाराजा दिलीप ने नन्दनी की सेवा की। उसकी सेवा करते-करते राष्ट्र का भी उन्हें ज्ञान नहीं रहा था। मानो देखो, हमारा ये कुटुम्ब, हमारा ये समाज तो मानो पुरातन से त्यागियों का रहा है। हम त्यागी बनना चाहते है। मानो देखो, राष्ट्रों के लिए हमारा जन्म नहीं हुआ। हमारा जन्म तो सेवा के लिए हुआ है। हमारे जो महाबाबा थे दिलीप जी उन्होंने मानो देखो, नन्दनी की, सेवा की कामधेनु की सेवा की और दोनों की सेवा करके जब नन्दनी, कामधेनु जब मानो देखो, अव्रताः भयंकर वनों में पहुंची थी तो देखो, जब बाध ने, जब सिंह ने देखो, जब कामधेनु पर आक्रमण किया तो दिलीप जी ने प्रार्थना की थी वे मेरे महाबाबा कहलाते थे।

त्याग, तपस्या के जीवन का प्रभाव

मानो देखो, उन्होंने प्रार्थना कर ये कहा कि ये तो मेरी देन है। ये तो देवताओं की देन है। देवताओं की प्रेरणा है मुझे, कि तुम गऊओं की सेवा करो। मानो सिंह ने उस प्रेरणा को, उस प्रार्थना को स्वीकार करके उस नन्दनी को त्याग दिया, अपने भोज्य को त्याग दिया। परन्तु महाराजा दिलीप की वाणी की उन्होंने प्रसन्नता की है। हमारा तो त्याग और तपस्या का जीवन होना चाहिए कि सिंहराज भी हमारी वाणी का आदर करने वाले हो, मृगराज भी हमारी वाणी का आदर करने वाले हो।

मेरे पुत्रो! ये भगवान् राम ने मध्यकाल के यज्ञ के पश्चात् विचारगोष्ठी में इन वाक्य को प्रकट किया था। आज मैं बेटा! उनकी प्रशंसा क्या करूँ। उन्होंने कहा था-कि मेरे महाबाबा मानो देखो, दिलीप जी महापिता जब मानो व्रतेन्तु ब्रह्मचारी उनके द्वारा पहुँच गये तो महाराजा कोर से संग्राम करके महाराजा कोर से द्रव्य लाकर के ऋषियों की सेवा करते थे। जब द्रव्य नहीं रहा था उनके द्वारा उसका तो सर्वत्र याग किया था और देखो, द्रव्य जब राष्ट्र में नहीं रहा तो व्रतेन्तु ब्रह्मचारी आ गये तो मानो उन्होंने महाराजा कोर से देखो, विजय करके उन्होंने द्रव्य को प्रदान किया था। हम तो उस तपस्या में, त्याग में जीवन को बनाना चाहते है। हे भरत! क्या पादुका राष्ट्र का पालन कर रही है? मानो पादुका तो राष्ट्र में राजस्थली पर विद्यमान है। लेकिन कर्त्तव्य का पालन तो तुम कर रहे हो। मुझे तो इसमें प्रसन्नता है। मुझे तो इसमें मानो देखो, मेरा अन्तरात्मा तो गद्गद् रहता है।

यन्त्रों का निर्माण

मैं ये कहा करता हूँ कि हमारा कार्य है याग करना। हमारा कार्य है सुगन्धि देना। विचारों की सुगन्धि दो,

कहीं पदार्थों की सुगन्धि दो, कहीं अग्नि को अग्रणीय बनाकर के मानो देखो, यंत्रों का आविष्कार होना चाहिए। हमारा कर्त्तव्य है कि हम अपने मानवीय दर्शन को, दार्शनिकता से विचार विनिमय में करने वाले हो। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही मानो देखो, मृत्यु को जानने के लिए सदैव तत्पर रहे है। हमारे यहाँ विज्ञान की गोष्ठियाँ होती रही हैं। विज्ञानशालाओं में विद्यमान हो करके मानो देखो, नाना प्रकार के यंत्रों का निर्माण होता रहा है।

आज हम मानो देखो, त्याग तपस्या की अयोध्या को भगवान् मनु भयंकर वनों में लोकों की लेखनीबद्ध करते थे। वही लेखनी में अयोध्या का निर्माण कर दिया था। उसके पश्चात् एक नगरी का निर्माण किया हमारा जो वंशलज है वहीं तो वंश कहलाता है। भगवान मनु से ये वंश चला आ रहा है। ये वंशों में नाना प्रकार के परिवर्तन होते चले आये है। मेरे पुत्रो! ये भगवान् राम ने इस प्रकार की उस मध्यकालीन मानो गोष्ठी में जब ये वाक्य कहा तो ऋषि मुनि सब गद्गद् रह गये, और उन्होंने कहा-धन्य है, तुम्हारे विचारों का हम आदर करते हैं। हे राम! मानो देखो, महाराजा वशिष्ठ और माता अरून्धती कहती हैं, धन्य है, मानो आज हमारा आश्रम सफल हो गया है।

आश्रम की मर्यादा

जब अरुन्धती यह कहने लगी तो उस समय मुनिवरो! देखो, माता अनुसुइया कहने लगी ये तुमने क्या वाक्य कहा? उन्होंने कहा-ये बाल्य काल में हमारे मानो आश्रम में ये हमारे आश्रम की मर्यादा है। क्योंकि हमें त्याग और तपस्या से रहना चाहिए। देखो, गृह में भी प्रवेश हो जाये तो वहाँ भी हमें त्याग और तपस्या की आवश्यकता है। मानों देखो, जो राष्ट्र को खिलवाड़ जान रहा है। खिलवाड़ जान करके मानो उससे खिलवाड़ कर रहे हैं दोनों विधाता, मानो इससे महान त्याग क्या हो सकता है?

मेरे पुत्रो! जब ये वाक्य उन्होंने कहा तो उनकी माँ ने देखो, उन ऋषि मुनियों का आशीर्वाद, ऋषि मुनियों की विचारधारा होने लगी। उन्होंने कहा-राम! देखो, तुम्हारा कर्त्तव्य है अब तुम्हारा याग कुछ समय में समाप्त हो जाएगा, तुम इस राष्ट्र का पालन करो। क्योंकि राष्ट्र का पालन करना मानो ये भी तुम्हारा कर्त्तव्य है जहाँ तुमने इतना कर्त्तव्य किया है तुमने मानो एकोकी पताका का प्रसारण किया है वैदिक साहित्य का प्रसार करने के लिए एक संस्कृति को लाने के लिए तुमने इस संसार में बहुत पुरुषार्थ और प्रयत्न किया है। मानो देखो, उसमें सभी का सहयोग, सभी सहयोगी हैं, ऋषि मुनि भी सहयोगी है, भारद्वाज इत्यादि देखो, नाना ऋषिवर उसमें सहयोगी माने जाते है।

राष्ट्र का अनुशासन

परन्तु अब ये हमारा, तुम्हारा, सबका कर्त्तव्य है कि हम देखो, राष्ट्र को अनुशासन में जैसा चल रहा है मानो इसका अनुशासन नष्ट न हो पाये। यह इसी प्रकार चलता रहे। प्रत्येक मानव, प्रत्येक मेरी पुत्री, प्रत्येक ब्रह्मचारी अपने कर्त्तव्य का पालन करता रहे। क्योंकि हमारे यहाँ सर्वप्रथम याग माना गया है। क्योंकि हमारे यहाँ परम्परागतों में बेटा! याग प्रमुख रहा है और यागों की प्रमुखता क्यों हो रही है? क्योंकि ब्रह्मचर्य का पालन भी इसी याग के द्वारा होता है। क्योंकि एक ब्रह्मचारी अपने विद्यालय में याग कर रहा है और याग करते हुए उड़ान उड़ रहा है और आचार्य के समीप विद्यमान हो करके कह रहा है कि महाराज! हमारे इस याग को गाहर्पथ्य कहते है। गारर्पथ्य अग्नि को प्रदीप्त करने वाला मानो देखो, गाहर्पथ्य अपने जीवन को ऊँचा बनाता है, कैसे बनाता है? वह मानो देखो, अग्नि की पूजा करता है, जो अग्नि उसके मानवीय शरीर में प्रवाह से गति कर रही है। जिस अग्नि में मानो देखो, परमाणुवाद गति कर रहा है जिन परमाणुओं को जानकर के मानो ब्रह्मचारी अपने ब्रह्मचर्य की ऊर्ध्व गति को बनाता है। प्राणायाम के द्वारा प्राण की गति को जानता है। मनस्तव को जानता है क्योंकि संसार में मन और प्राण दोनों को जानना ही है भगवन्! देखो, गाहर्पथ्य नाम की अग्नि की पूजा कहलायी जाती है। क्योंकि मन

और प्राण ही मानो देखो, इस संसार में समाहित हो रहे हैं, नाना लोक लोकान्तरों में समाहित हो रहे हैं।

प्राण तत्त्व

आज मानो देखो, लोक लोकान्तरों के क्षेत्रों में जब हम प्रवेश करते है। हम लोको में जाते है। हम मानो एक आकाश गंगा से दूसरी आकाशगंगा में प्रवेश करते हैं तो वहाँ मन और प्राणस्तव ही दृष्टिपात् आता है। एक ही सूत्र है इस संसार का, उस सूत्र को प्राणस्तव कहते हैं।

मेरे प्यारे! देखो, वह ब्रह्मचारी अपने विद्यालय में उड़ान भर रहा है। उस उड़ान को उड़ता हुआ यंत्रों का निर्माण कर रहा है। उस अग्नि की पूजा करके, अग्नि की, उड़ान उड़कर वह अग्नि की सूक्ष्म-अग्नि को जानता है। उस सूक्ष्म-अग्नि को जान करके बेटा! वह मानो देखो, यंत्रों का निर्माण करता है। वह यंत्रों का निर्माण करता हुआ मानो देखो, दिव्यता से, यंत्रों से मेरे प्यारे! लोक-लोकान्तरों का दिग्दर्शन करता है।

आकाश गंगाओं का दिग्दर्शन

मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था एक समय बेटा! देखो, मैं महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज की विज्ञानशाला में मानो देखो, भारद्वाज की विज्ञानशाला में मेरे प्यारे! वशिष्ठ की यज्ञशाला में, ब्रह्मचारी उड़ान उड़ने लगते है। मानो देखो, उस समय बेटा! वशिष्ठ मुनि महाराज की विज्ञानशाला में मुनिवरो! देखो, श्वेनकेतु ब्रह्मचारी था। वह ब्रह्मचारी जब उड़ान-उड़ने लगा तो मुनिवरो! देखो, एक आकाशगंगा की उड़ान उड़ने लगा। एक आकाशगंगा को जाना, द्वितीय आकाशगंगा उपस्थित हो गई। द्वितीय को जाना तो तृतीय आकाशगंगा उपस्थित हो गई, और जब तृतीय को जाना तो चतुर्थ उपस्थित हो गई। इसी प्रकार जब 372 आकाश गंगाओं का दिग्दर्शन कर लिया और एक आकाशगंगा के लोकों की जब गणना करने लगा तो मुनिवरो! मानो देखो, ब्रह्मे व्रतः देवाः जिस सूर्य, मानो देखो, शनिमण्डल के, शनिमण्डल को वेद का ऋषि यह कहता है, वेद का मंत्र कहता है, कि एक शनिमण्डल को मानो देखो, लगभग पाँच सूर्य प्रकाश के लिए चाहिए। इतना बड़ा एक महान् मण्डल है जिसको शनि कहते हैं। एक समय शनिमण्डल की मुनिवरो! जब देखो, ब्रह्मचारी गणना करने लगा, वशिष्ठ की यज्ञशाला में तो मुनिवरो! एक अरब के लगभग मानो देखो, उन्होंने शनिमण्डल, एक आकाश गंगा में गणित करने लगा, तो उन्होंने कहा-अनन्त ब्रह्माण्ड है प्रभु का।

अरबों-खरबों सूर्य

मेरे प्यारे! आज जब एक आकाश गंगा में इतने शनि मण्डल ही मण्डल कहलाते है। मानो देखो, वह मण्डल जिसके मानों पाँच सूर्य एक मण्डल को प्रकाश के लिए चाहिए मानो उस आकाश गंगा में कितने सूर्य होंगे। मेरे प्यारे! अरबों-खरबों सूर्य मानो देखो, गणित करते रहते थे ऋषिवर। तो मुनिवरो! देखो, एक आकाशगंगा में जितने मण्डल है तो क्या प्रभु के विज्ञान को, जिसको हम भौतिकवाद कहते हैं। मेरे प्यारे! कोई भी वैज्ञानिक सृष्टि के प्रारंभ से ऐसा नहीं हुआ जो मानो देखो, इन आकाश गंगाओं को, लोक-लोकान्तरों को दृष्टिपात् कर सके। यह ऐसा अनन्त ब्रह्माण्ड हैं मानो देखो, अनन्तवत माना गया है। जिसको आज तक कोई वैज्ञानिक बेटा! माप नहीं सका।

आध्यात्मिक वाद

मैंने बहुत पुरातन काल में कहा था कि एक मानव इसकी उड़ान उड़ता हुआ देखो, मुनिवरो! विज्ञान की उड़ान उड़ता हुआ मानो आध्यात्मिकवाद में प्रवेश करता है। आध्यात्मिकवाद किसे कहते हैं? मानो दर्शन को आध्यात्मिकवाद कहते है। इस मृत्यु को, जो मृत्यु संसार को रुला रही है। मानो प्रत्येक मानव मृत्यु से भयभीत रहता है और ये मृत्यु मानो शरीर को त्यागना बहुत अनिवार्य है। मेरे प्यारे! इसी से भयभीत रहता है जीवन भर,

मानो जीवन में इसी से अभ्रीत रहता है। तो विचार विनिमय में क्या मेरे पुत्रो! आध्यात्मिकवाद मृत्यु को विजय करना है, और मृत्यु के विजय करने के गर्भ में बेटा! मानो देखो, आध्यात्मिकवाद है। प्रकाश है, आत्मवत् वही मुनिवरो! देखो, अनुपम ज्योति जिसको जानने के लिए सदैव ललाहित रहता है।

दीपावली पर्व

आओ मेरे प्यारे! आज का हमारा ये वाक्य क्या कह रहा है। मैं बेटा! तुम्हें त्रेता के काल में ले गया, त्रेता के काल में लेता चला जा रहा था। मेरे प्यारे! देखो, विचार गोष्ठी समाप्त हो गई विचार गोष्ठी समाप्त होने के पश्चात् मानो सायंकाल को याग प्रारम्भ होने लगा। मुझे स्मरण है वह याग लगभग पूर्णिमा से पूर्णिमा तक रहा, एक माह तक। उस याग के पूर्ण समाप्त होने के पश्चात् राम ने कहा-मैं अब कुछ समय मानो सरयू के तट पर, तपस्या करने जा रहा हूँ। मेरे प्यारे! देखो, सरयू के तट पर मानो वह पाँच माह तक तपस्या करने के

पश्चात् मानो वे दीपावली का पर्व, पुनः से आ गया। जिस दीपावली के दिवस, सबसे पूर्व में एक बेटा! देखो, आदि मानव ने मुनिवरो! देखो अग्नि को जाना था, दीप मालिका को जाना था। मानो वह ही पर्व आ गया। उस पर्व के दिवस मानो राम का पुनः से राज्याभिषेक हुआ था।

मेरे पुत्रो! आज का हमारा ये वाक्य क्या कह रहा है। मैंने यह कहा है अयोध्या से विजय होने के पश्चात्। एक माह तक याग हुआ मानो विजय होते ही दस दिवस के पश्चात् याग का प्रारम्भ हुआ और मुनिवरो! पाँच माह तक तपस्या में जीवन रहा गायत्राणी छंदों का पठन-पाठन किया, उन्होंने उपवास किया और मानो देखो, उसके पश्चात् उनका राज्याभिषेक हुआ और भरत और शत्रुघ्न उनके चरणों में ओत-प्रोत हो गये।

बुद्धिमानों द्वारा निर्वाचन

मेरे प्यारे! देखो, राजलक्ष्मी माता-सीता को उपाधि प्रदान की गयी। वह राज लक्ष्मी बनी मुनिवरो! देखो, प्रत्येक स्थली में अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन करने लगे। क्योंकि राष्ट्र की जो एक नियमावली है राष्ट्र जो होता है वह समाज को ऊँचाई पर ले जाने के लिए होता है। समाज को कर्त्तव्यवाद में लाने के लिए होता है। निर्वाचन जो होता है, बुद्धिमानों के द्वारा होता है, और बुद्धिमानों के द्वारा निर्वाचन हो करके समाज को याग इत्यादियों में समावेश करना, उनका समन्वय करना मानो देखो, अग्नाव्रतो का पालन करना, ये सब राजा का कर्त्तव्य होता है।

सात्विक क्रान्ति

राजा का कर्त्तव्य होता है वो समाज के वैभव को संग्रह करने वाला, राजा नहीं होता मानो देखो, ब्राह्मणों को वेद में कहा है हे ब्राह्मण समाज! हे बुद्धिमानों! तुम्हारे राष्ट्र में, तुम्हारा ये कर्त्तव्य है कि यदि तुम्हारे राष्ट्र में देखो, किसी प्रकार की कुरीति आ जाये, वह वैभव को संग्रह करने वाला बन जाये वह मानो देखो, ऐसे राजा को तुम ब्राह्मणों का कर्त्तव्य है कि वह घोषणा करे और समाज में सात्विक क्रांति ला करके ऐसे राजा से प्रार्थना की जाये कि राष्ट्र का अधिकार तुम्हें नहीं है। मानो देखो, ऐसा जो राष्ट्र होता है मेरे प्यारे! उस राष्ट्र को विष्णु राष्ट्र कहते है। तो मानो देखो, भगवान् राम ने उसी विष्णु राष्ट्र की स्थापना की। मानो देखो, उसके पश्चात् रामराज्य की स्थापना में रहा।

तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा ये विचार क्या कह रहा है? आज का विचार हमारा यह कह रहा है कि हमारा जीवन महान और पवित्र बनना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, भगवान् राम ने एक मानो देखो, विजय नामक अश्व को सर्वत्र ब्रह्माण्ड में, प्रत्येक राष्ट्र में अश्व का भ्रमण हुआ और ये घोषणा की, कि जो इस अश्व को अपने में धारण करेगा वह हमसे संग्राम करे। कौन-सा ऐसा हमारा कार्य है जिससे वह राजा संतुष्ट नहीं है। हमारी कौन-सी ऐसी अपसंस्कृति है। मानो देखो, उसको उपदेश दे करके, उपदेश से कार्य नहीं चलता तो शक्ति के द्वारा मानो

शक्ति, ज्ञान की शाक्ति और क्षत्र शक्ति उसके पश्चात् मानो देखो, गदा शक्ति से उससे संग्राम करके और उसके पश्चात् उसे देखो, अपने राष्ट्र के अनुकूल, निर्माण मानो नियमावली बनायी जाती है। इसके पश्चात् ये राष्ट्र की पद्धतियाँ होती है।

आज मैं बेटा! देखो, राष्ट्र की पद्धतियों में विशेष जाना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय में क्या? आज का हमारा वाक्य ये क्या कह रहा है कि हम संसार को ऊँचा कैसे बना सकते है? हम संसार को मानो अपनी वाणी के द्वारा ऊँचा बना सकते है। यागों के द्वारा ऊँचा बना सकते है। हम सुगन्धि से ऊँचा बना सकते है। हम दुर्गन्धि से संसार को विजय नहीं कर सकते। हम मानो चरित्र से संसार को विजय कर सकते है। परन्तु देखो, हम एक रक्त भरी क्रांति से संसार को विजय नहीं कर सकते है। मेरे प्यारे! देखो, मानव को एक सुचरित्रता से ऊँचा बनाना ये हमारा कर्त्तव्य है। ये है बेटा! आज का, वाक्, आज का वाक् समाप्त, अब हमारी शेष चर्चाएँ कल होगी। कल मेरे प्यारे महानन्द कुछ दो शब्दों की विवेचना करेंगे आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन होगा।ओ३म् देवाः यं शं नः रथं मां आपो रथं गा याः मां ऋषि वन्धनःवाचन्मत्प्राची आभ्यां देवं रथाः ओ३म् यंचमा रथंयां गत्प्राहा वसुः मां गाताः। ओ३म् ममत्वा हिरण्यः गा याः अस्मा रथम् आभ्यां देवा य नः गायन्त्वा ब्रह्मा ओ३म् सर्वे सुभद्रा मां ऋषि ऋषिवरं ब्रह्मः 19-10-76 कृष्णा नगर, दिल्ली

२ त्याग, तपस्या का जीवन—20 10 1976

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मंत्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद वाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गया जाता है। जो मानो सर्वत्रः उस ब्रह्माण्ड का जो रचयिता है। उस ब्रह्म मानो देखो, उस ब्रह्मवृतदेवाः जो ज्ञान स्वरूप है, अथवा जो चेतना में रत रहने वाला है। आज हम उस परमपिता परमात्मा की उपासना अथवा उसकी महिमा का वर्णन करने के लिए आये है। मानो उसकी प्रतिभा कितनी विचित्र है और वह प्रतिभाशाली है। क्योंकि उसी की प्रतिभा में ये सर्वत्र ब्रह्माण्ड अथवा ये लोक-लोकान्तर अपने-अपने आसन पर नृत्य कर रहे है।

ब्रह्म चिन्तन

तो आओ, मेरे पुत्रो! आज हम तुम्हें उस आसन पर ले जाना चाहते है जहाँ ऋषि मुनि विराजमान हो करके, वेद मंत्रों के ऊपर अध्ययन करते रहते थे। जहाँ ऋषि-कन्याएँ अपने-अपने आसन पर विराजमान हो करके ब्रह्म की ऊँची उड़ान उड़ती रहती थी। बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है। जिस काल में महर्षि सोमभामव्रेतकेतु ऋषि की कन्या, ब्रह्म का चिन्तन करती रहती थी और वेद मंत्र के ऊपर अध्ययन होता रहता था। जब वे ऊँचे सुरों से गान गाती थी तो मेरे पुत्रो! सर्पराज चरणों में ओत-प्रोत हो जाते थे। सिंह राज आते थे तो चरणों में ओत-प्रोत हो जाते थे। मेरे प्यारे! वह मानवीयतव, वह जो वेद का ज्ञान है, प्रकाश है। जो मानव उस प्रकाश में रत रहने लगता है। जो उस प्रकाश में रमण करने लगता है मेरे प्यारे! उस मानव के जीवन में अंधकार नहीं आता। वह अंधकार से रहित हो जाता है।

अन्धकार

अंधकार किसे कहते है? अंधकार नाम अज्ञान का है। मानो देखो, ज्ञान नाम प्रकाश का माना गया है, तो हमें प्रकाश के मार्ग को प्राप्त करना है। मेरे पुत्रो! वेद की पोथी का चिंतन करने वाला इस संसार में उदासीन नहीं होता। वह सदैव प्रकाश में ही रमण करता रहता है।

प्रकृति मण्डल पर चिन्तन

आज मुनिवरो! मैं विशेष चर्चा तुम्हारे समीप उच्चारण करने नहीं आया हूँ। केवल ये वाक्य उच्चारण करने के लिए आया हूँ, कि प्रत्येक मानव बेटा! इस संसार में ऊँची-ऊँची उड़ान उड़ने के लिए आया है। एकान्त स्थली पर विराजमान है और ऊँची रचना, ऊँची उड़ान उड़ी जा रही है। बेटा! कहीं तारामण्डलों की उड़ान है, तो कहीं मानो सूर्य मण्डलों की उड़ान है। कहीं आकाश गंगाओं की उड़ान है तो कहीं बेटा! देखो, उस परमपिता परमात्मा का प्रकृति का मण्डल है अथवा उस मण्डल के ऊपर चिंतन करने लगता है। परन्तु जब हम यह विचारने लगते हैं कि ये प्रभु कैसा नियंता है? तो बेटा! मानव अपनी अन्तरात्मा को दृष्टिपात् करता है। बाह्य जगत् को समेट लेता है और बाह्य जगत को समेट करके अन्तरात्मा में बेटा! वो दृष्टिपात् करने लगता है और अपने आन्तरिक जगत में ले जाता है। बाह्य जगत् को आन्तरिक जगत् में ले जाता है। उससे अपना समन्वय करते है मानो अध्ययन करने लगता है। उसकी अध्ययन की जो पवित्र शैली है वह विचित्रवत् और महान बनने लगती है। मेरे प्यारे! अन्तरात्मा में वह संसार को दृष्टिपात् करने लगता है, मण्डलों के द्वारा।

एक आकाश गंगा में अनन्त सूर्य

आओ, मेरे पुत्रों! मैं बाह्य और आन्तरिक जगत् की ही चर्चा करने नहीं आया, विचार विनिमय केवल यह देने के लिए आया हूँ कि हमारे यहाँ नाना प्रकार की उड़ाने उड़ी जाती हैं। बेटा! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज की यज्ञशाला में अथवा उनके विद्यालय में ब्रह्मचारी कवन्धी विद्यमान है और कवन्धी ऋषि से यह कह रहे हैं, कि भगवन्! ये वेद का मंत्र यह कहता है सूर्यश्चमं लोकं ब्रहे वृताः देवं माताहं बृही बृहाः तनिध्वा देवाः हे प्रभु! ये वेद का मंत्र ये कहता है कि एक आकाश गंगा में अनन्त सूर्य कहलाते है क्या प्रभु! इस वेद मंत्र में यह यथार्थ है।

महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि कहते है कि मेरी विज्ञानशाला में नाना प्रकार के यंत्र है। तो बेटा! देखो, ऋषि, ब्रह्मचारी कवन्धी को यह निर्णय करा रहा है, यह उच्चारण करा रहा है कि व्रब्रहेभेः व्रतं यंत्राः कि मेरे यहाँ जो यंत्र है उनमें तुम दृष्टिपात् करो। मैंने कई काल में दृष्टिपात् किये है। तो मुनिवरो! देखो, कवन्धी कहता है कि महाराजा! आप निर्णय कराइये। तो मुनिवरो वह उन यंत्रों के द्वारा नाना आकाश गंगाओं को दृष्टिपात् करने लगे। मेरे पुत्रो! ऋषि कहता है कि हे ब्रह्मचारियों। मैं जब एक आकाशगंगा के सूर्य की गणना करने लगा, तो मैंने तीन खरब से भी मानो आ....हा....अधिक गणना में जब मैंने गणित कर लिए तो अंत में मैं मौन हो गया। एक आकाश गंगा में जब खरबों के मानो तीन खरब सूर्यों की गणना कर ली तो मानो ये अनंत है। मैं मौन हो गया। मानो प्रभु का इतना विशाल मण्डल जो सूर्य है। ग्रह, उपग्रह है। नाना निहारिकाएँ है।

ऋत, सत् से युक्त प्रकाश

बेटा! प्रकाश चल रहा है एक दूसरे मण्डल में से, कोई प्रकाश हो करके आ रहा है। ऋत् और सत् से गुथा हुआ प्रकाश पृथ्वी मण्डल पर आ रहा है। पृथ्वी मण्डल पर नाना प्रकार की वनस्पतियाँ तप रही है। माता के गर्भस्थल में पुत्र का निर्माण हो रहा है। नक्षत्रों की सहायता प्राप्त हो रही है। ऋत् और सत् की महत्ती प्राप्त हो रही है। परन्तु वह कितना विशाल मण्डल है मेरे देव का। मेरे पुत्रो! वह जो मानो, नाना प्रकार के मण्डलों का प्रकाश है जो एक दूसरे मण्डल से कोई प्रकाशित होता हुआ छेदन्य करके आ रहा है। परन्तु वह प्रकाश इस पृथ्वी मण्डल पर आता है। मानो बहुत-सी निहारिकाएँ तो इस प्रकार की है जिनका प्रकाश मेरे प्यारे! लाखों वर्षों में इस पृथ्वी मण्डल पर आता है। मुनिवरो! देखो, इस प्रकार का जो प्रकाश है, मण्डलवाद है। ये प्रभु का जगत् बेटा! कितना अनंत है? उस प्रभु की प्रतिभा को हम कैसे माप सकते हैं? और कोई भी संसार का प्राणी अब तक माप नहीं सका और जिसने ब्रह्माण्ड को मापने का प्रयत्न किया है बेटा! वह मेधावी हो गया वह ऋतम्बरावी क्षेत्रों में प्राप्त हो करके बेटा! मौन हो गया और ये कहा कि बेटा! प्रभु तो अनन्त है। ये तो अनन्त मण्डल है, अनन्त प्रतिभा है उस देव की हम किसी काल में भी नहीं जान सकते।

मेरे पुत्रो! देखो, यह चर्चाएँ होती रहती थी अयोध्या में। यही चर्चाएं होती रहती थी बेटा! ऋषि मुनियों के स्थलों पर। परन्तु आज मैं बेटा! पुनः तुम्हें उन क्षेत्रों में ले जाना चाहता हूँ मैं उस मानो देखो, उस आभा में ले जाना चाहता हूँ जहाँ पुत्रो! देखो, महापुरुष आ करके, नाना प्रकार का विचार विनिमय में होता रहा है। ऊँची से ऊँची विचार धारा मेरे प्यारे! मानवीय मस्तिकों में ओत-प्रोत रहती है। उन विचार धाराओं को लेकर के आज मैं पुनः तुम्हें बेटा! त्रेता के काल में ले जाना चाहता हूँ। उसी त्रेता के काल में ले जाना चाहता हूँ जहाँ बेटा! राम संसार को विजय करके, बेटा! अपनी अयोध्या में आ पधारे थे। मानो रावण को परास्त करके विभीषण को राष्ट्र देकर के कितना राष्ट्र में बेटा! त्याग होना चाहिए। त्याग और तपस्या का जीवन बेटा! कैसा अनुपम होता है?

मेरे पुत्रो! देखो, उस ब्रह्मे वृत्ताः जब लंका को विजय करने के पश्चात् लंका में अपनी संस्कृति और चरित्र की स्थापना करने के पश्चात् जब वे अयोध्या में आ गये।

गायत्री का उपवास

परन्तु याग भी पूर्ण हो गया। याग के पूर्ण हो जाने के पश्चात् मुनिवरो! देखो, सरयू नदी के तट पर चले गये और तट पर एक सुन्दर आसन पर मानो गायत्री का उपवास करने लगे। उन्होंने भरत जी से ये कहा कि हे, भरत! अब मैं उपवास करूँगा क्योंकि मैंने इस संसार का भ्रमण किया है। मानो देखो, मैं तपस्वी रहा हूँ। मेरा तप में ही जीवन रहने दीजिए भरत! अब मैं तपस्या करूँगा, मैं गायत्राणी छन्दों का उपवास करना चाहता हूँ। मुझे वो काल स्मरण आता रहता हूँ। राम ने कहा था-हे भरत! मानो देखो, पूज्य महर्षि विश्वामित्र गायत्राणी छन्दों का पठन-पाठन करते थे जब उन्होंने किसी काल में हमारे द्वारा धनुर्याग को पूर्ण कराया था तो धनुर्याग को पूर्ण कराते थे तो हम ये दृष्टिपात् करते थे कि वे उनको रात दिवस निंद्रा भी नहीं आती थी परन्तु वे गायत्राणी छन्दों में लगे रहते थे। गायत्राणी मानो गान गाते रहते थे। एक समय हमें यह कहा गया, जब हम याग को पूर्ण कराने लगे कि हे ब्रह्मचारियों तुम विश्राम गृह में विश्राम करो।

अहिंसा परमोधर्मः

मानो जब विश्राम करने लगे मध्यरात्रि का काल था, मध्यरात्रि में जब मैं जागरूक हुआ तो मैंने लक्ष्मण को कहा-आओ, दृष्टिपात् करे। मध्यरात्रि में वे गायत्री का गान गा रहे हैं। मानो सम्पुट गान हो रहा है और छन्दों के सहित हो रहा है। तो उस समय जब गान गा रहे थे तो मृगराज मानो देखो, सिंहराज कहीं से भयंकर वन से आ गया और आ करके ऋषि के चरणों को छू रहा था। ऋषि उससे स्नेह कर रहे थे और यह उच्चारण कर रहे थे कि हे सिंहराज! तू प्रभु की आभा में आया है। यह संसार प्रभु का जगत् है। तू इस जगत में आया है। मानो जो तेरा शरीर है यह बलिष्ठ है। मानो जो तुम्हारा मानवीय स्वभाव है वह हिंसक है। अब तुम देखो, अहिंसा परमोधर्मः में चले जाओ। तो मानों देखो, अपनी आभा में रमण करते चले जाओ। तो मृगराज से, मानो सिंहराज से वह स्नेह कर रहे थे। उनके मुखारविन्दु को चुम्बन कर रहे थे ऋषि और ऋषि कह रहे थे हे सिंहराज! तुम भयंकर वन के अधिराज हो। मानो तुम हिंसक हो अब तुम हिंसा को त्यागने का प्रयास करो। क्योंकि प्रभु का जो राष्ट्र है प्रभु ने जो जगत् रचाया है वह हिंसा से रहित है और उसके राष्ट्र में जो प्राणी है। वह हिंसा से रहित होने चाहिए।

महानता की तरंगें

मेरे पुत्रो! वह ऋषियों का जो उद्गार हैं वह जो ऋषियों की महानता है। वह इस मानो वायुमण्डल की तरंगों में ओतप्रोत है। मानो देखो, प्रकृति की आभा में ओत-प्रोत हो रहे। वही शब्द जब मानव के अन्तःकरण को छूते हैं तो अन्तःकरण को सात्विक बना देते है।

मुनिवरो! देखो, राम वह दृष्टिपात् करते रहे। प्रातःकाल हुआ प्रातःकाल होते ही राम कहते हैं भरत से, हे भरत! मैं ऋषि के चरणों को जब छूने के लिए पहुँचा तो मृगराज वहाँ से प्रस्थान कर गये थे तो मैंने कहा-पूज्यपाद! मानो आप तो सिंहराज से चुम्बन कर रहे थे। प्रीति कर रहे थे। उन्होंने कहा-हे राम! मेरे हृदय की आकांक्षा बन गई थी कि मेरा समय करने के लिए उत्सुकता, जागरुक हो गई, मध्यरात्रि में मैंने सिंहराज का आह्वान किया। ये गान को प्राप्त करके मेरे आसन पर आ गया था। मानो उसको मैंने स्नेह किया, क्योंकि वह स्नेह का पात्र है। संसार का एक-एक प्राणी स्नेह का पात्र है। प्रत्येक प्राणी से स्नेह करना चाहिए क्योंकि स्नेह ही तो जीवन है। यदि मानव में स्नेह की मात्रा नहीं है। प्रीति की मात्रा नहीं है तो वह मानव नहीं रहता वह हिंसक कहलाता है। आओ, मेरे पुत्रो! संसार की यह मनो की भावना, मनों की तरंगे चलती रहती है। उन्हीं तरंगों से मानव का नव जीवन का निर्माण होता है।

तो मेरे प्यारे! देखो, भरत से राम सरयू के तट पर ये वाक्य प्रकट कर रहे थे और ये उच्चारण कर रहे थे हे भरत! मानो देखो, ऋषि मुनियों की यहाँ हमें सेवा करनी चाहिए। क्योंकि ऋषि मुनियों से मानव का जीवन ऊँचा

बनता है। जो विचारक पुरुष होते है, वेद के मर्म को जानने वाले होते है। हे भरत! राष्ट्र में एक ऐसी परम्परा, विशेष होनी चाहिए, जिससे ब्राह्मणों और वेदियों का मानो देखो एक स्थल भिन्न होना चाहिए। क्योंकि राष्ट्र का जो निर्माण है, राष्ट्र को जो प्रेरणा प्राप्त होती है। वह वेदी पुरुषों से, ऋषि मुनियों से प्राप्त होती है।

मेरे प्यारे! देखो, सरयू के तट पर ये मानो उपवास के लिए और गायत्राणी छंदों की गोद में जाने के लिए तपश्चर में, रमण करने लगे।

मकरध्वज का आगमन

कहा जाता हैं बेटा! वह काल जब स्मरण आने लगता है तो मुनिवरो! देखो, जब ये श्रवण किया संसार के प्रत्येक राष्ट्र ने कि राम तपस्वी बन गये हैं। राम तपस्या करने के लिए तट पर पहुँच गये सरयू के, तो मानो देखो, उन सर्वत्र राजाओं ने हनुमान के पुत्र मकरध्वज ने भी ये वाक्य स्वीकार किया मानो देखो, सोमकेतु राष्ट्र के अधिराज ने भी उसको स्वीकार किया मुनिवरो! देखो, सर्वत्र राष्ट्र अब अयोध्या में पधारने लगे। मुनिवरो! देखो, वह कौन मकरध्वज हनुमान का पुत्र, मेरे प्यारे! अपनी पातालपूरी से कुछ वाहनो में सेना, कुछ अधिपति लेकर के राष्ट्रों की आभाओं को लेकर के बेटा! वे अयोध्या के लिए प्रस्थान करते है। जब अयोध्या के लिए वे गमन करने लगे तो मुनिवरो! पाताल पुरी से अपने वाहनों में विराजमान हो करके मानो देखो, वह अयोध्या में आने के लिए लालाहित उनका विमान मानो देखो, अंतरिक्ष में गति कर रहा था। अब राम ने जब यह स्वीकार किया कि मकरध्वज का पदार्पण हो रहा है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा-भरत! देखो यहाँ मकरध्वज का आगमन होने वाला है। हनुमान को कहो-कि तुम्हारे पुत्र का आगमन हो रहा है।

तो मेरे प्यारे! देखो, मकरध्वज का आगमन हुआ। अयोध्या में जब आगमन हुआ तो वे सरयू पर पहुँचे। परन्तु देखो, राष्ट्र से उनका कोई सम्बन्ध नहीं था। विचार क्या मुनिवरो! देखो, पातालपुरी के अधिराज। राजा नारान्तक था मानो देखो, उनके पुत्र थे अहिरावण। अहिरावण देखो, पाताल पुरी का अधिराज था। और जब राम वहाँ पहुँचे थे, मानो हनुमान इत्यादियों ने उसे नष्ट करके मकरध्वज को वहाँ का अधिराज बनाया था। उसका राज्याभिषेक किया था। वही मकरध्वज मुनिवरो! देखो, अयोध्या में राम से मिलन करने के लिए, उनके चरणों की वन्दना करने के लिए मेरे प्यारे! देखो, उसी आश्रम में पहुँचे, जहाँ वे एक आसन पर विराजमान थे। राष्ट्र की कोई विशेष सुविधाएँ नहीं थी। क्योंकि वे चाहते नहीं थे, कि मुझे कोई राष्ट्र की सुविधा प्राप्त है।

त्याग, तप की प्रेरणा

मेरे प्यारे! जब मकरध्वज वहाँ पहुँचे, उनके चरणों को छूकर के बोले प्रभु! आप अपने जीवन को तपस्वी क्यों व्यतीत करना चाहते हैं? उन्होंने कहा-कि हे मकरध्वज तुम्हें प्रतीत है कि मानव का जीवन तो तपस्या में होना ही चाहिए। हमारे रघुवंश की जो परम्परा है वह तो त्याग और तपस्या के लिए हमें प्रेरणा देती है। मानो जब वैदिक साहित्य को हम विचारते है तो वह हमें प्रेरणा त्याग और तप के लिए देती है। मानो जब हम अपने पुरखों अथवा अपने महापिताओं की चर्चाएँ और उनके साहित्य को लेते तो वह त्याग और तपस्या के लिए हमें प्रेरित कर रहे है। तो आज हमें क्यों नहीं तपस्वी बनना चाहिए।

मेरे पुत्रो! देखा, मकर ध्वज कहता है कि महारा! तुमने अपने पिता दशरथ के जीवन का अध्ययन नहीं किया? तो मुनिवरो! देखो, राम बोले-कि देखो, पिता के जीवन का अध्ययन मैंने किया, परन्तु पिता के जीवन का अध्ययन करना, पुत्र का कर्त्तव्य नहीं है। पुत्र को तो अपने जीवन का अध्ययन करना चाहिए कि मुझे अपने जीवन को कैसा बनाना है। पिता के जीवन को मैं अध्ययन क्यों करूँ? मैं महाराजा दिलीप महाबाबा के, महापिता के जीवन का अध्ययन क्यों नहीं करूँ मैं महाराजा दिलीप के जीवन का अध्ययन क्यों न करूँ। मैं महाराजा, जो

हमारे महापुरख थे मानो सगर के जीवन का अध्ययन क्यों नहीं करना चाहिए? आज तुम मुझे दशरथ के जीवन का अध्ययन करने के लिए प्रेरणा देते हो। मैं उनके जीवन का अध्ययन करना नहीं चाहता। मानो देखो, अध्ययन करना है तो उनके जीवन का करना चाहिए जो तपस्वी कहलाते है।

हनुमान का जीवन

मेरे प्यारे! राम जब यह उच्चारण करने लगे तो मकरध्वज मानो शांत हो गये राम बोले-हे मकरध्वज! तुम अपने पिता के जीवन को देखो, मैं तुम्हारे पिता के जीवन का अध्ययन क्यों नहीं करूँ? जो जीवन भर ब्रह्मचारी रहे पुत्र को उत्पन्न करने के पश्चात् सुग्रीव की कन्या समाप्त हो गई थी। परन्तु देखो, वह पर्जन्य ब्रह्मचारी रहे। आज हम देखो, हनुमान के जीवन का अध्ययन क्यों न करें। जिनके द्वारा मानो देखो, सर्व शक्तियाँ विद्यमान है। वे समुद्र को लाँघ जाते है, अपने जीवन को विस्तार में ले जाते है अपने जीवन को सूक्ष्म बना लेते है। मानो वे जल पर मानो जैसे पृथ्वी पर मानव गति पर करता है? ऐसे ही करते है। उनके जीवन का अध्ययन करने से कुछ प्राप्त होगा। आज मानो देखो, उनके जीवन का अध्ययन नहीं करना चाहिए जिनके जीवन के कारण मानो राष्ट्र अधोगति को चला जाता है। उनके जीवन का अध्ययन करने से कोई लाभ नहीं होगा। उनके जीवन का अध्ययन करने से मानव में मानवीयता का ह्रस हो जाएगा इसीलिए मैं यह कहता हूँ कि तुम्हारा जो पितर है आज तुम्हें भी अपने पितर की आज्ञा और देखो, त्याग व तपस्या का पालन करना चाहिए। मानो उनके जीवन का अध्ययन करना चाहिए।

तपस्वी राजा

मुनिवरो! देखो, मकरध्वज चरणों में ओतप्रोत होकर के बोले-प्रभु! मैं तो आप से याचना करने के लिए आया हूँ कि आप अयोध्या के मानो सर्वोपरी राज्य, राष्ट्र को अपनाए और राज का पालन करे और हम जैसे मानो आपसे प्रेरणा ले करके राष्ट्रों का पालन करें। संस्कृति का प्रसार करें। चरित्र, मानवता का ह्रस न होने देंगे। मानो देखो, उसका उत्थान होता रहेगा। मेरे पुत्रो! देखो, राम ने कहा-तुम्हारा विचार तो बहुत प्रिय है। परन्तु मैं यह चाहता हूँ मकरध्वज! कि इस अयोध्या के राष्ट्र का अधिकार मुझे अभी नहीं है। मैं जब अधिकारी बन जाऊँगा, मैं त्याग और तपस्या में लय हो जाऊँगा तो मैं राष्ट्र का पालन कर सकता हूँ। क्योंकि राजा वही होता है जो त्याग और तपस्या का जीवन व्यतीत करके राष्ट्र का पालन करता है। मानो देखो, वह राजा नहीं होता मानो जिस राजा में तप न हो आहार शुद्ध न हो व्यवहार शुद्ध न हो ऐसा राजा राष्ट्र को कदापि उन्नत् नहीं बना सकता।

मेरे प्यारे! ये राम ने कहा था, ऐसा सुन्दर वाक्य। उन्होंने कहा कि मैं अधिकारी नहीं हूँ क्योंकि भरत मेरे विधाता, वे मेरी पादुका से कर्त्तव्य समझ अपना कर्तव्य का पालन कर रहा है और जब तक भरत अपने विधाता की आज्ञा का पालन कर रहा है। यदि आज्ञा का पालन करना भरत त्याग देगा, उसी समय राष्ट्र की, समाज की मानो विकृति हो जाएगी क्रान्तिमय में राष्ट्र का जीवन बन जाएगा। क्योंकि राष्ट्र में जो मानसिक क्रांति आती है वह मानसिक क्रांति इसलिए आती है क्योंकि राष्ट्र का जो नायक होता है वह उस प्रजा के ऊपर अनुशासन करने का उसे अधिकार नहीं होता क्योंकि अधिकार जब नहीं होता तो देखो, प्रजा में मानसिक क्रांति आती है मानसिक विचारधारा में विकृता आ जाती है।

गायत्री की गोद

इसलिए हे मकरध्वज! आज तुम्हारा यह शब्द मुझे बहुत प्रिय लगा है कि मुझे पालन करना चाहिए। राष्ट्र की, प्रजा को अनुशासन में लाना चाहिए। परन्तु मैं लगभग देखो, गायत्री की गोद में जाना तो सीखूं। क्योंकि गायत्री की गोद में जाने वाला प्राणी मानो देखो, इस समाज को ऊंचा बना सकता है। मेरे जो महाबाबा, महापिता

थे महाराज अज थे मानो देखो, अज जब गायत्री की गोद में जाते थे तो उनका हृदय प्रसन्न होता था। महाराजा दिलीप जी मानो अवृतम् दिलीप जी क्या देखो, रघु जी भी जब गायत्री की गोद में जाते थे वह अपने गुरुओं के चरणों में ओत-प्रोत होते थे। उसी समय 'ब्रह्मे व्रताः।'

महाराजा सगर

तुम्हें यह प्रतीत है कि हमारे जो महाबाबा थे महाराजा सगर राजा के एक पुत्र था सुखमंजस। जो देखो, महारानी शन्नो के गर्भ से उत्पन्न हुआ था तुम्हें प्रतीत होगा उस साहित्य को दृष्टिपात् करो। मानो देखो, उस समय साठ हजार सेना थी उनके राष्ट्र में प्रजा थी और वे उनको हृदय से, प्रिय हृदय से उनको हृदय ही जानते थे उनको ये कहा जाता है कि साठ हजार उनके पुत्र थे। क्यों कहा जाता है? क्योंकि साठ हजार उनके राष्ट्र में सेना थी और देखो, उनके राष्ट्र के कर्मचारी थे। वे उनको अपना हृदय स्वीकार करते थे और जब उन्हें राष्ट्र का अभिमान हो गया तो महाराजा तपोमुनि के पास जाकर के उन्होंने संग्राम करके मानो देखो, वह विनाश को प्राप्त हो गये थे। जब उनका विनाश हो गया तो हमारे एक ही महापिता रह गये कौन? सुखमंजस।

महाराजा सुखमंजस

सुखमंजस महाराजा कपि जी के द्वार पर पहुंचे और कपि जी के चरणों में ओतप्रोत होकर के ये कहा-प्रभु! ये क्या हो गया? उन्होंने कहा-क्या करूं? कपि जी कहते हैं सुखमंजस! मुझे ये प्रतीत होता कि ये महाराजा संगर के राष्ट्राबृहि है तो मैं इनके विनाश को, इनसे संग्राम नहीं कर सकता था। मैं अपने यंत्रों का मानो देखो, महाराजा इन्द्र से जो कुछ शस्त्र मुझे प्राप्त हुए थे और देखो, मेरे पूज्यपाद गुरु प्रजा के ऊपर अनुशासन रेणाव्रतकेतु ऋषि महाराजा थे उनसे मैंने कुछ प्राप्त किया था। मैंने उन अस्त्रों का प्रहार कर दिया और ये विनाश को प्राप्त हो गये। क्योंकि उन्होंने मुझको अपने पदों से दूरी करने लगे और मुझे जब अपमानित किया तो मुझे क्रोध की मात्रा आ गई, मैंने यंत्रों का प्रहार कर दिया जिससे वे नष्ट हो गये। उस समय हे सुखमंजस! मुझे यह प्रतीत नही था कि ये आपके विधाता है। उन्होंने कहा-प्रभु! जिसका अभिमान जागरुक हो जाता है उसमें मैं कुछ नहीं कर सकता। परन्तु प्रिय है।

मेरे प्यारे! देखो, सुखमंजस अपने राष्ट्र में आ गये और महाराजा सगर से ये कहा कि महाराज! वे तो मृत्यु को प्राप्त हो गये। महाराजा सगर उसी काल में देखो, देवऋषि नारद की शरण में चले गये। राष्ट्र को त्याग दिया, भयंकर वन में चले गए और वन में जाकर के वेदों का अध्ययन करने लगे और ऊंचे-ऊंचे यागों की रचना रचने लगे। याग होने लगे और देखो, उसी समय देव ऋषि नारद मुनि की उनके तपश्चर आश्रम में मेरे पुत्रो! देखो, महा तपस्वी बन करके और वे महाप्रेय बटकेश्वर ऋषि नाम से देखो, उनका नामोकरण किया गया। वही बटकेश्वर ऋषि महाराज थे जो देवऋषि नारद मुनि के प्रिय शिष्य कहलाते थे। जिन्होंने देवऋषि नारद मुनि के आश्रम में, यज्ञशाला में विद्यमान हो करके नाना प्रकार के यागों की लेखनिया लेखनीबद्ध की थी। मानो हे ब्रह्मे कृते! हे मकरध्वज! मुझे जब उन महापिताओं के जीवन, की वार्ता स्मरण आती है तो मेरा हृदय गद्गद् हो जाता है। मैं ये कहा करता हूँ कि मानव को देखो, अति मानव बनने की प्रेरणा उसके हृदय में होनी चाहिए। वह गायत्री की गोद में जाने वाला बने, तपश्चर बनना चाहिए। मुझे तपस्वी बनना है और मैं प्रभु की गोद में जाना चाहता हूँ गायत्री मां की गोद में जाना चाहता हूँ जो संसार की जननी है। संसार को जन्म देती है।

मुनिवरो! देखो, जब राम ने इस प्रकार का मकरध्वज को महापिताओं की वार्ता प्रकट कराई तो वे स्वतः लज्जित हो गये। उन्होंने कहा कि हे प्रभु! आप मुझे और विशेष चर्चा न प्रकट कीजिए। उन्होंने कहा हे राम! तुम्हें रामं बृहि उन्होंने कहा-हे राम! मैं तो इसी में ही लज्जित हो गया हूँ। मानो मुझे भी ऐसी प्रेरणा दें, मैं भी तपस्वी

बनूंगा। भगवान् राम कहते हैं-कि हमने महान् देखो, ऋषि माता अरून्धती के चरणों में ओत-प्रोत हो करके ब्रह्मविद्या को पान किया। मानो वशिष्ठ के चरणों में ओत-प्रोत हो करके ज्ञान और विज्ञान की उड़ान उड़ने का प्रयास किया। भारद्वाज मुनि महाराज के आश्रम में अहिल्या कृतिमा यानों का आविष्कार किया। मानो देखो, ज्ञान-विज्ञान में रमण करना ये तो मानव का स्वाभाविक गुण है। स्वाभाविकतव ऐसा होना चाहिए। मेरे पुत्रो! देखो, ये वाक्य जब मकरध्वज इत्यादियों ने श्रवण किया तो बेटा! देखो, वे राम को नत् मस्तिक हो करके बोले-प्रभु! अब मुझे आज्ञा दीजिए। मैं पातालपुरी को जा रहा हूँ। मानो देखो, मेरे सुयोग्य कोई कार्य हो, देव के लिए मानो कोई सूक्ष्म द्रव्य अयोध्या में हो तो मानो देखो, इसके लिए मुझे आज्ञा दीजिए। मैं कुछ प्रयास करूंगा। अपने यंत्रों के द्वारा यहाँ देखो, द्रव्य को अप्रतम् करने के लिए।

राम ने कहा-हे मकरध्वज! यह वाक्य तुम फिर अशुद्ध उच्चारण कर रहे हो कि द्रव्य की हमें कोई आवश्यकता है। द्रव्य तो समाज का आभूषण है। द्रव्य तो मानो देखो, राष्ट्र का आभूषण है राष्ट्र की वह सम्पदा होती है और प्रत्येक प्राणी का उस पर अधिकार होता है। इसीलिए प्रत्येक मानव को यदि वह राजा ऊंचा होता है। तो हे मकरध्वज! जो अपनी भुजाओं से अपने आहार, अपने आहार की सामग्री को स्वतः एकत्रित करता है। क्योंकि हम माता वसुन्धरा की गोद में आये हैं, ये पृथ्वी माता वसुन्धरा है। नाना प्रकार के खाद्य और खनिजों को देने वाली है। मेरे पुत्रो! देखो, ये राम का कार्य था! वे प्रातःकालीन अपनी सूक्ष्म-सी भूमि में कुछ अन्न के लिए मानो कुछ खाद्य पदार्थों के लिए वे गायत्री छन्दों का पठन-पाठन करते रहते थे। कुछ माता वसुन्धरा की गोद में प्रवेश होकर के मानो देखो, कुछ अन्न का उपार्जन करने के लिए प्रयास करते रहते थे।

मुझे स्मरण है अयोध्या को विजय प्राप्त करने के पश्चात् लगभग उन्होंने बारह वर्ष तक स्वयं वसुन्धरा के गर्भ से अन्न को उत्पन्न करके मुनिवरो! देखो, स्वतः पान करते थे। आज जब मुझे वह त्रेता का काल स्मरण आता है तो हृदय गद्गद् हो जाता है। मैं ये कहा करता हूँ कि धन्य है, उन महापुरुषों को, जिन्होंने आज देखो, अपने जीवन से संसार को प्रेरणा दी है। संसार को जीवन दिया है। मुनिवरो! देखो, नाना ऋषि आते थे उनके चरणों में ओत-प्रोत किया। मानो देखो, उनसे प्रेरणा लेकर के जाते थे नित्यप्रति वेद का अध्ययन होना, याग होना, सुगन्ध होना मेरे प्यारे! देखो उनका जीवन कैसा था कि रात्रि समय वे गायत्री की गोद में जाते, दिवस समय कृषि कार्य कर, अन्न का उपार्जन करते थे। उस अन्न को पाते थे क्योंकि उन्होंने महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के जीवन की आभा को प्राप्त किया था। महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बारह वर्ष तक मानो देखो, सिलक अन्न को एकत्रित करके, उस अन्न को पान करके लेखनी बद्ध करते थे। इसी प्रकार राम भी अपनी लेखनी बद्ध करते रहते थे।

भगवान राम का निर्वाचन

बारह वर्ष तक देखो, तप करने के पश्चात् उन्होंने मुनिवरो! देखो, अयोध्या में नाना राजाओं को एकत्रित किया। देखो, उसमें महाराजा विभीषण भी आए और सुग्रीव भी आए पातालपुरी के राजा इत्यादियों की भी एक सभा एकत्रित हुई और उस सभा में मुनिवरो! देखो, उन्होंने अव्रतम् आसन दिया गया उस सभा का, सभापति महर्षि वशिष्ठं ब्रह्मेः मानो देखो, महर्षि वशिष्ठ को दिया गया। महाराजा शिव पर्वतों की कुन्दराओं में से आ गये। शिवपुरी के अधिराज इन्द्र भी आ गये। मेरे प्यारे! देखो, नाना ऋषियों के मध्य में अब उनका देखो, राज्याभिषेक होने का समय आता है। मेरे प्यारे! राम कहते हैं कि ये जो समय है यह महाराजा शिव की और मानो देखो वशिष्ठ दोनों की अध्यक्षता में हो रही है। मुनिवरो! देखो, वह काल था जब एक राष्ट्र का अभिषेक होने वाला था जब मानो देखो, वशिष्ठ महाराज ने लग्न को अभ्रात मानो देखो, तारामण्डलों की आभा से उनके ग्रह, नक्षत्रों से

मानो देखो, आकाश गंगा की गति को जान करके उन्होंने एक मुहूर्त अप्रहः कि किस दिवस राम का राजतिलक होना चाहिए। परन्तु उस काल में तो वन प्राप्त हो गया था। वह वन चला गया था माता-पिता की आज्ञा पालन करने के लिए। परन्तु आज वह दिवस है कि मैं तपश्चर हो गया हूँ मुझे इस राष्ट्र की आवश्यकता नहीं रही है। परन्तु इसलिए मेरे जो विधाता है उनकी प्रेरणा वह नित्यप्रति व्याकुल होते हैं। समाज यह चाहता है कि राष्ट्र का मानो देखो, राष्ट्र का निर्वाचन होना चाहिए। अब मैं राष्ट्र के लिए उपस्थित हूँ। मानो देखो, अध्यक्षता में कौन? महाराजा शिव हैं जो हिमालय की मालाओं में से आ रहे है। मानो देखो, कौन? मानो देखो, महर्षि वशिष्ठ महाराज जो हमारे पुरोहित हैं। ब्रह्मवेत्ताओं के समाज में, ब्रह्मवेत्ता हैं। अयोध्या के देखो, पुरोहित है। मानो जैसी मुझे आज्ञा देंगे, मैं उस कार्य को करने के लिए तत्पर हूँ।

विष्णु राष्ट्र

मेरे पुत्रो! देखो, राजाओं ने उन्हें कुछ उपहार दिया और उपहार देकर के ऋषि मुनियों का कुछ उपदेश हुआ। याग हुआ और ऋषि मुनियों का उपदेश होकर के बेटा! देखो, उन्होंने पादुका के स्थल पर राम को निर्वाचित किया और निर्वाचित करके यह कहा कि राम! अब तुम इस राष्ट्र में विष्णु राष्ट्र की स्थापना करो। मानो देखो, जितने राजा है वे सब आपके सहयोगी है। जो आप अयोध्या का निर्माण करोंगे किसी भी नियम का, उसको सभी राजा स्वीकार करते है अपनाने के लिए तैयार हैं। सर्वत्र राजाओं ने मेरे प्यारे! देखो, हर्ष ध्वनियाँ की और हर्ष ध्वनि करके यह कहा कि-धन्य है मैं मानो इसको अपना रहा हूँ। मेरे प्यारे! वे देखो, राष्ट्र के नायक बने और उस समय राष्ट्र का अभिषेक हुआ। जब राष्ट्र का अभिषेक हुआ तो भरत ने चरणों को स्पर्श किया और चरणों को स्पर्श करके अश्रुपात करते हुए कहा-कि हे विधाता! मेरा मानो ये जो दिवस व्यतीत हुए हैं। त्रुटि हो तो मुझे क्षमा कर देना। मैं क्षमा का पात्र बनना चाहता हूँ।

तपस्वी भरत

राम ने कहा-धन्य भरत! भरत! मैं तुम्हारे जैसा तो महान देखो, मैं अपने को त्यागी कहूँ, मैं कोई त्यागी नहीं हूँ मैं कोई तपस्वी नहीं हूँ परन्तु हे भरत! तेरे जैसा कौन तपस्वी हो सकता है संसार में? मानो देखो, पादुका ही से राष्ट्र का पालन करने वाला भरत है और पादुका विद्यमान है। मेरी तो पादुका भी, तुम्हारे अस्तित्व में राम का अस्तित्व धारण कर रही हैं। हे भरत! मानो देखो, तुम्हारी कौन प्रशंसा कर सकता है। मेरे मुखारबिन्दु में कोई शब्द नहीं है जो मैं तुम्हारे समीप कोई प्रशंसा करूं। क्योंकि तुम इतने प्रशंसनीय हो, तुम तो इतने खिलवाड़ करने वाले हो राष्ट्र से, तुम्हारे यहाँ मानो मैं यह कहता हूँ कि मेरे द्वारा, कोई अस्तित्व नहीं है मैं कोई त्यागी नहीं हूँ, कोई तपस्वी नहीं हूँ। क्योंकि मैंने तो द्रव्य को पुनः अपना लिया है। भरत! तुम्हारे हृदय में, अपनाने की कोई प्रेरणा ही नहीं बनी। तुम्हारे हृदय में यह आकांक्षा ही उत्पन्न नहीं हुई। माता की ममता यह कहती है कि देखो, भरत राष्ट्र का पालन करने वाला हो। परन्तु देखो, माता मेरे लिए सब कुछ कर सकती है। मानो कुठाराघात भी कर सकती है तुम्हारे लिये, परन्तु भरत तुम्हारे हृदय में कुठाराघात की जब कामना ही उत्पन्न नहीं हुई तो, तुम तो देवता हो। मेरे प्यारे राम कहते हैं-तुम देवता हो।

मुनिवरो! देखो, वहाँ सर्वसमाज राम के ही प्रेम में अश्रुपात होने लगे। मानो सर्वत्र राष्ट्र समाज मुनिवरो! देखो, अश्रुपात करने लगा और यह कहा-धन्य हैं राम, धन्य हैं भरत, मुनिवरो! देखो, हमारे यहाँ राम और भरत जैसा अस्तित्व समाज में प्राप्त हो जाता है। तो मेरे प्यारे! देखो राष्ट्र खिलवाड़ बन जाता है। अरे द्रव्य क्या है मानव की दृष्टि में? मानव की दृष्टि में आत्मा से आत्मा का मिलान होता है। मन का मन से, प्राण का प्राण से मिलान होता है। उसी से जन-जीवन ऊंचा बनता है।

तपस्वी लक्ष्मण

मेरे प्यारे! लक्ष्मण को कहते हैं राम। बारी-बारी देखो, उनके गुणां की प्रशंसा कर रहे हैं राम। राम कहते हैं कि लक्ष्मण! जैसा कौन तपस्वी हो सकता है। पत्नी की कोई कामना नहीं है। ब्रह्मचारी बन करके भयंकर वनों में आज्ञा का पालन कर रहे हैं। आज्ञाओं का पालन करके मानो यहाँ कैसा ऊंचा-ऊंचा कार्य उन्होंने किया है। मैं इनके गुणों का क्या गुणवाद कर सकता हूँ।

मानो देखो, शत्रुघ्न है उनके हृदय में यह कामना नहीं होती तुम भी किसी राजा के पुत्र हो। उनके हृदय में यह कामना नहीं होती तुम भी अयोध्यावासी हो। वे कहते हैं हम तो वनचरों के, हम तो वनचर है। वन में रहने के लिए प्रशंसनीय है। मानो देखो, जिन विधाताओं की ऐसी कामना होती है। मेरे पुत्रो! देखो, वह राष्ट्र, देवपुरी बन जाता है। वहाँ अतिमानव की कल्पना करनी चाहिए। वहाँ कितनी ऊंची उड़ान है बेटा! त्याग और तपस्या की। क्या त्याग और तपस्या की कोई सीमा है। कोई सीमा में बद्ध कर सकता है त्याग, तपस्या को, कोई भी सीमाबद्ध नहीं कर सकता।

विधाताओं का त्याग

मानो देखो, कैसा विपरीत कार्य है। अरे, तो मानो देखो, पुत्र के लिए तीन संस्कार कराता है और देखो, पुत्र यह चाहता है कि पत्नी न हो, परन्तु एक दूसरे विधाता में समय रहना चाहिए। क्या अभिप्रेत है ये मानो देखो, अयोध्या का जो साहित्य है वह कितना विपरीत है, कितना विचित्र है? इस विचित्रता के लिए मुनिवरो! देखो, आज कुछ वाक्य हम उच्चारण करने के लिए आये थे। मानो कुछ देखो, इन वाक्यों को उच्चारण किया। मेरे प्यारे! देखो, सर्वत्र राजाओं ने राम का स्वागत किया। राम के चरणों में नतमस्तिक हो गये। मानो देखो, राम के चरणों में क्यों नतमस्तिष्क हो गये? क्योंकि उनका त्याग एक महान त्याग था। तीनों-चारों विधाताओं का त्याग मानो महान त्याग था।

संकल्प में प्राण

अयोध्या के कुल पुरोहित कौन? मुनिवरो! देखो, पुरोहित महर्षि वशिष्ठ महाराज कहते है-धन्य है, मेरे प्यारे! उस समय देखो, अरून्धती से कहते हैं हे देवी! ये क्या खिलवाड़? तुम दृष्टिपात कर रही हो? अरून्धती कहती है- प्रभु ये उस माता के पुत्र है। जिस माता ने तुम्हें निरूत्तर कर दिया था। तुम्हें यह प्रतीत है जब राम माता के गर्भाशय में विद्यमान थे। तो माता कौशल्या ने यह संकल्प किया था कि मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूंगी। मैं स्वयं कला कौशल करके द्रव्य का पान करूंगी। परन्तु जब राजा दशरथ हमें लाये और ये कहा गया कि इसको राष्ट्र का अन्न प्राप्त होना चाहिए। हमने कहा-कि राष्ट्र के अन्न को ग्रहण करो। उन्होंने कहा-मैं नहीं करूंगी, मेरा यह संकल्प बन गया है। मानो देखो, उस समय तुम्हें निरूत्तर कर दिया था। ये कहा था कि ये जो प्रभु का जगत् है सर्वत्र, यह एक संकल्प में निहित है यदि मानव का संकल्प चला जाता है तो मानव के प्राण चले जाते हैं। एक मानव संकल्प करता है क्या? कि यह मेरी पत्नी है और पत्नी कहती है ये मेरा पति है। ब्राह्मण देखो, पुरोहित के समीप वह संकल्प करते है और यदि वह संकल्प अस्वत् होता है तो गृह का आसन मानो देखो, ऐसे डोल जाता है ऐसे डगमगा जाता है जैसे विष्णु के भक्त, जब भक्ति में तल्लीन हो जाते है तो विष्णु मानो देखो, प्रेरणा देता है।

संकल्पवादी माता

इसी प्रकार मानो मानव का संकल्प होता है मानव का संकल्प है माता-पिता का जो पुत्र है वह माता-पिता का संकल्प है। क्योंकि आत्मा पुत्र नहीं होता, परमाणु किसी के पुत्र नहीं होते। परन्तु वे संकल्प में ही पुत्र, पुत्री कहलाते हैं। मेरे प्यारे! यह ब्रह्माण्ड संकल्प से ही गति कर रहा है। सूर्य मानो ऋत और सत् एक संकल्प है प्रभु

का, उसी के आधार पर ही मानो ये संसार गति कर रहा है। यह संसार सर्वत्र संकल्प में विद्यमान है।

अरून्धती कहती है, प्रभु! माँ कौशल्या ने यही तो कहा था-कि मेरा यह संकल्प बन गया है। जब आपने अति कहा तो उन्होंने यह कहा-तुम पत्नी हो माता यदि पति-पत्नी मानो दोनों ही अपने संकल्प को शांत कर दें तो मैं भी संकल्प से अविरल मानो संकल्प को नष्ट कर सकती हूँ। आप से कोई उत्तर नहीं बन पाया था। ये उसी माता के पुत्र है यह उसी संकल्पवादी माता के पुत्र है।

देखो, गृहस्थाश्रम का यह नियम होता है। जो बड़े विधाता के संकल्प होते हैं। जो इनके कार्य होते हैं त्याग और तपस्या के वह जो इनसे छोटे मानो वंशलज होते हैं। उनसे छोटे जो विधाता होते है उनको वही कार्य करना अनिवार्य हो जाता है। इसीलिए राम को श्रेय है इसका, भरत को जो मानो त्याग और तपस्या का एक जीवन है उसका श्रेय राम को है। मानो जो लक्ष्मण तपस्वी बने, उसका श्रेय राम को है और मानो देखो, शत्रुघ्न को राष्ट्र की आकांक्षा नहीं होती उसका श्रेय किनको है? राम को ही है क्योंकि राम जब त्यागी बनना चाहता है तो मानो छोटे विधाता स्वतः ही त्यागी अवश्य बनना चाहेंगे। मानो देखो, यह वाक्य जिनका श्रेय माता कौशल्या जी को है। क्योंकि राम का निर्माण करने वाली कौशल्या है। इसके पश्चात् विश्वामित्र हैं, इसके पश्चात् आप हैं। मानो यह त्याग और तपस्या का श्रेय देखो, माता कौशल्या जी को है। इसीलिए माता कौशल्या जी महान है इसलिए इस सभा में माता कौशल्या जी के धन्यवाद का गुणगान गाना चाहिए। जो ऐसे पुत्र को जन्म दिया जो इतने त्याग और तपस्या में अयोध्या का नामोकरण कर दिया।

मुझे स्मरण है बेटा! और देखो, लाखो वर्ष हो गये राम का और अयोध्या का अब तक बेटा! इसी प्रकार का समन्वय हो रहा है। अरे वह अयोध्या की भूमि लाखों-करोड़ों वर्षों बाद भी राम के गुणों का गुणगान गाती रहेगी। परिणाम क्या है यह बेटा! देखो, उनके जीवन की सुगन्धि है। यह उनके त्याग और तपस्या की सुगन्धि है। इसलिए प्रत्येक देव कन्या को मानो तप में रहना चाहिए। तप का जीवन होना चाहिए जिससे राष्ट्र, समाज में एक मानवता आ जाये एक पवित्रता आ जाये जिस पवित्रता को धारण करने के पश्चात् मानव का जीवन एक धन्य बन जाता है।

मेरे पुत्रो! सर्वत्र राजाओं ने उस सभा, उस गोष्ठी में राम को राजतिलक किया। वे अयोध्या के राजा बने, अधिराज बन करके वे क्या करते थे? मेरे पुत्रो! देखो, ये चर्चाएं मैं कल कर सकूंगा। आज का विचार समाप्त। शेष चर्चाएं कल प्रकट कर सकेंगे आज का वाक्य समाप्त अब वेदों का पाठ।

आज के वाक्य उच्चारण करने का अभिप्राय क्या कि प्रत्येक मानव, प्रत्येक देव कन्या का जीवन त्याग और तप में होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, प्रत्येक मानव अयोध्या का अतिमानव बनने के लिए प्रेरित हो रहा है। आज का वाक्य समाप्त अब वेदों का पाठ।20.10.76कृष्णानगर, दिल्ली

३ संसार रूपी यज्ञशाला—21 10 1976

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहार वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से, जिन वेद मंत्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो संसार का रचयिता है अथवा नियंता है और निर्माण करने वाला है।

पंचीकरण

उस मेरे प्रभु ने, सृष्टि के प्रारंभ में, एक भव्य यज्ञशाला का निर्माण किया। जब भव्य यज्ञशाला का निर्माण किया गया तो उस भव्य यज्ञशाला के तट पर नाना ऋत्विजों का निर्माण किया गया और ये ऋत्विज मानो एक चैतन्य देव, यज्ञशाला का यजमान बना और द्वितीय चैतन्य देव उस यज्ञशाला का ब्रह्मा बना। ब्रह्मा की प्रेरणा, बारम्बार प्राप्त होती रहती है और यजमान का कर्म ये सृष्टि के प्रारम्भ से प्रचलित हो रहा है जब ये संसार रचा, मेरे देव ने जब ये ब्रह्माण्ड रच दिया, इस ब्रह्माण्ड का पंचीकरण हो गया। पंचीकरण हो जाने के पश्चात् मुनिवरो! देखो, ये कुछ समय तक सुन्न अवस्था में यह ब्रह्माण्ड रहा। क्योंकि सर्वत्र वस्तु तेजोमयी कहलायी गई। मानो प्रत्येक वस्तु तेज में रत थी।

सूर्य अपने तेज में रत था। चंद्रमा अपनी शीतलता में मानों इतना रत न था। मेरे पुत्रो! अग्नि इस काल में चैतन्यवत् मानों अपने तेज में थी। वायु अपने तेज में रमण कर रही थी। मेरे पुत्रो! देखो, कुछ समय संसार में, उपजने की शक्ति नहीं थी। इस यज्ञशाला में तेज अग्नि का प्रवाह होता रहा। मेरे पुत्रो! समय-समय पर ये सृष्टि, समयचक्र मानों वह शांत होने लगा जब वह समय शांत होने लगा तो मेरे प्यारे! चंद्रमा में शीतलता का प्रवाह आया। मानों चंद्रमा ने अपनी शीतलता के द्वारा, आपो जल के परमाणुओं को लेकर के मानों इस शून्य जगत् को मानो अपने तेजों से उस तेज को अपने में धारण किया। अपने में श्वसन करने लगे।

तेजोमयी जगत्

मेरे पुत्रो! देखो, यह संसार करोड़ो वर्षों तक, लगभग यह संसार रचना से दो करोड़ उन्नासी लाख वर्षों तक मुनिवरो! देखो, निष्प्राणी थे, निरस्थूल थे। मानों ये जगत् तेजोमयी कहलाया गया। मानो देखो, तेजोमयी है। वह जो तेजोमयी हुआ तो मेरे प्यारे! मानो देखो, यज्ञवेदी पर सबसे प्रथम मेरे चैतन्य देव, ब्रह्मा ने मुनिवरो! देखो, इस संसार को निरक्षण रूपों में, दृष्टिपात किया। जब दृष्टिपात करने लगे तो मेरे पुत्रो! देखो, इस भूमि में उपज शक्ति उत्पन्न हो गई। क्योंकि अंकुर प्रकृति में स्वभावतः होता है।

आदि वृक्ष पीपल

सबसे प्रथम मेरे प्यारे! देखो, इस पृथ्वी में एक पीपल के वृक्ष की उत्पत्ति हुई। क्योंकि ये जो पीपल का वृक्ष है इसको पीपालवृत्ति यत्र वृष्टिता ये वृक्ष कहलाता है। हमारे यहाँ, पीपल को ब्रह्मा कहते हैं। क्योंकि सर्वत्र वृक्षों में यह ब्रह्मा कहलाया गया है। इसके मानो देखो, पंचांग इसके प्रत्येक अंग में महान गुण कहलाए जाते हैं, आयुर्वेद के कथनानुसार। मेरे प्यारे! देखो, इसके फल में मानव में वीरत्व शक्ति का संचार होता है और इसकी जो औषध है इसके जो तने हैं इसका जो चर्म है उस चर्म, का जब मानो देखो, स्नान करता हुआ, इसके जल में जब स्नान करता तो बहुत से रोग शांत हो जाते हैं। परिणाम क्या मानो देखो, इसका जो प्रत्येक अंग है, प्रत्येक पत्तियां हैं मानो जो पत्तियों का जन्म होता हुआ हो, पूर्ण हो गया हो उसको मानो देखो, जल में तपा करके अग्नि में, मेरे प्यारे! उसके रस का पान करते तो उसमें जीवन शक्ति प्राप्त होती है।

सूर्य वृक्ष आखा

तो पुत्रो! आज मैं वेद के संबंध में तो कुछ चर्चा करने नहीं आया हूँ। इसके पश्चात् मुनिवरो! देखो, सूर्य वृक्ष कहलाता है। सूर्य औषध कहलाते हैं उसको आख कहते हैं। मानो देखो,, अखेश्वरी औषध का जन्म हुआ। मानो देखो, उसमें प्रभु ने ऐसी शक्ति की ऐसी प्रधानता दी है कि मानो उसमें 101 गुणों की प्रधानता मानी गयी इस पौधे में। उस पौधे के मानो देखो, जड़वत में कुछ और गुण है पत्तियों में कुछ और गुण है मानो उसके पुष्प में कुछ और गुण है। और फलों में नाना प्रकार के गुणों की वृता है।

तो मानो देखो, वह जो पौधा है उसको आचार्यों ने मानो देखो, आयुर्वेद के आचार्यों ने सूर्य कहा है। सूर्य की उपाधि इसलिए दी है क्योंकि सूर्य की नाना किरणें आकर के नाना धातुओं को तपाती रहती है। इसी प्रकार इस आख को, मानो देखो, आखेश्वरी वृक्ष को लेकर के इस पौधे को लेकर के अपने जीवन के बहुत से रूग्णों को शांत कर सकता है। मानो देखो, इस सृष्टि में हमारे यहाँ सबसे प्रथम इन दोनों पौधों का जन्म हुआ एक पौधे का नाम ब्रह्मव्रत है और एक पौधे का नाम आखमव्रत है। मानो देखो, दोनों पौधों का जन्म हो करके उसमें नाना प्रकार के गुण हैं।

स्थावर सृष्टि

उसके पश्चात् देखो, यहाँ पर्वतों की मालाओं में कुछ पौधों का जन्म हुआ। जन्म हो जाने के पश्चात मेरे प्यारे! देखो, सर्वप्रथम मूल यह है सबसे प्रथम स्थावर सृष्टि का जन्म हुआ। स्थावर सृष्टि किसे कहते हैं? जो पृथ्वी से मानो देखो, उद्वान करने वाली हो। पृथ्वी के कणों को मानो देखो, उनको दूरी करते हुए उपजने की जिसमें शक्ति हो। उसे स्थावर सृष्टि कहते हैं।

स्थावर के पश्चात् मेरे प्यारे! देखा पश्चात् का जन्म हुआ क्यों हुआ क्योंकि वृक्ष पे मानों देखो, स्थावर वृक्ष अपनी वाणी से मानों वो गुणगान गाते हुए अपनी वाणी से ध्वनि करते हुए मानों वह आगे आने वाली सृष्टि को ये चेताने के लिए इनका जन्म हुआ है उसके पश्चात् जन्म हमारा हुआ है क्योंकि हम उद्वाव्रहेः मानों देखो, यानि जल चरों में भी रहते हैं जैसे योनि है। मानों देखो, वह जलचर में भी रहती है। वह पृथ्वी के आंगन में भी रहती है पृथ्वी के गर्भ में रहती है। पृथ्वी पर औषधियों का पान करती है और जल में मानो देखो, जल के विष को अपने में शांत कर लेती है। मानों देखो, वही सर्प जल में भी रहता है वही वृक्ष मानो देखो,, वही प्रतिभू-व्रणाः बहुत से वृक्षो के अंग को देखो, जलों में भी प्राप्त होते हैं। परन्तु देखो, यहाँ सर्प योनि का वर्णन था ये पृथ्वी में देखो, औषधियों का पान करते हैं। और जल में दोष है उनको अपने में ग्रहण कर लेते हैं।

चार प्रकार की सृष्टियाँ

परिणाम क्या होता है मानों देखो, ये संसार एक भव्यता में परिणत हो गया। ये संसार रूपी यज्ञ का निर्माण मेरे देव ने किया था। तो मेरे प्यारे! उसके पश्चात् जब अण्डज सृष्टि का जन्म हुआ उसके पश्चात् मुनिवरो! देखो, यहाँ जंगम सृष्टि का जन्म हुआ, जंगम सृष्टि के पश्चात् उद्भिज का जन्म हुआ। तो मुनिवरो देखो, यह चार प्रकार की सृष्टि, चार प्रकार से सृष्टि की उत्पत्ति होती है। स्थावर में नाना वनस्पतियाँ नाना धातु मेरे प्यारे! देखो, खाद्य और खनिज आ गया। और मुनिवरो! देखो, जितने पक्षी हैं मानो गमन करने वाले जो अण्डज सृष्टि से देखो, सर्प भी उत्पन्न होता है अण्डे से नाना कच्छ भी होता है। और नाना प्रकार की सृष्टियाँ है मानों उसकी गणना करना हमारे लिए मानो इस समय सम्भव नहीं है।

परिणाम क्या? उसके पश्चात् मुनिवरो! देखो, यहाँ देखो, जंगम सृष्टि का जन्म होता है और जंगम से उद्भिज का होता है। तो मुनिवरो! देखो, उद्भिज सृष्टि उसे कहते हैं जो मानव के जल से जो मानव के शरीर से

जल आता है उस जल से, तेज से एक देखो, योनियां प्राप्त हो जाती है। उसको उद्भिज कहते हैं।

तो यहाँ चार प्रकार की सृष्टि प्रारंभ में मेरे देव ने मुनिवरो! देखो, यह रचना की। आज सृष्टि की रचना मानो विचित्रवत् है। तो मानव ने यह स्वीकार किया, मानव ने यह जाना कि मानो देखो, यह समाज, यह जो संसार है यह यज्ञवेदी है। जब से सर्ववस्तु मानो देखो, दो प्रकार की सृष्टि रच गयी। तो परमपिता परमात्मा ने मेरे प्यारे! देखो, इस मानव समाज को उत्पन्न किया। मानव समाज को जन्म दिया। मानव समाज को जन्म देने वाला कौन है? ये विचार का विषय है। आज जब इसके ऊपर चिंतन करते हैं तो वास्तव में देखो, कुछ ऐसी विकृत-वार्ता होती है जैसे मानो देखो, यह संसार खिलवाड़ता में प्रतीत हो रहा हो।

मानव का जन्म

परन्तु देखो, इसके ऊपर विचार विनिमय में करते हुए केवल ये विचार करें कि मानव का जन्म कैसे हुआ? मानव देखो, जैसे ये वृक्ष-योनि का जन्म हुआ, वृक्षों का जन्म जिसको हम स्थावर सृष्टि कहते हैं। उसके पश्चात् मानो देखो, ब्रहेः अण्डज सृष्टि करते हैं तृतीय में जंगम सृष्टि कहते हैं। जंगम सृष्टि का जन्म है यह अपने स्वभाव से ही मानो देखो, इनका राष्ट्रीयकरण हो गया था। एक उद्भिजता में करण हो गया। उस करण हो जाने से अपने स्वभाव में अपनी-अपनी योनियों को प्राप्त होने लगा। मानो ये देखो, पृथ्वी के गर्भ से, पृथ्वी के गर्भ में, प्रकृति के गर्भ में इस प्रकार पृथ्वी के गर्भ में कहकर के प्रकृति के गर्भ में उच्चारण कर लेना चाहिए। क्योंकि परमाणुओं का सन्निधान मात्र से ही मानो देखो, एक दूसरे की रचना प्रारंभ होने लगी जैसे मानो देखो, तेजोमयी से ये ब्रह्माण्ड पिण्डों का पिण्ड-आकार का जब मानो देखो, एक व्रेत हुआ, एक ध्वनि हुई एक मानो देखो, तेजोमयी से मानों देखो, एक अण्डाकार ब्रह्माण्ड का विभाजन हुआ, तो ये ब्रह्माण्ड मानो अनन्तवत्, अनन्त लोकों में परिणत हो गया। जिसकी मानो गणना नहीं कर सकता। जिसकी मानो अवहेलना भी नहीं कर सकता, कि ऐसा नहीं हुआ।

परन्तु देखो, इसके ऊपर बहुत वार्तायें विचार विनिमय में करने की है। परन्तु इनके ऊपर बहुत संयम से विचार विनिमय करने के लिए तत्पर रहते हैं। मैंने कई काल में मुनिवरो! देखो, इसके ऊपर विचार विनिमय में भी किए हैं। आज भी मैं समय के अनुसार, परन्तु इतना मैं वाक् उच्चारण नहीं कर सकता इस संबन्ध में, केवल ये वाक् उच्चारण करने के लिए तत्पर हूँ कि मानव ने भी मानों अपने स्वभाव से परमाणुवाद के देखो, प्रकृति के सन्निधान मात्र से, मानों देखो, पिण्ड बन गया। प्रकृति के गर्भ में बना मानो तेजोमयी जहाँ जैसा जिस लोक का वायुमण्डल था उसी लोक का उसी वायु मण्डल के आधार पर वहाँ का जैसा वातावरण, उसी वातावरण के अनुसार मानो देखो, उसी प्रकार से इस मानव समाज का सन्निधान मात्र से जन्म हो गया।

मेरे प्यारे! देखो, सन्निधान मात्र से ही ब्रह्माण्ड की क्रियाएं चल रही हैं। तो मानो देखो, आदि ब्रह्मा ने ये मुनिवरो! देखो, ब्रह्माण्ड की रचना की। यज्ञशाला का निर्माण किया और ब्रह्मा बनकर के संसार को दृष्टिपात कर रहा है। मानो साकल्य के द्वारा वह इस देवत्व को और नाना संसार को दृष्टिपात् कर रहा है।

आज मैं मुनिवरो! देखो, इस सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चाएं प्रगट करने नहीं आया हूँ। केवल तुम्हें ये वाक् प्रगट करने के लिए आएं हैं कि यह जो ब्रह्माण्ड है यह एक प्रकार का यज्ञमयी स्वरूप हैं। यज्ञशाला है। इसको यज्ञशाला जानकर के तुम स्वीकार करोगे तो मानव का उत्थान होगा। और यदि इसमें मानो देखो, अपनेपन को नष्ट कर दोगे तो यही ब्रह्माण्ड, यज्ञशाला न बनकर के ये कुविचारों की यज्ञशाला यज्ञं ब्रहेः बनकर के मानों देखो, यह कुप्रथा में रमण करता हुआ मानो देखो, समाज से दूरी हो जाता है और परमात्मा के नियम से दूरी हो जाता है।

यज्ञ रूप सृष्टि

तो विचार विनिमय में क्या? आज का हमारा वेद का ऋषि यह कहता है, आज का हमारा वेद का आचार्य यह कह रहा था कि हम परमपिता परमात्मा की, उस देव की जिसने यह ब्रह्माण्ड की रचना की है। स्वयं ब्रह्मा बना है। आत्मा यजमान बना है और ये पंचमहाभूत ये ऋत्विज बने हैं और देखो, ये सूर्य उद्गाता बना। इनके पंचीकरण होने के पश्चात् मानों देखो, यह एक दूसरा मण्डल है, एक दूसरा ब्रह्माण्ड है ये सब एक पंचीकरण की प्रतिभा है और उसी प्रतिभा में बेटा! प्रत्येक प्राणी अपना कार्य कर रहा है। आत्मवत् उत्पन्न करके अपना कार्य कर रहा है। चेतनाबद्ध होकर के मानो ये ब्रह्माण्ड का कार्य चल रहा है।

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा प्रगट न करता हुआ, आज का हमारा विचार विनिमय में क्या था? मेरे प्यारे! देखो, हम ये उच्चारण कर रहे थे कि परमपिता परमात्मा का ये जो ब्रह्माण्ड है ये एक प्रकार की यज्ञशाला है, यज्ञवेदी है। इसकी चार प्रकार की सृष्टि मानी जाती है। मानो वह एक सृष्टि तो अनन्तवाद में वर्णित है। मानों देखो, जैसे परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान अनन्तवत् माना गया। इसी प्रकार उस मेरे देव चैतन्य प्रभु का, उस महामना देव का देवत्व, उसका विज्ञान एक अनन्त रचना करने की उसकी एक अनन्त प्रतिभा है।

पूर्व संस्कारों के आधार पर ज्ञान

मेरे प्यारे! उसके पश्चात् जब ये मानव समाज का जन्म हुआ तो ये मानो समाज बहुत सालो यज्ञवेदी पर अपना कार्य करता रहा। परन्तु कुछ समय के पश्चात् मानो देखो, इन्हीं महापुरूषों में से देखो, ऋषियों का जन्म हुआ और ऋषियों का जन्म होकर के इन्होंने अपनेपन को जाना, अपने मानवीयतव को जाना, वह कैसे जाना? वह पूर्व कल्पयतम् मानो देखो, पूर्व संस्कार के आधार पर, पूर्व जो संस्कार थे वे जागरूक हो गए, प्रकृति के सन्निधान मात्र से क्योंकि चित्त विद्यमान होता है। मनस्तव के साथ में चित्त होता है क्योंकि मन की चार गतियाँ होती हैं। मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार। मानो देखो, ये चित्त में संस्कार रहते है पूर्व कल्प के भी रहते हैं। आ-हा वे पूर्व कल्प के जो चित्त में संस्कार थे ऋषि मुनियों के, उन चित्त को जाना, मन को जाना, बुद्धि को जाना, बुद्धि को जानकर के चित्त के क्षेत्र में चले गए और चित्त के क्षेत्र का जो समन्वय होता है, वह जो वायुमण्डल है, अंतरिक्ष है उससे मानों देखो, इसका समन्वय होता है और इस वायुमण्डल में मेरे प्यारे! देखो, वे जो तरंगे उत्पन्न हुई थी वह आदि ब्रह्मा की प्रेरणा से तरंगे थी। उन तरंगों में जो शब्द थे उन शब्दों में मुनिवरो! देखो, यह विशेषता थी जिनका सम्बन्ध चित्त से था और चित्त का समन्वय आन्तरिक्ष से होता है और अन्तरिक्ष में जो पूर्वकल्प के आधार की जो रचना थी जो शब्द थे वेदों के, मेरे पुत्रो! देखो, वे अनन्त ध्वनि को जानकर के मानव के शरीर में, मानव के मस्तिष्क में ब्रह्मरन्ध्र के आंगन में, ब्रह्मरन्ध्र ऊर्ध्वम् निचले भाग में ध्वनि होती है जिसको आचार्यों ने अनहद भी कहा है। जिनको आचार्यों ने स्वर ध्वनि कहा है। जिसको सुनकर के नृत्य होने पर मानो देखो, उसको शिव का नृत्य, ध्वनि और डमरू भी कहलाता है।

वेद-ध्वनि

तो मानो देखो, उन शब्दों के द्वारा मानव ने वेद की प्रतिभा को जाना। वेद की प्रतिभा को जानकर के और वेद ध्वनि को जो मानो देखो, कुछ समय तक स्मृतियों में रहा, मानव के कण्ठस्थ हो गए। द्वितीय आदित्य उनका शिष्य था उसको कण्ठस्थ हो गए। तो इनकी स्मृति भी कहा है। मानों किन्हीं आचार्यों ने इसको स्मृतियों में वर्णन किया है। और किन्हीं आचार्यों ने इसको वेदं ब्रही वेद प्रकाश, वेद को प्रकाश के रूप में माना है। किन्हीं ने मानों इसको त्रि-विद्या स्वीकार कर इसको कण्ठस्थ किया है। मानों ये कुछ काल तक देखो, ये लगभग करोड़ो वर्षों तक वेद की पोथी देखो, आचार्यों के कण्ठ होती रही। करोड़ों वर्षों तक यह कण्ठ होती रही।

लेखनी का उदय

अध्यात्मवाद

एक दूसरा ये पोथियों में नहीं रही मानो उसके पश्चात् मुनिवरो! देखो, एक रेणावृत्तिकेतु आचार्य हुए और रेणावृत्तिकेतु आचार्य कौन थे? मानो देखो, जो ब्रह्मा हुए उन ब्रह्मा के सातवें महापिता कहलाते थे और ब्रह्मा के सातवे महापिता ने सबसे प्रथम वे एक समय अपने विचारों की उड़ान उड़ रहे थे और विचारों की उड़ान उड़ते हुए ऐसी महान उड़ान उन्होंने उड़ी कि मानो देखो, उन्होंने एक वृक्ष के पत्र को जाना, उस पत्र पर मानो ये लेखनी शब्दों की लेखनी बद्ध होने लगी। उसके पश्चात् ये लेख की लेखनी प्रारंभ होने लगी। तो ये मानो वेद की पोथी, लेखनियों में, स्मृतियां उनके विचार लेखनियों में बद्ध होने लगी।

तो बेटा! ये तो मैं बहुत बड़े वन में चला गया। उस वन की आज मुझे कोई आवश्यकता नहीं है। क्योंकि मेरे प्यारे महानन्द जी को भी दो शब्दों की विवेचना करनी है। विचार विनिमय में केवल यह है कि ये विचार धारा प्रवाह से, इस वाक् को उच्चारण करूंगा तो बेटा! ये भयंकर वन है। मैं इस वन में नहीं पहुंचना चाहता हूँ विचार विनिमय में क्या? ये लेखनी बद्ध होता रहा तो स्मृतियां लेखनी बद्ध होने लगी। मानो देखो, ये लगभग देखो, अरबों वर्षों पूर्व लेखनीबद्ध होने लगी थी संसार में।

परन्तु देखो, वे भोजपत्रों के द्वारा कुछ और भी ऐसे वृक्ष थे जो वृक्षों के ऊपर पत्रों पर लेखनी आई। सबसे प्रथम तो ये माना गया कि रेणावृत्तिकेतु सबसे प्रथम मानों पीपल के पत्र पर लेखनी बद्ध की थी। क्योंकि वह ही आदि वृक्ष, आदि पौधा है संसार का। संसार का पौधा इसलिए आदि आचार्यों ने पीपल के वृक्ष की मानो उपमा देकर ब्रह्म की कल्पना की थी। मानो देखो, वही पीपल का वृक्ष है ब्रह्मवेतु कहते हैं। वेद में बहुत से नामोकरण है। आचार्यों ने और आयुर्वेदाचार्यों के मत में इसके बहुत से नामोकरण होते रहे। परन्तु देखो, ये जो नामोकरण है मैं इस सम्बन्ध से न जाता हुआ जब सबसे प्रथम पीपल के वृक्ष को, उसके पश्चात् बट वृक्ष को जाना, उसके पश्चात् भोज पत्र को जाना और भोज पत्र को जानने के पश्चात यह विचारा कि इनमें कौन-सी शक्ति है? इनमें कौन-सा परमाणु आ करके मिलान करता है। कौन-सी सूर्य की किरण है जो इसको तपाती है?

अथर्वा

मानो देखो, उन तपाने वाली किरणों को, उन आदि पुरुषों ने ब्रह्मा के पुत्र होकर के इस मानो सूर्य की किरण को जानने वाला कौन बना? देखो, अथर्वा। देखो, ब्रह्मा के पुत्र का नाम अथर्वा था। अथर्वा के पुत्र का नाम व्रेणकेतु था। व्रेणकेतु देखो, इस वेद के मन्त्रों को विचारने लगा। तो विचारते हुए देखो, उन्होंने सूर्य की किरणों को जाना और उन किरणों को देखो, पंचीकरण को जानता हुआ उन्होंने देखो, योगाभ्यास के द्वारा कुछ मानो धातुओं को एकत्रित करना प्रारंभ किया। कुछ यज्ञशाला मे से देखो, सुगन्धि को लेने का प्रयास किया। उन सुगन्ध को लेकर के, उन परमाणुओं को लेकर के सूर्य की किरणों को, यंत्रों में कटिबद्ध करने लगे। मानो देखो, वे पर्वतों की मालाओं में उनको जानने लगे।

परिणाम यह हुआ मानो देखो, ऐसी-ऐसी प्राण वायु प्राणनाशक मानो ऐसी वायु को जानने लगे जिनसे देखो, वृक्ष भी उसमें भस्मीभूत हो जाता था और भस्मीभूत होकर के कुछ ऐसे धातुओं को जानने का प्रयास किया मानो देखो, उससे पत्र बनना प्रारम्भ हो गया। अब मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा देने नहीं आया हूँ। विचार विनिमय में केवल यह कि ये तो बहुत विशाल वन है विचारों का। परन्तु देखो, मैने ये सूक्ष्म, स्थूल-स्थूल वाक्यों की चर्चायें की है। अब मेरे प्यारे महानन्द जी अपने कुछ विचार प्रकट करेंगे।

यज्ञों का प्रारम्भ

परन्तु मैं यागों के सम्बन्ध में विचार दे रहा था परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में इस संसार रूपी यज्ञवेदी को रचा। इसी यज्ञवेदी की कल्पना करके ऋषि मुनियों ने यज्ञशाला में विद्यमान होकर के आहुति देना,

साकल्य को सुगन्धि करना ये उनका स्वभाव बन गया। मानो देखो, इनका स्वभाव बनकर के यज्ञ प्रारंभ होने लगे। यज्ञों की परम्परा आज से नहीं है। देखो, आदि से ही है, उस काल से जब से देखो,, मानव का जन्म हुआ है। मानव का जंगम सृष्टि के जन्म होते ही कुछ ही समय के पश्चात् साकल्य को जानने की प्रवृत्ति थी क्योंकि पूर्वकल्प के आधार पर देखो, मानो इसी प्रकार चलता रहा, सुगन्धि देते रहे। फिर यज्ञों की प्रथा मानो देखो, वेद मंत्रों के आंगन में बन गई। क्योंकि वह एक विचार धारा थी ऋषि मुनियों की। परन्तु आज मैं इस संबन्ध में कोई अधिक विचार नहीं देना चाहता हूँ। मेरे प्यारे महानन्द जी अपने विचार व्यक्त करें।

पूज्य महानन्द जीः-ओ३म् सर्वत्रप्रजां दिव्याः.....। तो तुम्हारा नहीं रहेगा। ऋषि मुनियों के विचार रहेगे, त्याग और तपस्या के विचार रहेंगे, तो समाज में त्याग आएगा। राष्ट्रों को कौन जानेगा? राष्ट्र के लिए, स्वार्थ के लिए वे विचार अग्नि के मुख में प्रदीप्त कर दिए। यह समाज कितने समय से चला आ रहा इस प्रकार का, इनमें कुछ सुधारक प्राणी भी आए हैं, सुधारा है प्राणियों ने। परन्तु देखो, उतना सुधार कहाँ आ सकता? क्योंकि जब साहित्य अग्नि के मुख में चला गया तो उन्होंने कुछ सुधारा, कुछ नहीं सुधरा। कुछ मानो पवित्रता में रहा, कुछ नहीं रहा। इसी प्रकार आगे समाज आता रहा। समाज की देखो, ये कुप्रथायें चलती रही। जहाँ मेरी पुत्रियों का पूजन होता था, जहाँ मेरी माताओं का पूजन होता था वहाँ मेरी माताओं की इतनी अपकीर्ति हुई। मानो देखो, उनको अग्नि के मुख में परिणत करने लगे। परन्तु अपने को ऊँचा बनाने लगे। अरे, एक मानव समाज में अपनी पत्नी को सीता की दृष्टि से पान करना चाहता है परन्तु स्वयं को राम बनने की कल्पना नहीं जागती। यदि उसके हृदय में राम बनने की कल्पना जागती होती तो देखो, अपनी पत्नियों को वे सीता की दृष्टि में दृष्टिपात करते परन्तु देखो, जब देखो, राम ही नहीं बनते तो ये मेरी पुत्रियाँ सीता कैसे बन सकती हैं?

त्याग प्रेरक याग

परन्तु इसके सम्बन्ध में मैं नाना वाक् प्रगट नहीं करना चाहता हूँ क्योंकि विचार विनिमय में क्या? आज का हमारा यह वाक् क्या कह रहा है? हे मानव! तू अपनी मानवीयता को पुनः से ऊँचा बना। प्रत्येक गृह में कर्त्तव्य के पालन होने चाहिए। याग होने चाहिए, क्योंकि याग हमें त्याग की प्रेरणा देता है, तप की प्रेरणा देता है। ये मानो देखो, ईश्वरीय प्रेरणा देता है इसलिए प्रत्येक गृह में याग होने चाहिए। हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे तेरे जीवन की धारा पवित्र बनती रहे। तू संसार के ऊपर न जाना, ये संसार क्या कर रहा है। अरे, तुम क्या कर रहे हो, तुम अपने वाक् के ऊपर मानो देखो, कल्पित हो जाओ। तुम अपने वाक् के ऊपर कल्पना करो, तुम संसार के ऊपर कल्पना करोगे, यह संसार कहाँ जा रहा है? यह संसार तो चला जाएगा।

देखो, इससे पूर्व काल में मेरे पूज्यपाद राम की चर्चा कर रहे थे। राम राजा को राष्ट्र की प्रेरणा देते हैं। राम कहते हैं-कि मुझे तो अपने इन महापिताओं के ऊपर जाना है जिन्होंने भयंकर वनों में गऊओं की सेवा की। परन्तु उन गऊओं की सेवा करनी है मुझे तो। मुझे तो तप करना है। आज का प्राणी ऐसा है कि गऊओं को भक्षण करके प्रसन्न हो रहा है।

अहिंसा का वरण

परन्तु देखो, राम तो गऊओं की रक्षा करने के लिए और कल्पना कर रहा है अपने महापिताओं की। परन्तु आज का मानव समाज क्या कहता है मानो ये देखो, गऊओं का भक्षण हो रहा है। क्योंकि यह प्राणी गऊओं का क्यों भक्षण करता है? ये पशु है, विशेष हो गए अब राष्ट्र में। क्यों अब ऐसा विचार बन गया। अरे, इनका दायित्व तो प्रभु पर है जो उत्पन्न कर रहा है या तुम्हारे ऊपर दायित्व बन गया है। तुम्हारा तो कर्म है कि तुम कर्त्तव्य का पालन करते चले जाओ। तुम्हारा कर्म है अहिंसा को अपनाते चले जाओ। जो तुम्हारा आत्मा कहता है जो तुम्हारा

अध्यात्मवाद

अन्तर्हृदय कहता है, शांत हृदय से सुख चाहता है प्रत्येक प्राणी वह सुखद तभी प्राप्त होगा जब अपने कर्त्तव्य का स्वयं पालन करेगा। परन्तु दूसरों से सुखी कोई भी प्राणी नहीं बन सकता। अब तक ऐसा नहीं हुआ जो दूसरों से सुखद बना हो। वह अपने से ही मानों आनन्दित होता है। अपने को ही जानकर अपनापन प्राप्त होता है।

इसीलिए अपने मानवत्व को जानने का प्रयास किया जाए परन्तु देखो, राष्ट्र की परम्पराएँ ऐसी ही चल रही है। आज का राष्ट्र, आज के विधातावाद के ऊपर में चर्चा करूं तो एक महान क्रान्ति का विशेषण बन जाता है। मेरे हृदय में तो प्रायः ऐसा प्रतीत होता है कि इस समाज में कुछ ही काल में देखो, अग्निकांड होने ही वाले हैं। इसमें तो संदेह नहीं है क्योंकि आज मानव, राष्ट्र को चरित्र नहीं चाहिए। आज आधुनिक राष्ट्र को वह राम वाला चरित्र नहीं चाहिये। वह मानो देखो, ऋषि मुनियों का चरित्र नहीं चाहता आज का समाज। मानो देखो, जैसे स्वांग होता है। अपने राष्ट्र की स्वांग प्रवृति बनाना चाहता है। मानो देखो, जब स्वांग प्रकृति बन जाती है प्राणी की, तो यह प्राणी देखो, अग्नि के कांडो में परिणत हो जाता है।

देव प्रवृत्ति

इसी प्रकार मानव की स्वांग प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिए। देव प्रवृत्ति होनी चाहिए, चरित्र प्रवृत्ति होनी चाहिए, अनुशासन प्रवृत्ति होनी चाहिए। जिस ब्रह्मचर्य को मानो ऊर्ध्वागति में ले जाकर के ब्रह्मरन्ध्र में प्रभु का दर्शन किया जाता है। मानो इस कर्त्तव्यवादी समाज में वो मानो देखो, वह गति बन गई है कि ये स्वांग प्रवृति बन करके मानो अग्नि के मुखारबिन्दु में जाने के लिए तत्पर हो रहा है।

द्रव्य का सदुपयोग

परिणाम क्या है इस संसार का? यह संसार मानो ऐसा क्यों बन गया है? ये समाज इसलिए बन गया है क्योंकि स्वार्थ प्रवृति विशेष बलवती हो गई है। हे मानव! तू स्वार्थ को त्याग करके कर्त्तव्य का पालन कर, द्रव्य का द्रव्यवती न बन, परन्तु द्रव्य का उपभोग करने वाला बन। द्रव्य को अपनाकर के संग्रह करने की तेरी प्रवृत्ति नहीं होनी चाहिये। तू! मानो देखो, उसका अपव्यय करता है तो ऊंचे रूपों से करना चाहिए, यज्ञों में करना चाहिए, देवपूजा में करना चाहिए, जिससे तेरा गृह स्वर्ग बन जाए और गृह स्वर्ग बनेगा तो राष्ट्र भी स्वर्ग बनेगा।

राष्ट्र नियमावली

महाराजा अश्वपति के यहाँ एक नियमावली बनी थी और राम के यहाँ भी एक नियमावली बनी थी जब राष्ट्रीयता को अपनाते थे तो उनका विचार सर्व संसार में विद्युत का कार्य करता था उन्होंने कहा था-विद्यालयों में और प्रत्येक गृह में प्रातःकाल में देखो, याग होंगे। यह विचार भगवान् राम ने राष्ट्र को अपनाते ही, यह घोषणा की थी इस विचार की घोषणा मानो पातालपुरी से लेकर हिमालय श्रृंखलाओं से पार सर्वत्र विश्व ने अपनाया। अपनाने का परिणाम यह हुआ कि देखो, समय पर वृष्टि होती थी, समय पर मानो देखो, ऊष्मता होती थी। कृषि में एक महानता होती थी। अपने-अपने कर्त्तव्य का समाज पालन करता था। वह स्वर्ग देवत्व को प्राप्त कराने वाला हो तो वह देव समाज कहलाता है। वह देवताओं को प्राप्त होता है और जिनका आहार और व्यवहार दोनों ही नष्ट हो जाए वहाँ देखो, याग जैसे कर्मों को पाखण्ड कहा जाए और देखो, दुरिता कर्मों को एक राष्ट्रीय सम्पदा कहा जाये तो ये समाज का दुर्भाग्य कहलाया गया है। समाज का, राष्ट्र दोनों का दुर्भाग्य है।

इस दुर्भाग्य वाक्यों को त्याग करके उन कर्मों को त्याग करके मानव को ऊंचे-ऊंचे कर्म विद्या संग, अपने-अपने कर्त्तव्य का पालन माता वसुन्धरा तो ऐसी है इसको धेनु कहते हैं। मानो जितना धूना चाहता है। उतना धू सकता है। इस पृथ्वी के गर्भ में ऐसी-ऐसी धातुएं हैं मानो पर्वतों की मालाओं में भिन्न-भिन्न धातुएं है। इनको विज्ञान से, मस्तिष्क से जानते रहो, जानकर के इनका उपयोग करते रहो तुम्हारे राष्ट्र को कोई नष्ट न कर सके ऐसे यंत्रों

का निर्माण भी होना चाहिए। परन्तु देखो, उसके पश्चात् यहाँ ऐसे ऐसे खाद्य पदार्थों को जाना जाता है। इसे वसुन्धरा से उत्पन्न किया जाता है कि जिसको पाकर के मानो कृतार्थ हो जाता है।

आज का मानव कहता है कि अन्नाद को हम चाहते हैं कि अन्न की जितनी सुरक्षा हो उतनी सुन्दर है। अरे, अन्न की तो सुरक्षा तुम चाहते हो, परन्तु गऊ की सुरक्षा नहीं, तो दुर्भाग्य क्या है? मानो देखो, जब गऊ की सुरक्षा नहीं चाहते। दुग्ध देने वाले की सुरक्षा नहीं चाहते तो तुम्हारे समाज का क्या बनेगा? मानो देखो, इसी प्रकार अरे, अन्न की सुरक्षा कैसे होगी मानों मांस भक्षण करने वाला प्राणी अहा देखो, अन्नाद को भी अधिक विशेष पान करता है। क्योंकि ये उन प्राणियों को प्राप्त नहीं होता जो मानो देखो, अन्न से पीड़ित प्राणी है। अन्न से पीड़ितो की रक्षा करनी चाहिए, उनके द्वारा उनको शिक्षा दो, उनको कर्म में लाने का प्रयास करो। मानो देखो, उनकी भिक्षा प्रवृत्ति न बनाओ, भिक्षुक न बना उसको समाज में।

राष्ट्र का कर्तव्य

राष्ट्र का कर्त्तव्य है कि प्रत्येक प्राणियों को शिक्षा दे। शिक्षा देकर के उसको कर्म में लगाया जाए तो यह समाज का कल्याण हो सकता है। आज का मानव देखो, जिसने और ही मार्ग को अपना लिया है। मैं इन वाक्यों में नहीं जाता, ये तो समाज की कुरीतियां हैं। मैं कहाँ तक उच्चारण करूंगा। यहाँ ऐसे-ऐसे राजा हुए हैं। विधाता को नष्ट किया देखो, स्वयं राजा बन गए। विधाता को नष्ट करके, पिता को नष्ट किया और स्वयं अधिराज बन गए। महाभारत के काल में ऐसे बहुत से अवशेष प्राप्त होते हैं। ये क्या है? ये स्वार्थवाद है। ये त्याग प्रवृत्ति नहीं है।

पुरातन काल में ऐसे राजा थे स्वयं कलाकृति से, कला कौशल करके दिव्य भूमि से अन्नाद उत्पन्न करके उसको पान करते थे। आज का समाज, आज का राष्ट्र ऐसा है कि अपने कुटुम्ब के लिए सर्वस्व द्रव्य एकत्रित करके, समाज के वैभव को लेकर के, वह समाज कहीं चला जाये परन्तु तुम अधिराज कहलाने लगोगे। ऐसे मानो देखो, समाज की प्रवृति बन गई है। आज मैं इस सम्बन्ध में विशेष चर्चा प्रकट करना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय ये देना चाहता हूँ मेरे पूज्यपाद तो राम की चर्चा करते है ऐसे काल में। परन्तु ऐसे काल में तो ऐसी चर्चाएं होनी चाहिए जिस चर्चाओं से ये समाज मानो देखो, दुरिता में परिणत हो जाए और यह कहे जो कुछ कार्य तुम कर रहे हो वह सुन्दर है यदि इनके मन के विपरीत कोई कार्य कर रहा है तो उसे कहते हैं कि इसको कारागार में परिणत कर दिया जाए। मान बृम्मी लोकं ब्रह्म लोकाः हिरण्य देवोः हेमनं गच्छं ब्रह्मे लोकाः मानो देखो, इस प्रकार का यहाँ, अरे जिस समाज में, जिस काल में शब्द उच्चारण करने के लिए प्रतिबंध हो जाता है मिथ्या उच्चारण करने के लिए मानो देखो, ध्वनि उच्चारण कर रहा ये समाज कितने समय तक जीवित रह सकेगा। इसके जीवित रहने की कोई सम्भावना नहीं कर सकता।

लक्ष्मी का सत्कार

मानो देखो, हे मानव! मेरा तो एक ही वाक् है। एक ही घोष है कि मानव को अपने कर्त्तव्य का पालन करते रहना चाहिए और पालन करते समय सुन्दर-सुन्दर यागो की रचना होनी चाहिए और देखो, यहाँ हे यजमान! तेरा स्वभाव अखण्ड बना रहे, तेरे जीवन की अखण्ड ज्योति बनी रहे जिससे मानो शुभ कर्म होते रहे, द्रव्य का सद् उपयोग होता रहेगा तो लक्ष्मी मानो तेरा पूजन करा सकेगी। जिस गृह में लक्ष्मी का सत्कार होता है धर्म तो उसका पति है। लक्ष्मी का पति कौन है? धर्म है। धर्म के ऊपर जब द्रव्य लक्ष्मी का उपयोग होता है। मानो देखो, धर्म वहाँ स्वतः होता है और जहाँ धर्म होता है वहाँ श्री होती है और जहाँ श्री, धर्म होता है वहाँ ईश्वर का वास होता है, चरित्र का वास होता है और वहाँ मानो प्रीति और समय होते हैं वही मानो स्वर्ग कहलाया गया है।

मानों ये स्वर्ग की एक कल्पना मैंने कुछ प्रगट की है। आज मैं विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ। मेरे

अध्यात्मवाद

पूज्यपाद गुरुदेव तो बहुत ही गम्भीर विषय को लेकर के चले थे आज। उस गम्भीर वाक् के ऊपर मैं जाना नहीं चाहता हूँ। केवल वाक् यह उच्चारण करना चाहता हूँ कि राष्ट्रीय पद्धति में मानों देखो, नाना कुरीतियाँ हैं। कई अशुद्ध प्राणियों से देखो, प्राणियों को भय है। कहीं मोहम्मद के मानने वाले प्राणियों का भय लगा हुआ है, कहीं ईसा के मानने वाले प्राणियों का भय लगा हुआ है।

सुबुद्धि का प्रभाव

देखो, नियमावली यथार्थ नहीं बन पाती। मनु जी वाला सिद्धान्त नहीं बन पाता, अश्वपति वाला सिद्धान्त नहीं बन पाता कह देते राम घोषणा परन्तु रामराज की कल्पना केवल मानव के विचारों में ही रह गई। विचार से भी दूरी चले गए। परिणाम यह हुआ कि समाज देखो, दूरिता में परिणत हो गया। आज मैं यह कह रहा हूँ हे परमात्मन्! इस समाज को सुबुद्धि दें। यह ऊँचा बने। क्योंकि समाज में जब सुबुद्धि आएगी तो यह स्वतः ऊँचा बनेगा। प्रेरणा हम देते ही रहते हैं। परन्तु सुन्दर-सुन्दर याग करना, ऊँची-ऊँची भावना बनाना, यह मानव का कर्त्तव्य है। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा।

पूज्यपाद गुरूदेवः- मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में, एक विडम्बना रहती है। बहुत समय से यह विडम्बना चली आ रही है। राष्ट्रीय विडम्बना है, सामाजिक विडम्बना है। कोई वाक् नहीं परन्तु देखो, हर काल प्रत्येक काल में दोनों ही प्रकार के प्राणी होते चले आए हैं। आज मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में एक विडम्बना बलवती होती चली जा रही है। कटुता उनके हृदय में, सदैव उनके वाक्यों में रहती है। परन्तु प्रेरणादायक शब्द है। मेरे प्यारे महानन्द जी ने यजमान को आशीर्वाद के रूप में, परन्तु मेरी भी सदैव यह कामना रहती है। हे यजमान! तेरा हृदय ऊँचा और पवित्र बने, अपनी त्रुटियों को त्यागने का प्रयास और महानता को लाने का प्रयास होना चाहिए और जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे यह आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पाठ। 21.10.76,कृष्णा नगर, दिल्ली

४ प्रकाशक आत्मा—07 10 1981

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा। आज हमने पूर्व से जिन वेद मंत्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में उस मेरे देव, जो संसार का नियन्ता है अथवा निर्माण करने वाला है उस महान देव की महिमा का गुणगान गाते ही रहते हैं। क्योंकि प्रत्येक वेदमंत्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है। अथवा उसका वर्णन कर रहा है। परन्तु आज का हमारा वेद मंत्र, हमें कुछ प्रेरणा देता रहता है। यों तो प्रत्येक वेद मंत्र प्रेरक है और मानव के जीवन से, उस प्रेरणा का सम्बन्ध है।

आध्यात्मिक और भौतिक विज्ञान

तो आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें कुछ वार्ता प्रकट कराने के लिए आया हूँ। हमारे यहाँ परम्परागतों से दोनों प्रकार का विज्ञान, एक पराकाष्ठा में रहा है और वे ज्ञान और विज्ञान ऋषि मुनियों के मस्तिष्कों में सदैव रमण करता रहा है। क्योंकि आध्यात्मिक विज्ञान और भौतिक विज्ञान दोनों वैज्ञानिक तत्वों का, हमारे ऋषि मुनियों ने समन्वय किया था। पर मानव के लिए इंगित किया है। हे मानव! तू दोनों प्रकार के विज्ञान में रत हो। परन्तु यहाँ ज्ञान और विज्ञान मानव को एक महान बनाता रहता है। यहाँ मानवीयतव अपनी आभा में, अपनी तप में रमण करता रहता है।

तो मेरे प्यारे! आओ आज का हमारा वेद मंत्र और मेरे प्यारे! महानन्द जी अपने कुछ वाक्य प्रकट करते रहते हैं। आज मैं तुम्हें ये उच्चारण करने के लिए यागां ब्रह्मणां व्रतां देवस्य लोकाः वेद का ऋषि कहता है हे याज्ञिक पुरूषो! तुम याग में रमण करते रहो। हमारे यहाँ यों तो दार्शनिकों की भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ान इस सम्बन्ध में रही है। हमारे यहाँ जब याग का प्रकरण आता है तो आचार्यों की वार्ता स्मरण आती रहती है।

याग का अभिप्राय

बेटा! मुझे स्मरण आता रहता है। राजा रावण के जो पूज्य गुरु थे, वे ब्रह्मा थे। ब्रह्मा जी के चरणों में विद्यमान होकर के वे शिक्षा अध्ययन करते थे। परन्तु एक समय राजा रावण ने अपने पूज्य गुरु से यह कहा-हे प्रभु! ये याग क्या है? तो ब्रह्मा जी ने कहा-कि हे ब्रह्मचारी! तुम ये उत्तर दो कि याग क्या नहीं है? तो मेरे प्यारे! जब ये वाक्, तो गुरु शिष्य दोनों का संवाद होने लगा। उन्होंने कहा-कि प्रभु! हम ये जानते नहीं हैं कि याग क्या है? ब्रह्मा ने कहा-कि याग वे कर्म हैं, जिनसे मानो बल प्राप्त हो जाए, मानो वह वरिष्ठ होता है। याग कर्म जितना भी है, वह आत्मा का भोजन है। जैसे मानव प्रातः काल से लेकर के सायंकाल तक अपनी उदर की पूर्ति करने का प्रयास करता रहता है। वे भी एक याग है क्योंकि शारीरिक है। परन्तु आत्मिक जो याग होते हैं वे मानो देखो, द्यौ-लोक में अपने तत्वों को पहुंचाना है। द्यौ-लोक में जा करके देवताओं के समीप हमें विद्यमान होना है।

मेरे प्यारे! देवता कौन होता है? देवता वह होता है जो मानो देखो, याग में रत रहने वाला है। हमारे यहाँ ब्रह्मचरिष्यामि का वर्णन आता रहता है। ब्रह्मचरिष्यामि मानो देखो, वह जो चरिष्यामि है ब्रह्मणा कृताः विद्या को जो चरी बना करके अपने में धारण करता है जिस प्रकार पशु अपनी चरी को अपने में धारण कर लेता है। जिस प्रकार माता अपने बाल्य को गर्भस्थल में शिक्षित बना देती है। मानो अपने से लेकर के अपने को प्राप्त कराती रहती है। इसी प्रकार ये जो याग कर्म हैं ये मानव के हृदय से इसका समन्वय रहता है। मेरे प्यारे! ब्रह्मा ने कहा-हे ब्रह्मचारियो! मानो याग वह है जिस याग को करने से मानव की अन्तरात्मा में प्रसन्नता होती है। मानव का

अन्तरात्मा महान बन जाता है। जैसे माता अपने पुत्र को प्राप्त करने के पश्चात् माता प्रसन्न हो जाती है। क्योंकि वह उसकी चरी कहलाती है। उस ममता में रमण करने वाली माता, अपने को धन्य स्वीकार करती है। इसी प्रकार हमारे यहाँ परम्परागतों से ही जितना भी ये कर्म है सर्वत्र एक याग के रूपों से परिणत किया है। जितने आत्मिक कर्म हैं वे सब याग हैं।

मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है। जब मैं नाना प्रकार की वार्ताओं में प्रवेश करने लगता हूँ तो हमें भी ये दृष्टिपात होने लगता है कि ये जो प्रभु ने संसार रचा है। ये एक प्रकार की यज्ञशाला है। और उस यज्ञशाला में प्रत्येक मानव विद्यमान हैं। क्योंकि प्रत्येक मानव इस संसार रूपी यज्ञशाला में विद्यमान हो करके अपना कर्म कर रहा है, महान हो रहा है।

राजा जनक की यज्ञशाला

आओ, मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें राजा जनक की यज्ञशाला में ले जाना चाहता हूँ। राजा जनक के यहाँ बेटा! नित्य ही ब्रह्मयाग होता रहता था। उनके यहाँ जहाँ ब्रह्मयाग होता वहाँ देवपूजा भी होती रहती थी। तो मेरे प्यारे! राजा जनक बेटा! रात्रि काल में पति पत्नी अपने आसन पर विद्यमान हो करके कुछ चिंतन कर रहे थे। आज कोई मानव अपने घर को महान बनाना चाहता है। तो माता पिता जो बनने वाले हैं उनके हृदय सुन्दर और मार्मिक विचार होने चाहिए गृह में, जिससे आगे आने वाली जो सम्पदा है वह उनके आचरणों से पवित्र होती चली आए। जैसे राजा जनक पति पत्नी रात्रि काल में बेटा! उड़ान उड़ रहे हैं। पत्नी कहती है-कि हे प्रभु! ये जो मंत्र है द्रष्टां ब्रह्मणाः व्रणो देवस्याः मंत्र ये कहता है इस मंत्र में प्रश्न किया गया है कि हमारे जो नेत्र हैं वे किसकी दृष्टि से दृष्टिपात होते हैं? क्योंकि नेत्र तो वह पदार्थ है और नेत्रों में जो शक्ति है दृष्टिपात करने की, वह कहाँ से आती है?

तो मेरे प्यारे! दोनों विचार करते रहे उस मंत्र का कोई निमटारा नहीं कर पाए। मेरे प्यारे! देखो, प्रातः काल हो गया, अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके, वह अपनी यज्ञशाला में जा पहुंचे। जहाँ नित्यप्रति पति पत्नी याग करते थे, देवपूजा होती थी। तो बेटा! यज्ञशाला में राजा जनक और उनकी पत्नी जब याग करने लगे। तो बेटा! एक स्थान पर महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज विद्यमान हो करके पुरोहित बन गये और चाक्राणी गार्गी भी विद्यमान है मेरे प्यारे! उनके पुरोहित और राजपुरोहित वे भी विद्यमान हैं। जिस समय यज्ञ संपन्न हुआ तो राजा जनक ने यह संकल्प कर लिया कि आज मैं पुरोहित से प्रथम कोई प्रश्न नहीं करूंगा।

नेत्रों का प्रकाशक

मेरे प्यारे! जैसे याग समाप्त हुआ, तो राजा जनक ने कोई प्रश्न नहीं किया। तो ऋषि कहते हैं याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ब्रह्मवेता ने कहा-कि यजमान! कोई प्रश्न कर सकता है। उन्होंने कहा-कि प्रभु! मैं यह जानना चाहता हूँ कि हमारे जो नेत्र हैं वह किसकी दृष्टि से दृष्टिपात हो रहे हैं? राजा और पत्नी ने जब ये प्रश्न किया तो ऋषि प्रसन्न होकर के बोले-हे राजन! इसको प्रत्येक मानव जानता है प्रत्येक पुत्री जानती है, प्रत्येक मानो जितना भी जन समाज है वह सर्वस्व जानता है-कि हमारे जो नेत्र हैं वे सूर्य के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। सूर्य हमारे नेत्रों का देवता है। मानो सूर्य का प्रकाश आता है। प्रातः काल उदय होता है मानव अपने नेत्रों को उसका प्रकाशक बना करके कार्य में रत हो जाता है अथवा कार्य करने लगता है। सूर्य हमारे नेत्रों का देवता, क्या हमारे भंडार का मानों वह अश्वापति माना गया है। यह जो सूर्य है वह महान प्रकाश देता है। उसकी ज्योति को धारण करने वाला बेटा! योगेश्वर सूर्य मंडल की गति करने लगता है।

मस्तिष्क का निर्माण

मेरे प्यारे! देखो, वह जो विद्युत की तरंगे आ रही है। मानो देखो, वह रात्रि को समाप्त करने लगती है।

हमारे यहाँ अहिल्या के नाना पर्यायवाची शब्द माने गए हैं। आज मैं अहिल्या के सम्बन्ध में, कोई अपना विचार देने नहीं आया हूँ केवल ये, कि हमारा यज्ञं ब्रह्मणाः कृतं देवाः ये याग का अधिपति माना गया है। ये सूर्य मानो ज्योति देने वाला है। यहाँ तक नहीं बेटा! ये खनिज और जितने पृथ्वी में खनिज है, खाद्य है। सबको परिपक्व बनाने वाला है। बेटा! यहाँ तक देखो, गऊ जो पशु है, गऊ के रीढ़ के विभाग में मानो एक स्वर्णकेतु नाम की एक नाड़ी होती है। और उसमें जो किरण आती रहती है उन किरणों को वह नाड़ी अपने में ग्रहण करके, जो किरणें स्वर्ण को उत्पन्न करती हैं वह स्वर्ण की मात्रा मानो गऊ के उन यन्त्रालयों में प्रवेश करती हैं। वह परमाणु जिससे बेटा! गऊ के धृत में, दुग्ध में, स्वर्ण की मात्रा विशेष प्राप्त होती है। तो बेटा! वे सूर्य से प्राप्त हो रही है। मेरी प्यारी माता जब उसके गर्भ स्थल में हम जैसे शिशु होते हैं तो माता के मस्तिष्क के त्रितित् विभाग में बेटा! एक श्वे नामक एक नाड़ी होती है। उस श्वे नाड़ी का सम्बन्ध पुरातत् नाम की नाड़ी से होता हुआ बेटा! सूर्य की किरणों को वह नाड़ी अपने में ग्रहण करती है। जिससे बेटा! माताओं के गर्भस्थल में बालक के मस्तिष्क का निर्माण हो रहा है। बेटा! मैं विशेष चर्चा देने नहीं आया हूँ विचार विनिमय में क्या? बेटा! देखो, वह माता सौभाग्यशाली है। जो इस प्रकार के विज्ञान को जानती हुई बेटा! अपने गर्भ से महान पुत्रो को जन्म देती है। जिससे राष्ट्र, समाज पवित्र बनता है।

चन्द्रमा का प्रकाश

तो मेरे प्यारे! राजा ने ऋषि से कहा-हे भगवन्! यह तो हमने जान लिया, परन्तु हम ये जानना चाहते हैं कि जब ये सूर्य नहीं होता तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं? उन्होंने कहा-हे राजन्! जब ये सूर्य नहीं होता तो हम चन्द्रमा के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। ये चन्द्रमा हमारे नेत्रों का देवता है। मानों ये ज्योति अमृतमयी देता है। ये नाना किरणें देता है, नाना कान्ति देता है। बेटा! देखो, जब मंगलं ब्रह्मे ये नाना जो वनस्पतियां विद्यमान हैं। इन सब में जो रस का उत्पादन कर रहा है रसों को प्रदान कर रहा है बेटा! वह चन्द्रमा है। कृषक जब अपनी मानो इस भूमि में, इस वसुन्धरा के गर्भ में, जब बीज की स्थापना कर देता है तो बेटा! चन्द्रमा ही है जो नाना प्रकार के रसों को प्रदान कर रहा है। कृषक प्रसन्न हो रहा है। मेरी कृषि सुन्दर उपज रही है। माता वसुन्धरा कृषक को प्रसन्न बना रही है।

तो बेटा! वह चन्द्रमा से कान्ति आती है। चन्द्रमा यहीं तक कार्य नहीं करता है। जैसे अमृत को बहाने वाला, पृथ्वी के गर्भ में बहाता रहता है। इसी प्रकार माता के गर्भस्थल में जो नाना नाड़ियाँ है बेटा! उसको देखो, माता की रसना के निचले विभाग में एक चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी होती है और चन्द्रकेतु नाम की नाड़ी के निचले विभाग में बेटा! रसों को पान करती रहती है। वह नाड़ी रसों का, अमृत चन्द्रमा से लेकर के उस नाड़ी का सम्बन्ध पुरातत् नाम की नाड़ी से है और पुरातत् नाम की नाड़ी का सम्बन्ध मेरे प्यारे! माता की नाभि से रहता है और माता के गर्भस्थल में जो शिशु पनप रहा है-बेटा! वह उस नाड़ियों के द्वारा बेटा! चन्द्रमा के रस को वह बाल्य को प्रदान कर रहा है। वाह रे, मेरे प्यारे! प्रभु तू कितना वैज्ञानिक है। तेरे विज्ञान की कोई सीमा नहीं है। इतना विशाल विज्ञान है बेटा! प्रभु का वह मेरे प्यारे! माता अपने बाल्य को अमृत प्रदान कर रही है। इसलिए हे माता! तू, ऐसे महान रसो का पान करने वाली बन, जिससे तेरे गर्भस्थल में जो बाल्य पनप रहा है मानो वह बुद्धियुक्त होना चाहिए, बुद्धिमान होना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, चन्द्रमा महान है। चन्द्रमा औषधियों में रसों को प्रदान करता है। जिनसे याग होते हैं उन्हीं से वृष्टि होती है, वही वृष्टि का अधिपति माना गया है।

तारा मण्डलों का प्रकाश

मेरे प्यारे! जब ऋषि ने ऐसा कहा-तो राजा ने और राजलक्ष्मी ने कहा-कि प्रभु! हम जानना चाहते हैं जब चन्द्रमा नहीं होता तो हम किसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं? उन्होंने कहा-हे राजन्! जब ये चन्द्रमा नहीं होता तो

हम तारा मंडलों के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। ये तारा मण्डल हमें प्रकाश देते हैं। ये प्रकाश के द्योतक बने होते हैं। मेरे प्यारे! देखो, धीमा-धीमा प्रकाश आता रहता है। मानव रात्रि में भी अपने मार्ग को प्राप्त कर लेता है। मुनिवरो! देखो, वह सूर्य मानो देखो, चन्द्रमा और नक्षत्र कितना विशाल है। बेटा! आठ वसु कहलाते हैं। इनमें मानो वसता रहता है। ये धीमा प्रकाश देते हैं, एक आकाशगंगा में बेटा! नाना मण्डल है, नाना सूर्य है। आज पृथ्वी प्रारम्भ हुए बेटा! लगभग दो अरबों के लगभग वर्ष होने वाले हैं। परन्तु देखो, बहुत से तारामण्डलों का प्रकाश बेटा! देखो, वह गति से गमन कर रहा है। परन्तु बहुत से तारा मण्डलों का प्रकाश पृथ्वी पर अभी तक नहीं आ पहुंचा है। बेटा! ऐसा विशाल मण्डल है, मैंने इससे पूर्व काल में मैने तुम्हें प्रकट कराया है। परन्तु देखो, इन तारा मण्डलों का प्रकाश आता रहता है।

अग्नि का प्रकाश

राजा ने कहा हे प्रभु! मैं जानना चाहता हूँ जब ये तारा मण्डल नहीं होते, तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं? उन्होंने कहा-हे राजन्! जब मानो ये प्रकाश नहीं होता तो हम अग्नि के प्रकाश से प्रकाशित हो जाते हैं। अंधकार छाया हुआ है, प्रकाश आ रहा है। कहाँ से आएगा? मेरी प्यारी माता अग्नि को प्रकाशित कर रही है तो गृह प्रकाशित हो जाता है। मानव प्रकाश में रमण करने लगता है। यह अग्नि का प्रकाश है बेटा! मानो जो अग्नि यज्ञशाला में प्रदीप्त रहती है। यह अग्नि हैं जो काष्ठों में रहती है, वह अग्नि कहलाती है जो गति से गमन करने वाली है। यही अग्नि है बेटा! जो मानव के शब्दों को लेकर के द्यौ लोक में पहुंचा देती है। यहीं अग्नि है जो सूक्ष्म बनकर के बेटा! वैज्ञानिक इसको धूने लगता है। जैसे गौ को धूने वाला, दुग्ध को धूने लगता है। जैसे बालक माता की लोरियों का पान करके माता को धू देता है इसी प्रकार मेरे पुत्रो! देखो, वह कौन धूता है? वह धूने वाला कौन है? मेरे प्यारे! देखो, वैज्ञानिक जब इस अग्नि की धाराओं को लेकर के उसे धूता रहता है। मानो उसे धारण करता रहता है। वैज्ञानिकों ने कहा है आयुर्वेद में 85 प्रकार की अग्नि मानी गई है। परन्तु वैज्ञानिक कहते हैं कि इस अग्नि की अरबो खरबों तरंगे हैं, जो असंख्य है जो गणना में नहीं आ पाती। परन्तु देखो, यह अग्नि प्रकाशक है, यह अग्नि हमें प्रकाश देती हैं।

शब्द का प्रकाश

परन्तु राजा और उनकी राजलक्ष्मी ने ऋषि से कहा-हे प्रभु! हम जानना चाहते हैं कि जब यह अग्नि नहीं होती तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते है? उन्होंने कहा हे राजन्! जब यह अग्नि नहीं होती तब हम अप्रतम्, शब्द के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। यह जो मानव शब्द उच्चारण कर रहा है इस शब्द का प्रकाश अनुपम माना गया है। जैसे एक मानव अंधकार में जा रहा है। मार्ग से वह कुमार्ग को चला जाता है। उस समय वह कहता है अरे, है कोई हमें मार्ग बताने वाला। तो वह मानव देखो, कुमार्ग से मार्ग पर आ जाता है वह शब्द के प्रकाश से आ जाता है। वह ही शब्द है बेटा! जहाँ देखो, शब्दों के द्वारा राष्ट्र में अग्नि प्रदीप्त हो जाती है। ये समाज भयंकर अग्नि में प्रवेश कर जाता है। यही अग्नि है, बेटा! यही शब्द है, मानो जो मेरी प्यारी माता अपने पुत्र को, शब्दों से ब्रह्मवेत्ता बना रही है। माता मल्दालसा की भाँति वही शब्द है। मेरे प्यारे! जिन शब्दों के कारण मानव आत्मिक बन जाता है। माता सीता ने भयंकर बनों में लक्ष्मण को एक ही वाक् कहा था वह अशुद्ध वाक् जिससे बुद्धि भ्रष्ट हो गई। मेरे प्यारे! रावण के कारागार में सीता का पड़ा होना ये सब शब्द की महिमा थी। महाभारत काल में मानो देखो, द्रौपदी ने जब शब्दों से ये कहा था सम्भो व्रणासि कि अन्धे की सन्तान तो अन्धी ही होती है। तो मानो देखो, दुर्योधन प्रतिज्ञाबद्ध हो गया। उन्हीं शब्दों के कारण मानो देखो, द्रौपदी को सभा में नग्न होने के लिए तत्पर होना पड़ा परन्तु शब्द को अशुद्ध न उच्चारण करो। शब्द पवित्र होना चाहिए। हे मेरी प्यारी माता! शब्द को तू

देती रहती है। मानो माता मल्दालसा की भाँति जब बालक को लोरी देती रहती है। तो उस समय कहती है शुद्धोऽसि, बुद्धोऽसि, निरंजनोऽसि हे बालक! हे आत्मा! इस शरीर में रहने वाले आत्मा! तू सुन्दर है, तू पवित्र है। तू निरंजन है, अखण्ड रहने वाली है। बुद्धिमान है, महान है। हे आत्मा! तू कदापि नष्ट नहीं होती। जब माता अपनी लोरियों का पान करा कर, अपने बाल्य को, इस प्रकार का उपदेश देती है वाणी से तो वह पवित्र बन जाता है। माता की वाणी पवित्र बन जाती है। गृह अग्नि के कांड नहीं बनते। मेरे प्यारे! राष्ट्र समाज पवित्र बन जाता है।

अत्रि रूप वाणी

आओ मुनिवरो! देखो, शब्द महान होना चाहिए। ऋषि याज्ञवल्क्य कहता है-कि हम शब्द के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। शब्द मेरे प्यारे! पांडित्य-तव शब्दों का उच्चारण करो, शब्दों की पूजा कर रहे हैं। मानो मानव एक वेद को पठन-पाठन करने वाला पांडित्य-तव है। परन्तु देखो, उस वेद की वाणी को, उस ब्राह्मण की वाणी का पूजन कर रहा है मानव। क्यों कर रहा है? क्योंकि वाणी पवित्र है। इसीलिए वाणी को पवित्र बनाओ। वेद के आचार्यों ने बेटा! वाणी को अत्रि कहा है। अत्रि क्यों कहा है? क्योंकि यह वाणी अति उच्चारण कर देती है। अत्रि से, अति से, अग्नि बनता है तो विचार विनिमय में क्या मेरे प्यारे! वाणी को हमें पवित्र बनाना है, हम महान बने।

आत्मा का प्रकाश

मेरे प्यारे! देखो, जब शब्द के ऊपर ऋषि ने बहुत उच्चारण किया तो राजा ने, उनकी राजलक्ष्मी ने उन्हें कहा-कि भगवन् हम जानना चाहते हैं कि जब ये शब्द ही नहीं होता, तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं? उन्होंने कहा-हे राजन! जब ये शब्द नहीं होता, तो हे राजन! हम आत्मा के प्रकाश से प्रकाशित होते हैं। यह आत्मा हमारे शरीर का द्यौतक है। मानो देखो, यह आत्मा प्रकाश देता है। एक मानव अन्धकार में विद्यमान है, अंधकार में भी मानो वह आत्मा का जो अनुभव है उससे वह वस्तु को जान लेता है।

आत्मा का भोजन

मेरे प्यारे! देखो, आत्मा भी प्रकाशक है। उस मानव शरीर में जब तक ये आत्मा है, तब तक मानो शरीर बना रहता है। आत्मा जब इस शरीर से पृथक् हो जाता है। तो मानो उसको कहते हैं ये मृतक हो गया है। आत्मा के न रहने से ही मानव निष्क्रिय हो जाता है। तो जितनी ये क्रियाएँ हैं इस मानव के शरीर में बेटा! उसका प्रतिनिधि आत्मा है। आत्मा ही क्रियाशील बनाता है। इसलिए वेद के आचार्यों ने कहा-हे मानव! तू अपनी आत्मा को बलिष्ठ बना। आत्मा को महान बना क्योंकि आत्मा को भोजन दे, आत्मा तभी तो बलिष्ठ बनेगी। आत्मा का भोजन क्या है? याग कर्म सर्वश्रेष्ठ याग ही कर्म है। उस सर्वत्र का नाम याग माना गया है और याग कर्म करने से मानव महान और पवित्र बनता है।

आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा देने नहीं आया हूँ। केवल कुछ वाक् प्रकट कराने आया हूँ। बेटा! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने ये सब निर्णय कराने के पश्चात् राजा मौन हो गया और राजा ने, राज और लक्ष्मी ने ऋषि के चरणों को ओत-प्रोत किया और ये कहा-धन्य है ऋषिवर! तुमने हमें आत्मा का ज्ञान कराया। आत्मा तक हमें पहुंचाया। तो मेरे प्यारे! देखो, मानव को जो प्रकाश आता है। आत्मा जब तक है ये प्रकाश ज्यों का त्यों है। आत्मा जब शरीर से पृथक् हो जाता है तो ये प्रकाश न होने के तुल्य बन गया है।

आओ मेरे प्यारे! आज मैं देखो, इस आत्मा के सम्बन्ध में ऋषि ने ये प्रकट किया है कि-हे मानव! तू अपनी आत्मा को बलिष्ठ बनाने का प्रयास कर, आत्मा को बलिष्ठ वही बनाता है जो निराभिमानी रहता है, जो याग कर्म करता है, जो पंच महाभूतों के ऊपर अनुसंधान करता रहता है। बेटा! आज का हमारा वाक् क्या कह रहा है? कि हमें प्रातः कालीन्, सायं कालीन रात्रि हो, परन्तु हमें अपने जीवन को धोना चाहिए और मुनिवरो! देखो, हमें

यागकर्म करना चाहिए। जिससे यह समाज पवित्र बन जाए, राष्ट्र में एक महानता आ जाए, मेरे प्यारे! देखो, याग कर्म ही, ये आत्मा का याग होना चाहिए। राजा जनक के यहाँ ब्रह्म याग होता रहता था और ब्रह्म यागी जो पुरूष हैं वह इस सागर से बेटा! पार हो जाते हैं।

आओ, मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ। विचार ये देने के लिए आया हूँ कि प्रत्येक मानव को अपने जीवन को ऊँचा बनाना चाहिए। अब मेरे प्यारे महानन्द जी को शब्दों की वेदना कर पाएंगे।

पूज्य महानन्द जी :-ओ३म् तनु मां हिरण्य गच्छन् रूद्रां जायत्वा मया

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! अभी-अभी कुछ आत्मा की चर्चा कर रहे थे। मानो आत्मा में ही अमृत की वृष्टि कराते हुए, हमें ऐसा दृष्टिपात हो रहा था जैसे हम राजा जनक की यज्ञशाला में विद्यमान है। ऐसा प्रतीत हो रहा था परन्तु आज मैं कोई विशेष वाक् प्रकट कराने नहीं आया हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव! मैं एक याग का आयोजन दृष्टिपात् कर रहा था। आत्मा प्रसन्न हो रहा था। कि यागों का चलन मानवीय जीवन में, मानो अग्रणीय होना चाहिए। आज मैं यजमानों को आशीर्वाद क्या अपने उद्गार देता रहता हूँ। हे यजमानो! तुम्हारे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और तुम्हारे गृह में द्रव्य का सदैव प्रयोग होता रहे। क्योंकि द्रव्यों का सदुपयोग होना, याग कर्म में परिणत होना देव पूजा में ये तुम्हारा सौभाग्य है। मानो इस सौभाग्य के साथ आज मैं उच्चारण करने आया हूँ कि आज का जो मानव है वह इसे पाखण्ड की दृष्टि में परिणत कर लेता है। परन्तु मैं यह कहा करता हूँ हे भोले प्राणी! मानो देखो, इस पाखण्ड की कोई वेदना नहीं कर पाया है। पाखण्ड किसे कहते हैं? इसकी कोई मानो देखो, वेदना नहीं कर पाया है।

रक्तभरी क्रान्ति

विचार विनिमय में क्या आज केवल मेरा यही वाक् है। कि मैं यजमान को अपने हृदय में वेदना प्रकट कर रहा हूँ क्योंकि वह समय निकट आ रहा है जब मानो देखो, यहाँ रक्त की क्रांति आने वाली है, वह समय दूरी नहीं है, जब यहाँ रक्त की क्रांति आने वाली है इस संसार में, इस पृथ्वी पर मानों देखो, वायुमण्डल दूषित बनता जा रहा है। विज्ञान त्रासमय बन रहा है परन्तु मैं यह उच्चारण करने आया हूँ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को-हे मेरे देव! मानो देखो, ये आज का वायुमण्डल मानो यागों से ही पवित्र होता है। यागो की धृत अग्नि में प्रवेश करने से वायु पवित्र होती है। वायुमण्डल में अग्नि ओत-प्रोत हो जाता है। इसी प्रकार आज मैं विशेष चर्चा नहीं, परन्तु यही कि आज मानव अपने जीवन को महान बनाता हुआ, हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, ये वाक् इन वाक्यों के साथ मैं आज कोई विशेष चर्चा देने नहीं आया हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव से मैं केवल यही वाक् प्रकट करता रहता हूँ कि अपने उद्गार मानव के जीवन में महान होने चाहिए और मैं सदैव इन वाक्यों को उद्गारों को देता रहता हूँ अब मैं आज्ञा पाऊंगा।

मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने कुछ दो ही शब्द उच्चारण किए। परन्तु कोई वाक् नहीं जैसे यजमान का सौभाग्य अखण्ड बनाने के लिए मेरे पुत्र ने वर्णन किया है। आज मेरा भी ये कर्त्तव्य बन जाता है कि मेरे जीवन की सदैव यह आभा बनी रहती है। कि हे यज्ञमान! तेरे जीवन के सौभाग्य में आभा प्रकट होती रहे। द्रव्याणां प्रतिसतं मानो देखो, द्रव्य से परिणत होनी चाहिए। आज का वाक् अब समाप्त होने जा रहा है।

आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या कि प्रत्येक मानव को अपनी आत्मा को बलिष्ठ बनाना है जीवन को ऊँचा बनाते हुए संसार रूपी सागर से पार होना है। यहाँ आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन-पाठन-ओ३म् व्रतिमा रथं आभ्यां रुद्रश्चमः मां धेनु गतः इदं सर्वाः। ओ३म् देवं मयाः मयंचनः रूद्राः। ओ३म् सर्वं रुद्राः मां दृतं देवाः। 07.10.81

अध्यात्मवाद

पृष्ठ ४३ से ८३

५ राष्ट्र की उज्ज्वलता—13 10 1981

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा। आज हमने पूर्व से, जिन वेद मंत्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में, उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाता जाता है। क्योंकि प्रत्येक वेद मंत्रः उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है। जिस प्रकार माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा है, उसी प्रकार प्रत्येक वेद मंत्रः उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है। अथवा वह जो आनन्दमयी, स्रोतमयी, आभामयी जो मेरी प्यारी माता वसुन्धरा है।

वसुन्धरा

वर्णन किया जाता है वह मेरी प्यारी कैसी वसुन्धरा है? जिसके गर्भस्थल में बेटा! ये संसार वशीभूत हो रहा है। जिस प्रकार माता के गर्भ स्थल में मानों बालक के अंग प्रत्यंग का निर्माण हो रहा है। इसी प्रकार इस माता वसुन्धरा के गर्भ स्थल में, नाना लोक लोकान्त्रों का निर्माण अथवा ये जो विशाल जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है ये उसमें वशीभूत हो रहा है।

तो आओ, मेरे पुत्रो! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूँ, केवल कुछ परिचय देने के लिए आया हूँ। और वह परिचय क्या? कि हमारा वेद मंत्र नाना प्रकार की आभाओं का वर्णन कर रहा है। जब हम एक-एक वेद मंत्र के ऊपर विचार विनिमय में प्रारम्भ करते हैं तो इस संसार का ज्ञान, विज्ञान हमें दृष्टिपात् आने लगता है। क्योंकि प्रत्येक मानव ज्ञान और विज्ञान की चर्चा करता रहता है। जहाँ ज्ञान और विज्ञान की विवेचना आती रहती है। वहाँ आज का हमारा वेद मंत्र राष्ट्र के ऊपर भी कुछ वार्ता प्रकट कर रहा है।

राष्ट्र निर्माण में बुद्धि जीवी

बेटा! राष्ट्रो के ऊपर भिन्न-भिन्न प्रकार की कल्पनाएं होती रहती है। जिनके ऊपर ऋषि मुनियों ने बहुत ऊंची उड़ान उड़ी है। इससे पूर्व काल में हमने तुम्हें, प्रकट कराया था कि विचार विनिमय में करने वाले बुद्धिमान होते हैं, बुद्धिजीवी होते हैं। वे बुद्धिजीवी एकत्रित होकर के उस परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में, ये जो जितना भी ये जगत अथवा इस जगत के नीचे जितनी भी छाया है और उसमें राष्ट्र हैं उनके ऊपर बेटा! विवेकी पुरूष परम्परागतों से विचार विनिमय में करते रहे हैं। जबसे भी राष्ट्र का निर्माण हुआ इस संसार में मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है। सबसे पूर्व भगवान् मनु ने बेटा! राष्ट्र का निर्माण किया। और भगवान् मनु ने चारों वर्णों को व्यवस्थित किया। समाज को चारों भागों में विभक्त कर दिया था। मानो देखो, उससे कुरीतियाँ भी आती रहती हैं। भिन्न-भिन्न अकर्त्तव्यवाद भी आते रहे हैं।

आओ, मेरे प्यारे! अकर्तव्यवाद में भी तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार विनिमय में क्या? हमने बहुत पुरातन काल में मेरे पुत्रो! मैं तुम्हें त्रेता के काल की वार्ता प्रकट कराता रहा हूँ और उसमें विचार विनिमय में होता रहा है कि हमारे यहाँ रावण जैसे आताताययियों को समाप्त करने के लिए अथवा उनके अकर्त्तव्यवादी राष्ट्र को समाप्त अथवा उसको कर्त्तव्यवाद में लाने के लिए हमारे ऋषि मुनियों ने जितना तप किया अथवा उनका इतना ऊर्ध्वा में सहयोग रहा है। उसके ऊपर बेटा! हमें विचार विनिमय में करना चाहिए जैसा हमारा ज्ञान और विज्ञान राष्ट्रवादी मानो देखो, वेद मंत्रों में आभामयी प्रगट होता रहा है।

मानव की सम्पदा

तो बेटा! आज मैं तुम्हें कहीं विशेष चर्चाओं में नहीं ले जा रहा हूँ आज का हमारा वैदिक साहित्य अथवा

अध्यात्मवाद

वेद के मंत्रों को विचारने से प्रतीत होता है कि ये विज्ञान, मानव की सम्पदा रही है। मानो ये ज्ञान और विज्ञान मेरी प्यारी माताओं का एक गहना बनकर रहा है जैसे माता आभूषण को सजाती है पदार्थ स्वीकार करती है। इसी प्रकार मेरी प्यारी माता का ये मानो गहना बनकर के रहा है, ये आभूषण बनकर के रहा है, ज्ञान और विज्ञान। मेरी प्यारी माता के गर्भस्थल में हम जैसे प्यारे पुत्रो का निर्माण होता रहा है, होता रहता है। परन्तु जब मेरी माता इसके ऊपर विचार विनिमय में करती है तो ये उसका गहना बन करके रहता है। ये माता का आभूषण बन जाता है। इसीलिए बेटा! मेरी प्यारी माताएँ परम्परागतों से इस विद्या को जानने वाली थी। ज्ञान और विज्ञानमयी इस मानव समाज का, मानव का जो निर्माण होता है, बालक का जो निर्माण होता है वह माता के गर्भ स्थल में होता है। तो बेटा! माताएँ विचार विनिमय परम्परागतों से करती रही है। जहाँ माताएँ मेरे प्यारे! देखो, इसमें से कारिता बनी है कि हमारे गर्भस्थल में बालक का निर्माण हो रहा है। उस ज्ञान और विज्ञान को हमें जानकर के अपना आभूषण बनाना है। जहाँ इसमें, उनका सहयोग रहा है। वहाँ मेरे पुत्रो! राष्ट्रवाद में विशेष सहयोग रहा है।

जीवन में तप

मुझे स्मरण आता रहता है जब बेटा! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के यहाँ भगवान् राम, लक्ष्मण विश्वामित्र के सहित बेटा! ज्ञान और विज्ञान की वार्ताएँ और विज्ञान की उड़ान उड़ते रहे। बेटा! छः माह तक ब्रह्मचारी सुकेता ने, ब्रह्मचारिणी शबरी ने और भगवान् राम ने मेरे पुत्रो! नाना यंत्रों का निर्माण किया। वह काल जब मुझे स्मरण आने लगता है तो हृदय गद्-गद् हो जाता है कि हमारे यहाँ ब्रह्मचर्य व्रतों को धारण करने वाले ब्रह्मचारियों ने अपने जीवन में कितना तप किया। क्योंकि वह यंत्रों का निर्माण करना, मानो धातु पदार्थों को जानना और वायुमण्डल में मेरे प्यारे! नाना लोक लोकान्तरों में अपना यातायात बनाना, ये मानव के मस्तिष्कों में विज्ञान परम्परागतों से ही राष्ट्रीय सम्पदा बन कर रहा है। मुझे बेटा! वह स्मरण है भगवान् राम ने जब अहिल्या कृतिभा यंत्रों का निर्माण किया और महर्षि विश्वामित्र ने मेरे पुत्रो! देखो, धनुर्याग किया। धनुर्याग करने के पश्चात् मुनिवरो! देखो, भारद्वाज मुनि के यहाँ नाना प्रकार की विद्याओं के पान करने के पश्चात् उन्होंने जब अयोध्या के लिए गमन करने से पूर्व बेटा! वह मानो देखो, राजा जनक हमारे यहाँ परम्परागतों से ही अध्यात्मवाद में भी और राष्ट्रीय पालन, पोषण करने में भी उनका एक आदर्श रहा है। मुझे वह राजा जनक का काल स्मरण है। जब राजा जनक मेरे प्यारे! देखो, कृषकों ने मुनिवरो! देखो, अकर्त्तव्यवादी बन गये। कृषकों ने अन्न की उत्पत्ति करने में अपना सहयोग नहीं दिया राष्ट्र को। तो अब राजा जनक ने विचारा हमें क्या करना चाहिए।

राजा जनक का कौशल

तो राजा जनक ने मेरे पुत्रो! स्वर्ण का एक हल बनाकर निर्माणित करते हुए, उन्होंने बेटा! पृथ्वी में गऊ के बछड़ों को लेकर के माता वसुन्धरा के द्वार पर पहुंचे। तो मेरे पुत्रो! देखो, माता वसुन्धरा ने मानो देखो, अप्रतम् वृष्टि होने लगी। मानो एक आभामयी उनका राष्ट्र बन गया।

जहाँ राजा जनक मानो देखो, कृषक बने, वहाँ ब्रह्मवेता भी इसी प्रकार के विशाल थे। राजा जनक के यहाँ नित्यप्रति याग होता रहता था। वे देव पूजा वाला याग भी और मुनिवरो! देखो, ब्रह्म याग भी होता रहा है। उनके यहाँ ऋषि मुनि आते रहते और ऋषि मुनि यही निर्णित कराते कि आत्मा को जानने का प्रयास करो। मानो "जानाति जन्मे जन्म ब्रह्मणाः" क्योंकि ज्ञान होना चाहिए और ज्ञान के बिना, कोई राष्ट्र, महान नहीं कहलाता। तो मेरे प्यारे! उनकी सभा में चाक्राणी गार्गी आती रहती।, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ब्रह्मवेता थे। महाराजा अष्टावक्र, महाराजा अश्वल, महाराज अर्धभाग, महाराजा ऋद्ध और भी नाना ऋषियों का बेटा! आगमन होता रहा है। वैशम्पायन इत्यादि भी आकर के मेरे प्यारे! उनके यहाँ ब्रह्मयाग करते रहे हैं।

ब्रह्मयाग

ब्रह्मयाग का अभिप्राय क्या है? हम ब्रह्मयाग किसे कहते हैं? ब्रह्मणाति ब्रह्मो लोकं ब्रह्मणे ब्रह्मणाः मेरे प्यारे! ब्रह्मयाग वह है जहाँ राजा के राष्ट्र में ब्रह्म चर्चाएँ होती रहे हैं अथवा ब्रह्म याग होते रहे। ब्रह्म याग का अभिप्राय ये है ब्रह्मणो लोकां ब्रह्मण वृत्तिः देवाः। मेरे पुत्रो! देखो, जहाँ ब्रह्मयाग होता रहता है वहाँ राजा का राष्ट्र कितना पवित्र माना गया है।

आओ, मेरे प्यारे! आज जब हम ब्रह्मयाग की चर्चाएं करते हैं तो प्रायः हृदय गदगद् हो जाता है। चाक्राणी गार्गी बेटा! नाना प्रकार की ब्रह्म विवेचनाएं करती रही है। मुनिवरो! देखो, राजा जनक के यहाँ ब्रह्मयाग सदैव होता रहा।

मेरे प्यारे! उसी राजा जनक के यहाँ बेटा! देखो, राज स्वयंवर हुआ। मानो देखो, सीता, उर्मिला इत्यादि चार पुत्रियाँ थी राजा जनक के यहाँ, जिनका संस्कार अयोध्या पुरी में राजा दशरथ के यहाँ मानो रघुवंश में मेरे प्यारे! देखो, कृत्यस्तां ब्रह्मणे क्रोताः मुनिवरो! देखो, उनके द्वारा, उनका संस्कार हुआ। संस्कार होने के पश्चात् मेरे पुत्रो! जब राम, राज्य में आ गए, अयोध्या में आ गए ज्ञान और विज्ञान की शिक्षा पाने के पश्चात् तो मुनिवरो! देखो, ऋषि मुनियों की पुनः एक सभा हुई। ऋषि मुनियों की ऐसी सभा हुई जिसमें बेटा! सर्वत्र विवेकी पुरुष आ पहुँचे।

रावण के विषय में विचार

महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज से वैशम्पायन और कुक्कुट मुनि ने ये प्रश्न किया कि-महाराज यदि राम को अयोध्या का राज प्राप्त हो जाता है, अयोध्या के नरेश बन जाते हैं तो ये जो आततायी रावण का राष्ट्र चला आ रहा है तो इसका क्या बनेगा? तो महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने कहा-भई! इसके ऊपर मानो बुद्धिमानों का विचार विनिमय में होना चाहिए।

मेरे पुत्रो! उनका विचार विनिमय में होता रहा। मानो प्रातःकाल एक दिवस तो प्रातः काल से सायं काल तक, उनका विचार विनिमय में होता रहा। महाराजा शिव को भी निमन्त्रण दिया और यह निश्चय हुआ कि भई, महाराजा शिव की अध्यक्षता में यह सभा होगी। देव ऋषि नारद और भी नाना ऋषि, महर्षि कुक्कुट और ब्रह्मचारी कवन्धी गार्गेय भी बेटा! उस सभा में विद्यमान थे। मानो देखो, एक समय तो महात्मा दधीचि भी आश्रम में आ गए और महात्मा दधीचि ने क्योंकि भयंकर वनों में वह सभा थी और सभा में यह निश्चय हुआ कि कोई रूप रेखा ऐसी निर्माणित की जाए जिस रूप रेखा से राम को राजतिलक न प्राप्त होकर के भयंकर वनों में, अपने जीवन को तपश्चर में व्यतीत करते हुए और रावण जैसे आततायी को जिनका राष्ट्र मानो विशाल है। जिनके राष्ट्र में सूर्य न अस्त होता है न उदय होता है। ऐसे राष्ट्र में जो त्रास किया जा रहा है समाज का, मानो बुद्धिजीवी प्राणियों पर आक्रमण हो रहे हैं। बुद्धिमानों पर आततायी अत्याचार मानो ये नहीं होने चाहिये। क्योंकि राजा के राष्ट्र में जहाँ विज्ञान है, जहाँ नाना प्रकार की आभाएं हैं, वहाँ और भी नाना चर्चाएं होती रहती हैं। परन्तु उन चर्चाओं के स्वरूप में भी देखो, चरित्र की हीनता नहीं होनी चाहिए।

मेरे प्यारे! जब ये वाक् उनकी सभा में, ऋषि मुनियों की, तो ब्रह्मचारी कवन्धी ने मानों ये कहा, उस सभा में, कि राम को राजतिलक नहीं होना चाहिए। क्योंकि सूक्ष्म-सा अयोध्या का राष्ट्र रह रहा है और यदि ये भी मानो देखो, राजा बन गए तो ऐश्वर्य में परिणत होना ऐसे पुरूषों के लिए मानों देखो, रावण जैसे आततायियों को समाप्त नहीं कर सकते। मेरे प्यारे! तो महाराजा शिव ने महर्षि वशिष्ठ से कहा कि यह कैसे किया जाए? मानो इसकी रूपरेखा बनाई जाए, निर्माणित की जाए। क्योंकि राजा दशरथ तो उतावले हो रहे हैं कि मेरे पुत्र राम को राष्ट्र

प्रदान कर दिया जाए। उनका राज्याभिषेक कर दिया जाए जिससे वह प्रजा का पालन कर सके। मेरे प्यारे! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने भी यही कहा-ऐसा ही राजा दशरथ के मनोनीत हृदय में है।

महारानी कैकेयी का सभा में आगमन

तो मेरे प्यारे! यह विचार हुआ की किसी प्रकार उनकी जो मानो देखो, पूर्वा अप्रतम उनकी पत्नी है कैकेयी, उसको एक समय सभा में लाया जाए। तो बेटा! वह सभा अगले दिवस के लिए नियुक्त की गई। और वह सभा जब नियुक्त की गई तो मानो उसमें राजा दशरथ के यहाँ जो राजलक्ष्मी थी मानो कैकेयी को इस सभा में लाया गया और कैकेयी जब मानो गुप्तचरों के रूप में शांत होकर के मेरे पुत्रो! सभा में आई तो मानो देखो, देवी ने सर्वत्र सभा का, बुद्धिमानों का, ऋषि मुनियों का, महाराजा शिव इत्यायियों का बेटा! उन्होंने आदर किया। अब उनका सत्कार होने लगा अद्यतं ब्रह्मणां प्रथमं देवत्यां लोकां हृदयानि गच्छतम्।

मेरे प्यारे! जब उन्होंने सभा में गुप्त रूप से यह वाक् प्रकट किया कि राम को राजतिलक नहीं होना चाहिए। राम को वनों में जाना चाहिए। राम क्योंकि रामं ब्रह्मणो अस्ताम् क्योंकि राम ऐसे पुरुष हैं इस काल में, जो रावण के ज्ञान और विज्ञान को समाप्त कर सकते हैं। क्योंकि भारद्वाज यहाँ विद्यमान है। भारद्वाज मुनि ने ये संकल्प कर लिया है कि मेरे यहाँ जितना भी ज्ञान और विज्ञान का वरूणास्त्र है, ब्रह्मास्त्र है। नाना अस्त्र शस्त्र है। मैं उन्हें राम को प्रदान कर सकता हूँ।

मेरे प्यारे! कैकेयी ने कोई उत्तर नहीं दिया और कैकेयी ने सब की वार्ताओं को स्वीकार करते हुए, मेरे प्यारे! देखो, वह सभा विसर्जित हो गई। विसर्जित होने के पश्चात् कैकेयी ने अपने मन में यह विचारा कि क्या करना चाहिए? क्योंकि राम तो मेरा प्यारा पुत्र है।

मन्थरा से विचार

मेरे पुत्रो! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने और विश्वामित्र दोनों मन्थरा के द्वार पहुंचे और उस समय मन्थरा से कहा-हे मन्थरा! कैकेयी के द्वार पर तुम्हारा बड़ा आकृत रहता है। मानों तुम उनकी बुद्धि को, किसी प्रकार ऐसी सुगठित बनाओ, जिससे राम को राष्ट्र के स्थान में देखो, वन की प्राप्ति हो जाए। मन्थरा ने बेटा! वह स्वीकार कर लिया। क्योंकि मन्थरा उस समय राजा दशरथ के राष्ट्र में गुप्तचर विभाग की अध्यक्ष कहलाती थी। मेरे प्यारे! वह गुप्तचर विभाग में रहती थी, उसकी अध्यक्ष थी। क्योंकि सर्वत्र राष्ट्र का बेटा! उसे प्रतीत था। कहाँ किस स्थली पर क्या हो रहा है? वह गुप्तचर विभाग में मानो देखो, उसमें सर्वत्र राष्ट्र की अध्यक्ष बनी हुई है।

मेरे पुत्रो! यह वाक् उसने स्वीकार कर लिया। स्वीकार करने के पश्चात् अब मुनिवरो! देखो, राम को वन और भरत को अभिषेक की वेदना आई। मेरे पुत्रो! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ने राजा दशरथ को एक समय अपनी स्थली पर माता ब्रह्मणेः कृताम्। अरून्धती विद्यमान है और वशिष्ठ मुनि महाराज और अरून्धती दोनों के मध्य में राजा दशरथ विद्यमान थे। राजा दशरथ ने ऋषि से कहा, भगवन्! मेरे सुयोग्य कोई कार्य हो तो कहो? उन्होंने कहा-कि तुम्हारे लिए कार्य है कि राम को, तुम्हारा चौथापन आ गया है और चौथेपन में मानों देखो, तीसरापन भी तुम्हारा चला जा रहा है। चौथापन आने वाला है तुम राम को राज्याभिषेक कर दो। उन्होंने कहा-बहुत प्रिय। मेरे पुत्रो! उन्होंने कहा-भगवन् मैं ऋषि मुनियों की आज्ञा पाऊ। महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले-कि ऋषि मुनियों से, हमने सब विवेकी पुरुषों को एक सभा हुई है। उसमें यह निश्चय हो चुका है।

मेरे पुत्रो! राजा दशरथ ने उस वाक् को स्वीकार कर लिया। स्वीकार करते हुए मेरे पुत्रो! देखो, उन्होंने अपने गृह में, अपनी पत्नियों के सहित महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज और विश्वामित्र दोनों को निमन्त्रित करते हुए उन्होंने एक याग किया और गृह में याग करने के पश्चात् उस समय उन्होंने यह प्रश्न किया ऋषियों से, कि मेरा

चौथापन आ गया है। मेरे हृदय में अब मेरे गुरु आचार्यों की भी यह इच्छा बन गई है। देवियों! कि राम का राज्याभिषेक होना चाहिए। उन्होंने कहा बहुत प्रियतम। मेरे प्यारे! उन्हेंने एक षडयंत्र रचा, कुछ काल में, मेरे पुत्रो! देखो, महर्षि वशिष्ठ और विश्वामित्र ने देखो, भरत और शत्रुघ्न को उनके माता के विधाताओं के अपृत कर दिए। मानो देखो, वे उस गृह में चले गए, दूसरे राष्ट्र में चले गए और यहाँ राज्याभिषेक होने लगा।

तो मेरे पुत्रो! देखो, सब कार्य मन्थरा का था। उस मन्थरा ने यह षडयंत्र रचा था और ये षड्यंत्र रचने के पश्चात् मेरे प्यारे! देखो, एक समय जब राज्याभिषेक की चर्चाएँ होने लगी, तो मन्थरा ने मेरे पुत्रो! देखो, कैकेयी के द्वार पर पहुंच गई और कैकेयी ने मन्थरा का स्वागत किया। आओ, देवी! विराजो।

मन्थरा और कैकेयी की वार्ता

तो मुनिवरो! देखो, मन्थरा और कैकेयी दोनों विद्यमान हो गई। मन्थरा ने कहा-हे कैकेयी! हे देवी! हे मंगलं ब्रहे तुम हमारी स्वामिनी हो, परन्तु मैं ये जानना चाहती हूँ कि राजा दशरथ ने यह क्या विचारा है? भरत और शत्रुघ्न यहाँ दोनों नहीं हैं। अब वे राम को राज्याभिषेक कर रहे हैं। यह कैसा एक षड्यंत्र सा मुझे प्रतीत होता है? कैकेयी ने कहा-नहीं, नहीं, ऐसा नहीं मन्थरा। ये राम तो हमारा प्रिय है मानो जेठा पुत्र है, राजकुमार है इसको राज्याभिषेक हो जाना चाहिए। मेरे प्यारे! मन्थरा ने कहा-तो भरत ने इस राष्ट्र के लिए ऐसा क्या दोषारोपण कर दिया है। विधाता यहाँ नहीं है। उन्होंने कहा-कोई बात नहीं। परन्तु कैकेयी को राज से प्रियतम और मुनिवरो! देखो, राम की विशेषकर माता के रूप में कैकेयी अपने जीवन में यह स्वीकार करती रही कि राम मेरा प्रिय पुत्र है।

मेरे प्यारे! देखो, जब यह वाक् आता रहा तो मन्थरा उसे नाना प्रकार की वार्ताएं प्रकट करती रही। अंत में मन्थरा ने यह कहा कि हे कैकेयी! मेरे विचार में, हे स्वामिनी! यह आ रहा है कि राम और दशरथ दोनों का यह मानो एक रूपक है और इस रूपक के गर्भ में न प्रति क्या रहस्य है? कि भरत यहाँ नहीं है। मेरे प्यारे! अगले दिवस राम का राज्याभिषेक होने वाला था। परन्तु कैकेयी के बहुत विचार विनिमय में करने के पश्चात मन्थरा ने उनके मुखारबिन्दु को, उनकी प्रवृत्तियों को मेरे प्यारे! दूसरे मार्ग पर प्रेरित कर दिया और प्रेरित करने के पश्चात् कैकेयी ने यह कहा-कि वास्तव में मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला, जो मेरा बाल्य, मानो भरत है मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसा उसके लिए मानो एक षड्यंत्र रूपक के रूप में परिवर्तित किया। ऐसा जब उन्होंने बेटा! स्वीकार कर लिया मानो देखो, ऐसा उनके मस्तिष्क में मन्थरा ने क्योंकि वह विशेषकर मानो देखो, गुप्तचर विभाग में रहती थी।

कैकेयी का शोक भवन में गमन

परिणाम यह हुआ मुनिवरो! देखो, उन्होंने इस वाक् को स्वीकार कर लिया कि मैं राम को राजतिलक नहीं होने दूंगी। तो मेरे प्यारे! देखो, ये ऋषि मुनियों का जो एक रूपक था मानो उनकी जो प्रतिभा थी। वह बेटा! देखो, मन्थरा ने उसको साकार रूप दिया। मानो देखो, उस साकार रूप में मुनिवरो! देखो, माता कैकेयी को अस्थम् कहलाया गया। उसको सबने अस्थम् बनाया और मुनिवरो! देखो, राम को अगले दिवस मानों देखो, रात्रि के काल में राजा दशरथ को अप्रतम् ब्रह्मणाः जहाँ राजतिलक की घोषणा हो रही थी, मानो जन समाज में एक हर्ष उल्लास हो रहा था कि राम हमारे अधिराज बनेंगे। मेरे प्यारे! वहाँ कैकेयी शोक भवन में चली गई। शोक भवन में गई तो मन्थरा ने राजा दशरथ से कहा-कि महाराज! देखो, कैकेयी शोक भवन में चली गई हैं। राजा दशरथ मुनिवरो! देखो, इन वाक्यों को पान करते हुए मन्थरा के इस वाक् को बेटा! वह कैकेयी के द्वार पर पहुंचे और कैकेयी से कहा-हे देवी! तुम ऐसे शोक भवन में क्यों आ गई हो? मैं नहीं जानता तुम्हारे इस कारण को।

कौशल्या से संस्कार

उन्होंने कहा-हे भगवन्! मैं इसलिए शोक भवन में हूँ कि तुम्हें प्रतीत है कि जिस समय तुम्हारा एक संग्राम

हुआ था। तुम्हें ये प्रतीत होगा उस समय अत्रंगं ब्रह्मणाः कृतं राजा व्रतेशकेतु राजा के यहाँ ये जो मेरी भोजक प्रह्वा है जिसको हम अप्रतम् कौशल्या जी कहते हैं ये कौशल्या जी जब 'राज्यं ब्रह्मणे' देखो, राजा रावण ने देखो, समुद्र में इनको अर्पित कर दिया था और अर्पित करते हुए राजा रावण ने इनको अपने में स्वीकार कर लिया था उसे ये प्रतीत नहीं था कि इस मानो सरस्णाती अश्वोक में क्या है? मुनिवरो! देखो, उसमें कौशल्या जी विद्यमान थी देखो, राजा रावण ने यह खरदूषण को प्रदान कर दी और खरदूषण का और राजा दशरथ का देखो, उस समय संग्राम हुआ था और संग्राम होते हुए मेरे पुत्रो! कैकेयी कहती है-हे महाराज! उस समय रथ की धूरी मानो देखो, दूरी हो गई थी। मैंने अपनी हाथ की अंगुली को देखो, धूरी के स्थान में, जिससे देखो, चक्र चलता रहा। जब चक्र चलता रहा तो उस समय कौशल्या जी को हम विजय करके और अयोध्या में ले आए मानो देखो, उनसे जब आपका ये संस्कार हुआ। राजा ब्रह्मणेः महर्षि वशिष्ठ ने आपका संस्कार किया था। मानो देखो, उससे राम की उत्पत्ति हुई।

तीन वचन

आज मैं आपसे यह जानना चाहती हूँ कि उस समय वचनों को आपने यह कहा था, हे कैकेयी! तुम्हारे तीन वचन हैं इन्हें जब तुम चाहोगी, मैं तुम्हें प्रदान कर दूंगा। मैं तीन वचन देता हूँ, अब मैं देखो, भगवन्। उन तीन वचनों को आपसे प्राप्त करना चाहती हूँ। देवी। तुम वचनों को स्वीकार करो, मानो जो भी तुम उच्चारण करोगी मैं भी स्वीकार करूंगा, तुम भी स्वीकार करो। उन्होंने कहा-हे भगवन्! आप भी स्वीकार करो। उन्होंने कहा-बोलो क्या चाहती हो? उन्होंने कहा-भगवन् मैं पहले वचन में तो यह चाहती हूँ कि मेरा जो पुत्र है भरत, उसको अयोध्या का अधिराज बनाया जाए। दशरथ ने कहा-बहुत प्रिय! परन्तु दूसरे वचन में ये है कि राम को चौदह वर्ष का वन होना चाहिए।

मेरे प्यारे! जब राम के वन की चर्चाएं आई तो राजा दशरथ मेरे प्यारे! पृथ्वी पर मूर्छित हो गए और यह कहा-हे देवी! राम ने तेरा कौन-सा मानो पापाचार किया है। जो राम को तू बन दे रही है। मेरे पुत्रो! देखो, उन्होंने अपने मूर्छित में अप्रताम् पृथ्वी में ओत-प्रोत हो गए। उनके पदों की आभा यह न रही जो देखो, दशरथ अपने पगों पर मानो अपने शरीर के अंगो को उसमें अर्पित कर सके। मेरे प्यारे! देखो, वह दशरथ हाहाकार करते हुए, व्रंगम् करते हुए मेरे प्यारे! कैकेयी ने उस वाक् को स्वीकार नहीं किया।

राम का वन गमन

परिणाम क्या हुआ? मेरे पुत्रो! देखो, उसी आभा में अप्रतम् राम को ये प्रतीत हो गया था कि माता मुझे वन देना चाहती है। मानो मध्य रात्रि में उनके सेवक राम के द्वार आ पहुंचे। रामं ब्रह्मणे कृताम्। जब राम को यह प्रतीत हुआ, तो राम मेरे प्यारे! रात्रि के काल में कैकेयी के द्वार पर पहुंचे। चरणों को स्पर्श करके बोले मातेश्वरी! आपकी आज्ञा का मुझे पालन करना है। क्योंकि मेरा अंतरात्मा इस राज्याभिषेक को नहीं चाहता। क्यों नहीं चाहता था? क्योंकि मेरा जीवन अब तक ऋषि मुनियों की शरण में रहा है। और मैं राष्ट्र को ले करके मानो ऐश्वर्य में परिणत हो जाता। मैं भयंकर वनों में ऋषि मुनियों की मानो आभा में रहना चाहता था। परन्तु आपकी बड़ी अनुपम कृपा हुई मातेश्वरी! मुझे आज्ञा दीजिए, मैं प्रातः काल वन जाने के लिए तत्पर हूँ। मेरे प्यारे! देखो, कैकेयी ने कहा-प्रिय! तुम वन चले जाओ।

विधाता सेवक लक्ष्मण

मेरे पुत्रो! देखो, सब राष्ट्रीय वस्त्रों को उन्होंने माता के समीप जा करके, त्याग दिया मेरे प्यारे! देखो, जो ज्यों प्रातःकाल होता रहा। राजा दशरथ के प्राणांत होने के लिए तत्पर होने लगे। श्वासों की गति मानो धीमी हो गई। विचार होने लगा मेरे प्यारे! लक्ष्मण ने कहा हे भगवन्! मैं भी आपके समीप जाना चाहता हूँ? मेरे प्यारे!

देखो, बहुत विचार विनिमय में होने के पश्चात् राम ने यह कहा कि माता-पिता की सेवा करो। उन्होंने कहा-नहीं, विद्याता राम! मैं आपकी सेवा करने के लिए तत्पर हूँ। मेरे प्यारे! देखो, वह अपनी माता सुमित्रा से और देखो, उनकी पत्नी जो उर्मिला थी उसके द्वार पर पहुंचे। उन्होंने कहा-मैं राम की सेवा करना चाहता हूँ। मैं विधाता राम को मानो देखो, भयंकर वनों में उनको पितर स्वीकार करके और सीता को माता स्वीकार करके उनका सेवक बनकर जा रहा हूँ। माता सुमित्रा ने कहा बहुत प्रिय है। मेरे प्यारे! उर्मिला से लक्ष्मण ने कहा-देवी! मेरी इच्छा यह है कि आप भी माता सीता की सेवा तुम करो और राम की सेवा मैं करूंगा। तो उस समय मुनिवरो! उर्मिला ने बहुत ऊर्ध्वा में शब्द उच्चारण किया। उन्होंने कहा-हे भगवन्! मैं यदि आपके सहित जाऊं मानो भयंकर वनों में, तो तुम राम के सेवक नहीं रहोगे। और माता सीता के भी सेवक नहीं रहोगे और मैं वह न बन पाऊंगी। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा मैं यहाँ तपस्वी बनूंगी।

भगवान् राम का जीवन

तो मुनिवरो! देखो, वह तपस्या में परिणत हो गई। वह तपस्या करने लगी और मुनिवरो! राम और लक्ष्मण और सीता ने आज्ञा पाकर माता की उन्होंने बेटा! बहुत कुछ कहा और राम ने भी कहा। परन्तु सीता ने स्वीकार नहीं किया। वह भयंकर वनों को चली गई।

मेरे प्यारे! विचार विनिमय में क्या मुनिवरो! देखो, दशरथ का यहाँ प्राणांत हो गया और मुनिवरो! देखो, राम वन को चले गए। मेरे पुत्रो! देखो, ये आज का मैं विचार इसलिए दे रहा हूँ मैं तुम्हें परिचय दे रहा हूँ कि हमारे यहाँ राष्ट्र के लिए, राष्ट्र को उज्ज्वल बनाने के लिए समाज को महान बनाने के लिए मानो देखो, ऋषि मुनियों का कितना गंभीर विचार रहा है। इसीलिए मानव को, बुद्धिजीवी प्राणियों को राष्ट्र के सम्बन्ध में जब विचार विनिमय में किया जाता है। तब विचार आता रहता है। मेरे प्यारे! देखो, तुम्हें यह प्रतीत होगा राम जहाँ ज्ञान में मानो देखो, पारायण थे। वहीं पितृभक्ति और मातृभक्ति उनके शरीरों में उनके अंग संग बेटा! ओत-प्रोत थी। जहाँ वे पितृ भक्त थे। वहाँ मानो राष्ट्रपिता भी थे मानो राष्ट्र के प्रति उन्हें प्रीति सदा समय रहती थी। मेरे प्यारे! जहाँ राष्ट्र वहाँ विज्ञान में भी हर समय ओत प्रोत रहते थे। विज्ञान की हर समय चर्चाएँ करते रहते थे। जहाँ वे विज्ञान में पारायण थे वहाँ प्रातः काल बेटा! नित्यप्रति याग करते थे, अग्निहोत्र करते थे। देवताओं की पूजा करते रहते थे।

तो मेरे पुत्रो! मुझे स्मरण आता रहता है उनका वह काल कितना प्रिय था बेटा! जब मुझे वह काल स्मरण आता रहता है तो मैं ये कहा करता हूँ हे प्रभु! वह काल कितना पवित्र, कितना महान था जिस काल में बेटा! देखो, इतनी पितृ-मातृ भक्ति हो। मातृ प्रीति हो ज्ञान और विज्ञान में रमण करने वाले हो और वैज्ञानिक यंत्रों का निर्माण करने वाले हो। मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है भारद्वाज मुनि महाराज ने बेटा! भयंकर वनों में आकर के भी राम को बेटा! भिन्न- भिन्न.......। शेष अनुपलब्ध।13.10.1981

६ त्रिवर्धा—16 12 1981

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मंत्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में उस मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो अन्तमयी, स्रोतमयी आभामयी कहलाता है। मानो जिस प्रभु का ये अनुपम जगत् हमें प्रायः दृष्टिपात् आ रहा है। उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में मानो उस प्रभु की चेतना हमें दृष्टिपात् आ रही है। क्योंकि चाहे ये जगत् जड़वत के रूप में हो, चाहे चैतन्य के रूप में हो। परन्तु दोनों में से परोक्ष में हो और चाहे प्रत्यक्ष में। परन्तु इस सर्वत्र आभा में, उस सर्वत्र मूल में, वह मूल्यदेव मानो जिसकी प्रतिभा में ये संसार मानो उसकी आभा में निहित रहने वाला है।

बेटा! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें ये निर्णय देते हुए कहा था-कि ये संसार त्रिवर्धा कहलाया है। मानो त्रि आभा में ये रमण करने वाला ये जगत्। जिस भी काल में ये सृष्टि का सृजन होता है तो इस संसार के सम्बन्ध में, निर्णय करने वाले निर्णयवेत्ताओं ने मानो इसकी रचना का मूल भी त्रिवर्धा में माना है। वेद का मंत्र भी त्रिवर्धा में रमण कर रहा है। मानो इसीलिए हमें अपने में और प्रभु की आभा में त्रिवर्धा का पठन-पाठन करना चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः- क्या भगवन्! त्रिवर्धा से क्या अभिप्राय है आप का? (गुरुदेव) सम्भवा वस्तुतं देवं ब्रह्माः त्रिगर्भश्चतम् मानो त्रिवर्धा से अभिप्राय यह है कि इस संसार की रचना करने वाले प्रभु ने मानो तीनों गुणों का सृजन किया। जिनमें रजोगुण, तमोगुण और सतोगुण आते हैं। परन्तु इसमें एक ऐसा विचित्र नृत्य हो रहा है, जिस नृत्य के ऊपर मानो बहुत गंभीर चिंतन करने वाले ऋषि मुनि और विज्ञानवेत्ता मानो देखो, इस संसार में त्रिगुणात्मक स्वीकार करते हैं, इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड को। जिस समय अग्नि का अग्न्याधान होता है। तो अग्नि भी मानों त्रिकोण कहलाती है और अग्नि भी त्रिकोण बनकर के क्योंकि परमाणु भी तीन ही कहलाते हैं। यह जो परमाणुवाद है ये भी तीन ही होते हैं। परन्तु वायु गमन हैं और अंतरिक्ष में वह गति करती है। परमाणुओं को लेने वाली वायु है और वह गति कराती हैं और यह जो अवकाश है उसमें परमाणु गति करते हैं।

प्रभु की रचना

तो इसीलिए ये प्रभु की रचना मानो त्रिवर्धा कहलाती है। इसी प्रकार तीनों में त्रि में रमण करने वाला त्रिमात्राएँ। जितनी भी संसार की लेखनियाँ हैं। मानो चाहे वे किसी भी देवभाषा में हों। चाहे जन जीवन की भाषा में हो। चाहे वे सूर्य मण्डल के प्राणियों की भाषा हो, चाहे वे किसी भी लोक लोकान्तरों में रहने वाला प्राणी हो परन्तु सर्वत्र भाषाओं में त्रि-मात्रा कहलाती है और त्रि-मात्रा वाला शब्दः मानो एक ओ३म्ः बन करके रहता है और तीन ही संसार में व्याहृति मानी जाती है। परन्तु व्याहृति में तीन है सम्भवाः बन्धनम् मानो जैसे भूः, भुवः स्वः। ये तीन व्याहृति मानी जाती है। तो यह त्रिवर्धा संसार कहलाता है। परन्तु प्रत्यक्ष में भी तीन ही दृष्टिपात् आते हैं। रचना, रचयिता और भोग, ये तीन कहलाते हैं। परन्तु देखो, इसी प्रकार तीन प्रकार के परमाणु है जो वैज्ञानिकों के मध्य में आया है। संसार का जितना भी विज्ञानवाद अब तक हुआ है। चाहे वह राम के काल से ले करके वर्तमान काल तक ले लिया जाए। चाहे वे विष्णु राष्ट्र सतोयुग के काल से लेकर के त्रेता के काल तक ले लिया जाए परन्तु ये संसार में जितना भी विज्ञानवाद हुआ है। उसमें तीनों परमाणुओं की प्रतिभा की जाती है। तीन प्रकार के परमाणुओं का आभास किया है। तीन प्रकार के परमाणुओं में सर्वत्र तरंगे ओत-प्रोत हैं। तरंगे भी तीन प्रकार की हैं। ऊर्ध्वा, अन्वेषणाः, कृतिका, मानो ये तीन प्रकार की तरंगे होती हैं। जिनसे ये ब्रह्माण्ड तरंगित हो रहा है। और मानव समाज भी इसी में तरंगित हो रहा है। परन्तु देखो, जैसा तुम ये गम्भीरता से जानना चाहते हो, कि मैंने

बेटा! तुम्हारी प्रेरणा के आधार पर ये त्रिवर्धा शब्द और विषय को लिया है। ये त्रिवर्धा जो शब्द हैं मानो देखो, ये संसार केवल त्रिवर्धा में दृष्टिपात् आ रहा है।

त्रिकोण यज्ञशाला

पूज्य महानन्द जीः क्या भगवन्! एक समय आपने हमें ये वर्णन कराया था कि त्रिकोण यज्ञशाला होती है और चतुष्कोण भी होती है और पंचम कोण का भी आपने वर्णन किया। परन्तु आपने चौबीस (24) कोणों से ले करके और भिन्न-भिन्न प्रकार के कोणों की विवेचना आपने की, परन्तु उन विवेचनाओं में, मैं आज त्रिकोण के सम्बन्ध में ही आपसे प्रश्न करने वाला हूँ और वह यह कि बहुत पुरातन काल हुआ, जब एक समय हम सब विद्यमान थे तो उस समय एक त्रिकोण याग की रचना की गई। बहुत पुरातनकाल काल हुआ परन्तु त्रिकोण का अभिप्राय क्या है, और इन नाना कोणों की चर्चाएं तो मैं पुनः ही करूंगा। क्योंकि हमारे यहाँ सबसे प्रथम चारों कोणों का सर्विदम् अब्रहात कहा जाता है और उसके पश्चात् ईशान और उत्तरायण और पश्चिमान्त और दक्षिणान्त मानो देखो, इनके कोणों को ले करके छः और आठ कृतिका बनती हैं जैसा आपने पुरातन काल में वर्णन किया हुआ आठ कोणों वाला याग बन जाता है। परन्तु इसमें जैसे भगवान् ने, परमपिता परमात्मा ने यह जगत रचा है। तो इस ब्रह्माण्ड की रचना में मानो नौ विरान कहे जाते हैं और नौ विरान मानव के इस शरीर में भी आपने किसी काल में वर्णन किया। परन्तु देखो, उन कोणों में, उन आभाओं में सबमें बहुत पूर्व में विज्ञान की तरंगे हमें दृष्टिपात आयी थीं। अब हम आपसे यह जानना चाहते हैं। कि त्रिकोण का अभिप्राय क्या है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! यह तो बहुत पुरातम काल में ये वाक् सब निर्णय हो चुके हैं। ये बहुत समय व्यतीत हुआ था जब एक समय राजा रावण के यहाँ भी एक सभा हुई थी और राजा राम के यहाँ भी एक सभा हुई तो उसमें जितने भी वैद्यराज थे, राजा रावण के यहाँ सुधन्वा नामक जो वैद्यराज थे उनको प्रायः दृष्टिपात् नहीं किया गया। महात्मा भुञ्जु के दोनों पुत्र अश्विनी कुमार थे। अश्विनी कुमारों के गुरु थे त्रेतकेतु ऋषि। वे आयुर्वेद के मर्म को जानते थे। परन्तु वे भी उस सभा में विद्यमान थे और महाराजा कुंभकर्ण और मेघनाद अहिरावण को भी आयुर्वेद में पूर्ण विज्ञान इनके समीप रहता था तो मानो वे भी उस सभा में आए।

तो सभा में ये विचार विनिमय होने लगा कि मानव के जो शब्द है यज्ञशाला में विद्यमान हो करके यजमान के शब्द मानो अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वे कुछ लोकों में रमण करते हैं। जिन लोकों से मानव के जीवन का प्रायः सम्बन्ध होता है।

लोको की उड़ाने

जैसा पुरातन काल में माता अरून्धती और वशिष्ठ मुनि महाराज जब दोनों याग करते थे तो वे वैज्ञानिक तन्तुओं को लेकर के याग करते थे। तो मानो उनके विचारों की तरंगे अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, वे बृहस्पति लोको तक उड़ान उड़ते थे। परन्तु दोनों उन तरंगों के ऊपर चिंतन भी करते थे। मानो बृहस्पति में अरून्धती मण्डल में, और वशिष्ठ मण्डल में मानो देखो, इन तीनों लोकों में उनकी उड़ान विशेष कर रही थी।

विभिन्न लोको से जीवन का सम्बन्ध

तो उन्होंने यह निर्णय किया है इस सम्बन्ध में, कि हमारे जीवन का जो सम्बन्ध है वह लोक लोकान्त्रों से विशेषकर माना गया है। क्योंकि परमपिता परमात्मा ने यज्ञ सृष्टि का सृजन किया था। तो पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एक भी कल्पना की है। पिण्ड और ब्रह्माण्ड की एक कल्पना होने से मानो देखो, उन यागों का, लोकों का इस शरीर रूपी याग से विशेषकर समन्वय हुआ। परन्तु रहा यह कि ये पूर्ण, किन प्राणियों को, विशेषकर इनकी जानकारी होती है।

मानो जैसा मैंने बहुत पुरातन काल में बेटा! तुम्हें निर्णय भी कराया था और वह वाक् भी आया था। एक समय में कि राजा राम के यहाँ वह जो सभा हुई वैद्यराजों की, तो वैद्यराज सब एकत्रित हो करके यज्ञशाला में विद्यमान हो करके जब याग करने लगे और जब याग की प्रतिभा आने लगी, तो उन्होंने त्रिकोण याग का मानो देखो, निर्माण किया और उन्होंने वेद के मंत्रों को लेकर के और त्रिवर्धा को लेकर के एक याग का आयोजन किया। परन्तु इस याग को लेकर के इसी याग की प्रतिभा को लेकर के महाराजा कुम्भकरण ने त्रिकोण याग हिमालय की कन्दराओं में एक विज्ञानशाला की आभा में मानों वहाँ एक याग करते थे। और उसके पश्चात् वैद्यराज जो औषधियों की तरंगों को जानना चाहते हैं। औषधि विज्ञान को जानना चाहते हैं। औषधि विज्ञान में रुग्णों को जानना चाहते हैं तो वे भी त्रिकोण याग मानो प्रायः होता रहा है। राजाओं के यहाँ भी इस प्रकार का विधान माना गया है। क्योंकि मुझे बहुत पुरातन काल में यागों के सम्बन्ध में, बहुत अध्ययन करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है।

ब्रह्मचर्य व्रत

परन्तु यदि यजमान यह चाहता है कि मैं त्रिकोण यज्ञशाला में याग करना चाहता हूँ तो उस प्रकार का कुछ विधान भी होना चाहिए उसी प्रकार का साकल्य भी होना चाहिए। परन्तु उसमें विशेष कर तो साकल्य होता है। और वह साकल्य होता है जिसमें अग्नि और जलतत्व दिव्य औषधियों में प्रधान होते हैं। मानो देखो, जल और अग्नितत्व औषधियों में प्रायः पाये जाते हैं। तुलसी कृतिका एक औषधि होती है। गोणकृतिका अन्वेषणी एक औषधि होती है। पीपल की समिधाएँ होती है और मजीद होता है, सुन्नकांच कुरूत होता है और बहुत-सी औषधियाँ इस प्रकार की होती है जिनमें अग्नि प्रधान होती है। परन्तु कुछ औषधि होती हैं जिनमें जल प्रधान होता है। तो वह औषधि उन तरंगों को जो यज्ञशाला में विद्यमान होते हैं। वे जब याग करते हैं तो मानों देखो, जल की मात्रा को लेकर के, कुछ जलों में औषधियों का मिश्रण करके मानो कलश अस्वात् स्थिति किए जाते हैं उनके स्थित करने पर उन औषधियों का मानो देखो, वे अग्नि की तरंगे वहाँ मिलान करती हैं तो जल का शोधन किया जाता है। उसमें पीपल, दाख, कंच, शानकेतु, चन्दन इत्यादियों की कुछ समिधाएँ होती हैं। परन्तु देखो, उनकी तरंगे जल के ऊपर और देखो, अग्नि की औषधियों को, जिसमें अग्नि तत्व प्रधान होते हैं। वह औषधि अग्नि में मिश्रित हो जाती है। परन्तु मिश्रित होने से मानो यज्ञ का देखो, प्रारम्भ होता है। याग में यजमान को भी मानो ब्रह्मचर्य व्रत में रहना चाहिए। ब्रह्मचर्य व्रत का अभिप्राय यह है कि ब्रह्म में अपने श्वास को मानो देखो, प्राण और मन दोनों का एक सन्निधान, सम्मिलान मानो देखो, श्वास की प्रतिभा उसमें ब्रह्मवर्चोसि में बिंदी होनी चाहिए। ब्रह्मचर्य का अभिप्राय केवल इतना ही है कि प्रत्येक श्वास की प्रतिक्रिया उस ब्रह्म में पिरोयी होनी चाहिए। उस ब्रह्म में पिरोयी होने से उसका ब्रह्मचर्य व्रत मानो देखो, पुष्टिकारक बन करके वह अपने में औषधिकृत कहलाता है। परन्तु जो ब्राह्मण, कर्मकाण्डी, पाण्डितव होता है उसके द्वारा भी ब्रह्म का चिंतन और ब्रह्मवर्चासि रहना चाहिए।

कुम्भकरण

परन्तु देखो, पुरातन काल में तो पुत्रो! मुझे स्मरण है कि राजा राम के यहाँ जब वह याग हुआ था तो उस याग में मानों देखो, राजा रावण ने अपने विधाता कुम्भकरण और कुम्भकरण जी की पत्नी थी मानो देखो, जिसका नाम शुभभोमकेतु कहलाता है। शुभभोमकेतु मानो देखो, हिमालय के पाल्य एक राजा थे, जिनका नाम श्वेतकेत कहलाता था वह उनकी कन्या थी। वह वेद की विदुषी होने से क्योंकि वह महर्षि श्वांककेतुक ऋषि के द्वारा अध्ययन करती थी। परन्तु उनके अध्ययन करने का विषय, वेद का बड़ा विचित्र रहा और उनके मानो देखो, राजा के मन में यह संकल्प जागा था, किसी काल में कि मेरी कन्या का संस्कार ऐसे राजकुमार से होना चाहिए, ऐसे वैज्ञानिक से

होना चाहिए मानो देखो, जो दोनों का जीवन सम में व्याप्त होना चाहिए, परन्तु देखो, उनका संस्कार राजा ने लंकेश्वर मानो देखो, महाराजा पुलत्स्य मुनि के पौत्र कुम्भकरण के यहाँ उनका संस्कार हुआ। क्योंकि कुम्भकरण त्रि, ओ३म् में प्रातःकाल नित्यप्रति याग करते थे। और कन्या भी मानो देखो, उनकी पत्नी जिससे उनका संस्कार हुआ वह भी इसी प्रकार का याग करती थी। परन्तु दोनों के याग का परिणाम, उनके याग का परिणाम ये कि उनकी विचारधारा देखो, लोक लोकान्तरों में भ्रमण करती थी और उसके पश्चात् मानो देखो, त्रिकोण याग की दशा में महाराजा कुम्भकरण की परिवर्तित हो गई। जब परिवर्तित हुई तो उन्होंने त्रिकोण यज्ञशाला के आकार का उन्होंने एक यंत्र का निर्माण किया। त्रिकोण यंत्र का निर्माण किया, जिस यंत्र में मानव के चित्र आने लगे। मानो देखो, जैसे वे याग करते थे त्रिकोण में तो जिस भी लोक में वह शब्द गति करता था चित्र के सहित मानो देखो, उन्होंने जिस यंत्र का निर्माण किया था, उसमें मानो देखो, उसकी छाया आती रहती थी।

तो मैं बेटा! तुम्हें ये वाक् दूरी नहीं ले जाना चाहता हूँ। कि विचार ये देने के लिए आया हूँ कि राजा रावण के यहाँ एक त्रिकोण यज्ञशाला का निर्माण हुआ। जिसमें अश्विनी कुमार, महाराजा सुधन्वा और याग में यजमान का जो निर्वाचन हुआ तो वह महाराजा कुम्भकरण का हुआ और महाराजा कुम्भकरण और उनकी पत्नी जब दोनो विद्यमान हो गए मानो दोनों के विद्यमान होने से मेरे पुत्रो! देखो, श्वंजनं वृति कस्सुतां देवाः जब दोनों याग का प्रारम्भ करने लगे तो उस याग के जो ब्रह्मा बने थे, उस याग में जिन ब्रह्मा का निर्वाचन हुआ। मेरे प्यारे! वह गोलंगगेत केतु ऋषि महाराज थे। गोलंगगेतकेतु ऋषि महाराज अंगीरस गोत्रीय कहलाते थे।

रूग्ण विनाशक तरंगें

मानो देखो, जब याग प्रारम्भ हुआ, याग के जब मंत्रों का उच्चारण हुआ तो उच्चारण करते-करते मेरे प्यारे! देखो, उसमें से भिन्न-भिन्न प्रकार की तरंगों का जन्म होने लगा। मानो देखो, उस यज्ञशाला में से रूग्णों का विनाश होने वाली तरंगों का जन्म होने लगा। मानो देखो, आयुर्वेदाचार्यों ने नाना प्रकार के यंत्रों का मानो देखो, नाना प्रकार की अपनी विचार धाराओं का उस याग में परिणत कराया। मेरे प्यारे! देखो, कलश विद्यमान है उन्होंने स्वर्ण के कलश और स्वर्ण के कलशों में धातु पिपाद मानो जैसे ताम्रपत्र है, चान्द्रकेतु पात्र है और भी कुछ धातु इस प्रकार की उन्होंने कलशों का निर्माण किया। मानो देखो, वह जल उस त्रिकोण यज्ञशाला में जब उसका विधान हुआ मानो उसको प्रतिपादित किया गया तो उस जल में मुनिवरो! देखो, केशरां श्वांजान धीत, कंसवांचनी इन चार औषधियों का बेटा! देखो, जल में मिश्रण किया गया। तो उस जल को मुनिवरो! देखो, जब अग्नि की तरंगें उन कलशों को छूती थी तो उस जल के पात्रों में अग्नि की ऊष्णा तरंगें मानो देखो, प्रवेश कर जाती थी। उस अग्नि की मानो देखो, उन औषधियों की तरंगें उस जल में मिश्रित होती जिससे मानो देखो, याग के साकल्य का निर्माण किया गया। मेरे प्यारे! देखो, उससे आयुर्वेद की बहुत-सी औषधियों का वे निर्माण करते रहते थे। परन्तु देखो, वह कुछ ऐसे रूग्णवाले मानो देखो, साधकों को उस साधना में परिणत कराते थे याग के द्वारा मानो देखो, उससे भी उनका मानो देखो, रूग्णशान्त होता था। इसी प्रकार मन की, हृदय की शांति माने देखो, दोनों की एकता में ये याग सहायक होता है।

इसके पश्चात बेटा! मुझे एक वाक् और ऐसा स्मरण आता है। राजा रावण के यहाँ जब याग हुआ तो महाराजा सुधन्वा ने एक वाक् कहा था। महाराजा सुधन्वा और अश्विनी कुमार ये बारी बारी अपना विचार देने लगे। महाराजा सुधन्वा ने यह कहा कि जब मैं भयंकर वनों में यह अनुसंधान कर रहा था कि भिन्न-भिन्न प्रकार की औषधियों में मानो देखो, उसमें नृत्य करने वाला बनूँ। तो मैंने मानो देखो, भयंकर वनों में जा-जा कर त्रिकोणवादी औषधियों को एकत्रित किया क्योंकि संसार में जब भी प्रभु ने, परमपिता परमात्मा ने इस मानव के शरीर का

निर्माण किया तो ये भी त्रिकोणी यज्ञशाला ही कहलाती है। मानो त्रिकोणवादी यज्ञशाला में जैसे त्रि-विद्या है। वेद में तीन प्रकार की विद्या कहलाती है। और उस विद्या का, दोनों का अविवांग कांचनं गृतिः मानो देखो, वह उन त्रि-विद्या को लेकर के मानो देखो, याग जैसे कर्मों का कर्मकाण्ड में त्रि-पाद का वर्णन प्रायः आता है।

त्रि-दोष

परन्तु देखो, महाराजा सुधन्वा ने ये कहा-कि मैं देखो, अग्नि में औषधियों को तपाता रहता हूँ तो मानो देखो, तीन से इसका बड़ा सम्बन्ध रहता है। तीन से इसका सम्बन्ध इसलिए रहता है क्योंकि अग्नि में जब हम किसी औषधि को तपायमान करते हैं। तो तीन से उसकी मानो पुट देते हैं। तीन पुट मानो देखो, किसी और औषधियों में देते हैं। इसी प्रकार तीन ही प्रकार पुट की होती हैं। मानो देखो, ये तीन प्रकार की पुट होने से इसका एक नृत्योत्कृति और श्वांग मानो देखो, औषध पुष्टिकारक बन जाता है। इसी प्रकार मानव को त्रिकोण यज्ञशाला में याग करने से मानव के द्वारा जो तीन प्रकार के दोष है मानो जैसे मानव के शरीर में तीन दोष कहलाते हैं। तीन दोषारोपण होते रहते हैं। जैसे वाक् है मानो देखो, अग्निप्रधान में इसको पिताधृष्ट कहते हैं। परन्तु देखो, इसको वायु सम्भात कहते हैं। मानो देखो, ये जो त्रिदोष है ये त्रिदोष भी इस त्रिकोण याग के करने से, ये त्रिदोष भी मानो देखो, अपने-अपने रूप में, यथार्थ रूप में गति करते रहते हैं। यदि हम उसके आधार पर अपने आहार को उसी प्रकार बनाए। आहार और व्यवहार भी हमारा त्रिकोण होना चाहिए। आहार और व्यवहार त्रिकोण कैसा हो?

त्रि-कोण आहार, व्यवहार

मानो देखो, आहार में तीन प्रकार का रस होना चाहिए। मानो उसमें पुष्टिकारक हो, रसदायक और मानो देखो, ऋतु के अनुकूल हो। इस प्रकार का भोजन भी मानव के लिए बहुत अनिवार्य त्रिकोण कहलाता है। ये त्रिकोण अन्न कहलाता है। मानो त्रिकोण व्यवहार कहलाता है। त्रिकोण व्यवहार कैसा? मानो देखो, बाह्य व्यवहार, हृदय में मानो देखो, उसी प्रकार की प्रतिभा और मानो देखो, उसमें यौगिकवाद भी होना चाहिए। तीन प्रकार के मानो देखो, हमारे व्यवहार होने चाहिए। वेद का भाष्य करने वाला, वेद के अर्थों को जानने वाला मानो तीन प्रकार की प्रतिभा वाला होना चाहिए। मानो उसका व्यवहार स्वतंत्र रूप से विचित्र होना चाहिए, वाणी में, बाह्य जगत् में पवित्रता हो। मानो उसका आहार और व्यवहार दोनों पवित्र हो, तो व्यवहार स्वतः ऊँचा बन जाता है।

विज्ञान

उसके पश्चात् मानो देखो, उसके आधार पर उसका क्रिया कलाप वैज्ञानिक हो। क्योंकि विज्ञान का होना बहुत अनिवार्य है। विज्ञान किसे कहते हैं? इंद्रियों की प्रतिभा को जानना, इन्द्रियों के व्यापार को जानना, इन्द्रियों के परोक्ष रूप को जानना, मानो उसको बाह्य जगत से उसका समन्वय करना ये मानो देखो, विज्ञान कहलाता है। उसके पश्चात उसमें जो...में कुछ कृतिका होती है। परन्तु उन कृतिकाओं के साथ में उसका एक मानो देखो, यौगिकवाद मानो देखो, समुद्र में चला जाता है। समुद्र में से नाना प्रकार के रत्नों को लाता है। हृदय रूपी बेटा! ये समुद्र है और समुद्र में से नाना प्रकार के रत्नों को लाता है, उसे यौगिकवाद मानो देखो, पिपात बनाता है। पिपात बना करके वह जो आत्म चेतना है। उसका अघात जो समुद्र है उस समुद्र में प्रवेश करने से मेरे पुत्रो! देखो, अघात आभा में रत्नों की धाराओं को जन्म देता है और वह योगेश्वर बनकरके मानो देखो, वेद के तीन ही प्रकार के विषय कहलाते हैं। यहाँ तीन प्रकार की धाराएँ हैं। मानो देखो व्यवहारिक, वैज्ञानिक और यौगिक कहलाएँ जिसको आध्यात्मिकवेत्ता कहते हैं।

त्रि-विद्या

परन्तु देखो, इसी प्रकार वेद में तीन प्रकार की विद्या होती है। तीन प्रकार की विद्या का देखो, सबसे प्रथम

ज्ञान, उसके पश्चात कर्म और देखो, उसके पश्चात उपासना। मानो देखो, ज्ञान उसे कहते हैं। मानो देखो, किसी वस्तु का हमने उच्चारण किया है। उस उच्चारण शब्द में क्या ज्ञान है। मानो उस ज्ञान को बाह्य जगत में लाना उसके पश्चात् मानो उसके अनुसार हमें क्रियात्मक कर्म करना और कर्म करने के पश्चात् उन धाराओं का उस कर्म में से जो भी तरंगें उत्पन्न होती है। मानो यथायोग्य उसको हमें क्रिया में लाना, उसको अपने में धारण करना बेटा! उसको उपासना कहते है।

तो परिणाम क्या? मानो देखो, सदुपयोग का नाम उपासना हो गया और जानना मेरे प्यारे! ज्ञान हो गया और जानकर उसी प्रकार व्यवहार का नाम कर्मकाण्ड हो गया।

जीवन में महानता

तो मेरे प्यारे! देखो, वेद में त्रि-वर्धा आता है। तो मैं बेटा! कहाँ चला गया हूँ तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर देते-देते। मैं त्रि-वर्धा में ही चला गया। विचार क्या मानो देखो, मैं उच्चारण कर रहा था बेटा! देखो, राजा राम के राष्ट्र की चर्चाएं मानो देखो, राजा राम के यहाँ त्रिकोण याग होता रहता है और त्रिकोण का अभिप्राय यह कि मानो हमें रूग्णों से शान्त होना है। हमें अपने राष्ट्र के प्रति, अपने समाज के प्रति मानों देखो, यह भावना लानी है। कि हमारे यहाँ किसी प्रकार का अरुग्ण न होना चाहिए। हम उस विज्ञान को जाने जो विज्ञान मानो देखो, तरंगों में ओत-प्रोत रहता है। उन तरंगों में तरंगित रहता है। उस विज्ञान को जानने से हमारे जीवन में एक महानता की प्राप्ति होती है।

तो मानो देखो, इसी प्रकार वे महाराजा कुंभकरण मानो देखो, हिमालय की कन्द्राओं में रहते और मानो देखो, लंका में भी रहते। वे जब याग कर्म करते थे तो याग कर्म करते-करते मानो देखो, त्रिकोण में, वह अपने में मानो देखो, रत रहते थे। उसके पश्चात् औषधियों का जहाँ समन्वय होता है। वहाँ विज्ञान की धारा भी उसी से उत्पन्न हुआ करती हैं। तो परिणाम क्या है पुत्रो! मैं मानो देखो, विशेषता तुम्हें देने नहीं आया हूँ विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हमारे यहाँ परम्परागतों से ही मानो देखो, स्वस्थ कहलाया जाता है।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्! आपने जो कुम्भकरण का वर्णन किया है। कुम्भकरण को तो आधुनिक काल में प्रायः ऐसा स्वीकार नहीं करते जैसा आप वर्णन कर रहे है। मानो देखो, उसको राक्षसी-प्रवृत्तियों में आधुनिक समाज स्वीकार करता है। आप उसको बहुत विशेष याज्ञिक और, वैज्ञानिक वर्णन करते हैं। परन्तु देखो, आधुनिक जो साहित्य है मानो देखो, उसमें महाराजा कुम्भकरण के जो संस्कार का विधान नहीं प्राप्त होता। आप ये नवीन वार्ता कहाँ से लाते है?

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! हम नवीन वार्ता नहीं लाते। हम तो प्रायः जो भी कुछ होता है जो मानो उस काल की प्रतिभा मानो प्रायः साहित्य में रही है। उसी को हम उच्चारण करते रहते है क्योंकि हमें मिथ्या उच्चारण करने से कोई लाभ नहीं है। मानों देखो, हम किसी प्राणी को राक्षसी श्रेणी में ला करके उद्गीत करे तो ये तो हमारा कर्त्तव्य नहीं है। रहा ये कि इसमें जो विशाल मानो देखो, ऋषि के जो पौत्र थे उनका राष्ट्र ही बड़ा विशाल था। तो क्या तुमको कुछ संस्कार में कोई हानि है या किसी भी कोई ऐसा विधान है कि संस्कार नहीं होना चाहिए।

पूज्य महानन्द जीः भगवन्! होना तो चाहिए। परन्तु आधुनिक काल में कहीं वर्णन प्राप्त नहीं होता।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! ये अभिप्राय नहीं है कि आधुनिक काल में कोई वस्तु न प्राप्त हो तो अतीत में न हुई हो। इसमें ये कोई निश्चय नहीं होता। परन्तु देखो, महाराजा कुम्भकरण के विषय में तो तुमने मुझे एक समय वर्णन कराया था कि वे मांसों का भक्षण किया करते थे।

कुम्भकरण का वास्तविक जीवन

पूज्य महानन्द जीः प्रभु! ऐसा तो आधुनिक जगत में कहते हैं कि जब वे छः महा की निन्द्रा से जागरूक

होते थे तो वे बहुत-सा मांस भक्षण करते थे और सुरापान करते थे।

पूज्यपाद गुरुदेवः बेटा! किन्तु ये तो पाम्बरों की चर्चाएं हैं। ये बुद्धिमानों का विषय नहीं है। मानो देखो, जो असुर पान करता है या मांस इत्यादि का भक्षण करता है बेटा! ये पाम्बरों का वाम मार्ग कहलाता है। ये मानो जो शुद्ध, विशुद्ध मार्ग हैं, उससे जो विपरीत मार्ग को अपनाने वाले हैं। वो सुरापान और मांस की चर्चा करते रहते हैं। प्रायः इतिहास में ऐसा प्राप्त नहीं होता। मुझे तो बेटा! ऐसा हमारी जानकारी में नहीं है परन्तु तुम जैसा उच्चारण कर रहे हो। ऐसा भी हमने किसी काल में श्रवण नहीं किया है। रहा ये कि कुम्भकरण का संस्कारण हुआ हो। बेटा! महाराजा कुम्भकरण एक वाक् बहुत ऊर्ध्वा में कहा करते थे। महाराजा कुम्भकरण यह कहा करते थे कि मैं याज्ञिक हूँ और याज्ञिक रहूँगा। मानो देखो, मेरा आहार और व्यवहार प्रभु से प्रार्थना करता हूँ मेरा शुद्ध होना चाहिए।

शुद्ध आहार

मानो देखो, शुद्ध आहार वह होता है। मैंने पुरातन काल में त्रिवर्धा में तुम्हें वर्णन किया। पुष्टिकार हो, रस दायक हो और बुद्धिनृत करने वाला हो। मानो देखो, बुद्धि उत्पन्न करने वाला हो। जिसमें प्रभु की प्रतिभा हो। तो मानो देखो, ऐसा जो आहार होता है। वही आहार पवित्र होता है। तो वह आहार महाराजा कुम्भकरण किया करते थे। मानों देखो, मुझे तो बेटा! उनका जीवन प्रायः स्मरण आता रहता है। वह छः छः माह तक मानो देखो।

बेटा! एक समय जब यागों का हम किसी काल में जब अनुसंधान कर रहे थे तो उस समय महाराजा कुम्भकरण एक समय बेटा! उस यज्ञशाला में पधारे थे जब हम उस समय में मानो देखो, सप्तकोण की यज्ञशाला का निर्माण करते रहते थे, उनमें याग करते रहते थे। मानो देखो, कुछ समय के पश्चात् उन्होंने याग के कर्मकाण्डों को जानने का प्रयास किया था। उस समय बेटा! हमने उनके आहार और व्यवहार को प्रायः श्रवण किया था। उनका आहार और व्यवहार बड़ा पवित्र था। उनकी पत्नी, मानों देखो, एक समय यज्ञशाला में पधारी और देखो, जिस भी काल में यज्ञशाला के उत्सव या नृत्य होते रहते थे तो उस काल में मानो देखो, वे यज्ञ में विराजमान हो करके प्रभु की स्तुति, नमस्कार मानो देखो, अपनी आभा में सदैव रमण करती रहती थी।

कुम्भकरण का पूर्वनाम मृचिकेतु

तो बेटा! ऐसा हमने कहीं कोई दृष्टिपात नहीं किया। अब रहा ये कि तुम्हारे कथनानुसार इन वाक्यों को उच्चारण करने लगे। तो बेटा! जैसे तुम पाम्बरों वाली चर्चा कर रहे हो ऐसी हम भी पाम्बरों वाली चर्चा करने लगे तो ये कोई शोभनीय नहीं है। परन्तु रहा ये वाक्, वेद की बेटा! हम चर्चा करते रहे हैं। वेद के अनुकूल बेटा! जिन्होंने विज्ञान को जाना है। जिन्होंने अपनी प्रतिभा को जाना है। उसी आधार पर बेटा! देखो, हम प्रायः चर्चाएं करते रहते हैं। क्योंकि कुम्भकरण का नामोकरण इसीलिए उच्चारण किया जाता था क्योंकि वे कुम्भाकार जैसे मानों देखो, कुम्भाकार जैसे उनके विचार थे। ऐसे वे मानो देखो, नृत कराते रहते थे। ऐसी उनकी रचना रहती थी जैसे मानो कुम्भ अपने में मानो देखो, जैसे घटा होता है उसमें जल होता है। स्वाति होते हैं। परन्तु देखो, इसी प्रकार वह लाभप्रद होता है ऐसे उनका मस्तिष्क कुम्भाकार वाला होने से मानो उसमें ज्ञान और विज्ञान की उपज उत्पन्न होती रहती थी। तो उनको मानो देखो, ऋषि मुनि कुम्भाकार वाले कुम्भकरण कहते थे। कुम्भाकार वाले इसीलिए कहते थे उनका नाम तो बेटा! बाल्यकाल में मृचिकेतु नाम था। मानो देखो, मृचिकेतु जो नाम है वह मानो देखो, बाल काल में, क्रोध विशेष करते थे। तो आचार्य उन्हें मृचिकेतु कहते थे। वे कहते थे कि जैसे मानो देखो, मृचि होता है। मृचि नाम का एक नक्षत्र होता है। मानो देखो, मृचि नक्षत्र में सदैव अग्नि की धाराएं जन्म लेती रहती है। अग्नि की तरंगें उत्पन्न होती रहती है। इसी प्रकार उनको मृचिकेतु कहते हैं।

अध्यात्मवाद

तो विचार विनिमय में क्या मेरे पुत्रो! मैं आज तुम्हें ये उच्चारण कर रहा था कि राजा रावण के यहाँ त्रिकोण याग हुआ वो याग मानो औषध विज्ञान के लिए मानो विशेषकर त्रिदोषों को अपनी आभा में लाने के लिए त्रिकोण याग परम्परागतों से बेटा! हमारे यहाँ वैदिक साहित्य प्रायः में नृत करता रहा है। और जैसा तुमने कहा कि आधुनिक काल में त्रिकोण का कोई वर्णन नहीं है तो बेटा! ये कोई अभिप्रायः नहीं है कि त्रिकोण का आधुनिक काल में वर्णन नहीं है तो प्रायः वह नहीं है। कोई वस्तु किसी काल में उसका नामोकरण अज्ञानता के कारण भी लुप्त हो सकता है। और देखो, रूढ़िवाद के कारण भी वह लुप्त हो सकता है। मैं इस वाक् को नहीं जानता हूँ। इसको तो तुम ही भली भांति जानते होगे कि इसका नामोकरण लुप्त क्यों हो गया? कर्मकाण्ड लुप्त क्यों हो गया? परन्तु सर्वत्र सदैव सत्य है कि किसी भी याग में हमारे यहाँ हिंसा का वर्णन नहीं है। क्योंकि जो भी याग होते हैं वे लाभ के लिए होते हैं। राष्ट्र समाज को ऊँचा बनाने के लिए होते हैं। मानो रुग्णों को शांत करने के लिए होते हैं। और वे होते उसी काल में हैं। जब अहिंसा परमो धर्मः होता है। परन्तु जिनमें हिंसा होती है वे याग नहीं होते हैं। मानो देखो, रहा ये वाक् कि परम्परगतों से आहार और व्यवहारों में मानो देखो, नाना प्रकार का नृत होता रहा है। ये तो बेटा! परम्परागतों से होता रहता है।

सुकर्म

परन्तु याग शब्द जहाँ आता है तो उसका अभिप्राय ये है सुकर्म करना। याग का अभिप्राय यह है कि मन में भी हिंसा न रहना, याग का अभ्प्रिय यह है कि क्रोध भी न आना, याग का अभिप्राय यह है काम की वासना भी उत्पन्न न होना, बेटा! याग का अभिप्राय यह है कि बेटा! मन को एकाग्र करना। मानो देखो, याग का अभिप्राय यह है कि मन को मुनिवरों! देखो, प्राण में उसका सन्निधान कर देना। मानो देखो याग का अभिप्राय ये है, दोनों वस्तुओं का मिलान करना, योग में प्रवेश होना है। परन्तु देखो, योग में प्रवेश होने के पश्चात मानो देखो, संसार को जानने का नाम याग है। परन्तु इस संसार को जान करके प्रभु में स्थित होने का नाम पुत्रो! याग कहा जाता है।

तो बेटा! मैं कहाँ तक वर्णन करूंगा। तो विचार विनिमय ये कि याग में बेटा! हिंसा नहीं होती। जो याग हमें पृथ्वी लोक से लेकर के द्यौ लोक तक ले जाकर और हमें देखो, ब्रह्म की प्रतिभा में मानो ब्रह्म लोको में ले जाता हुआ चेतना में रत होने का हमें ज्ञान कराता है तो बेटा! उसमें हिंसा नहीं होती। मेरे पुत्रो! आज तो मैं अपने विचारों की भूमिका बनाने आया हूँ क्योंकि तुमने विषय ही ऐसा लिया है कि मुझे भुमिका बनानी है। मानों देखो, ये भूमिका क्या बनी कि हमें बेटा! इतिहास साहित्य को विशुद्ध रूपों से जानना है उन्हें जानकर के इस संसार को त्रिवर्धा रूपों में स्वीकार करना है।

स्वाहा का प्रभाव

मेरे पुत्रों! देखो, हम जो ''स्वाहा'' उच्चारण करते हैं। उनका सम्बन्ध बृहस्पति लोको तक हमारी तरंगें जाती है। उससे हमें लाभ क्या है शरीर में? कि हमारा जो पिण्ड है मानो उसमें बुद्धि का क्षेत्र है। जो मन का क्षेत्र, बुद्धि का क्षेत्र है उसमें मुनिवरो! देखो, लोक लोकान्तरों का विधान आता है। लोक लोकान्तरों से जो तरंगें आती है। उन तरंगों का हम जब यौगिक क्षेत्रों में, विज्ञान के क्षेत्रों में प्रवेश होकर के मिलान मिलाते हैं तो मुनिवरो! देखों, उनका समन्वय वृहस्पति लोकों से हो जाता है तो परिणाम......। शेष अनुपलब्ध।16.12.1981

७ संकल्प की महत्ता—11 02 1982

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेदमंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये तुम्हें भी प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमंत्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि यह जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात् आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में वह मेरा देव परमपिता परमात्मा दृष्टिपात् आता रहता है। उसी की चेतना से यह जड़ जगत् चेतनित सा दृष्टिपात् आता रहता है। उस चेतना की ही हमारे यहाँ प्रतिभा कही जाती है। वह सर्वत्र ब्रह्माण्ड में ओत-प्रोत है।

वैज्ञानिक परमात्मा

आज का हमारा वेदमंत्र नाना प्रकार की हमें प्रेरणा दे रहा था। हमने बहुत पुरातन काल में अपने वाक्य प्रकट करते हुए कहा था कि वे परमपिता परमात्मा विज्ञानमयी स्वरूप माने गये हैं। क्योंकि प्रत्येक वेदमंत्र इसकी घोषणा कर रहा है और यह कह रहा है कि परमपिता परमात्मा वैज्ञानिक है और विज्ञान उसका आयतन माना गया है। वह विज्ञान में वास करने वाला है क्योंकि जो इसमें वास करता है वह उसी का आयतन माना गया है। मैंने बहुत पुरातन काल में ऋषि मुनियों के विचार प्रकट करते हुए कहा था कि उनकी उड़ान विचित्र रही है। जैसे ऋषि मुनि अपनी उड़ान उड़ते हैं इसी प्रकार प्रत्येक प्राणी को, मानव को उड़ान उड़नी चाहिए क्योंकि उड़ान उड़ने वाला मानव महान् कहलाता है, विचित्र कहलाता है और उसकी विचित्रता उसके मानवीय दर्शन में आभाहित हो जाती है।

कल्पवृक्ष

तो मेरे पुत्रो! अपनी मानवीयता का विचार विनिमय करते हुए अपनी मानवीयता को महान् बनाना हमारा कर्त्तव्य है। क्योंकि यह जो संसार है, यह एक कल्प वृक्ष की भांति है। इस संसार में जो भी मानव, जैसी कल्पना करने लगता है, जिस दिशा में इस संसार को दृष्टिपात करता रहता है, मानो उसी प्रकार यह संसार उसको दृष्टिपात् आने लगता है। मेरे प्यारे! यह संसार कल्पवृक्ष है। यहाँ प्रत्येक मानव कल्पना करता रहता है। दर्शनों की कल्पना करता रहता है, तो वह दार्शनिक बन जाता है। क्योंकि यह संसार कल्पवृक्ष माना गया है और कल्पना मात्र से ही मानव का निर्माण होता रहा है। कल्पना मात्र से ही मानव कल्प वृक्ष के नीचे विद्यमान होकर के ऊंची-ऊंची उड़ान उड़ता रहता है।

अद्वितीय प्रकाशक

हमने बहुत पुरातन काल में वेद की आभा को लेकर के इस संसार के संबंध में चर्चा की। वेद मंत्र अपने में अद्वितीय प्रकाश देता है और वह यह कहता है कि यह संसार एक वृक्ष के नीचे मानव विद्यमान होकर के दर्शनों की कल्पना कर रहा है, तो वह दार्शनिक बन जाता है। योगी बनने की कल्पना करता है तो योगी बन जाता है। योगेश्वर कैसे बनते हैं? वेद का मंत्र कहता है कि योगेश्वर वही कहलाता है जो इस संसार को ज्ञानयुक्त दृष्टिपात् करता है। ज्ञानयुक्त दृष्टिपात् करता हुआ बाह्य जगत् में जो दृष्टिपात् आता है, उस बाह्य जगत् को वह अपने आंतरिक जगत् में दृष्टिपात् करता रहता है। क्योंकि मानव चित्र-चित्रण करता रहता है। सर्वत्र राष्ट्र इसके सूक्ष्म से आंतरिक जगत में प्रवेश कर रहा है। राष्ट्र नहीं पृथ्वी मण्डल है, नाना प्रकार के तारा मण्डल, आकाशगंगाएं, मण्डल भी इसमें चित्रित होते रहते हैं।

आन्तरिक जगत्

तो यह कैसा अनुपम, एक महान् आंतरिक जगत् माना गया है। जिसमें योगी जब समाधिष्ठ होकर के बाह्य जगत्, आंतरिक जगत् दोनों का समन्वय करते रहते हैं, दोनों का मिलान करते रहते हैं। मेरी प्यारी माता जब अपने में, अपनेपन को प्राप्त होने लगती है। तो मुनिवरो! वह आंतरिक जगत् में, बाह्य जगत् को दृष्टिपात् करके उसके अंग प्रत्यंगों का निर्माण होता हुआ दृष्टिपात् करने लगती है। इस संबंध में हमने बहुत-सी वार्ताएं प्रकट की है। आज भी मैं यह कल्पना करने वाला हूँ कि बहुत पुरातन काल में बेटा! ये वाक् सिद्ध हुआ। मुझे स्मरण भी आता रहता है, त्रेता काल में मेरे प्यारे! विद्यालय में अध्ययन करने वाली मेरी पुत्रियाँ, वीरांगनाएं अध्ययन करती हुई अपनेपन को प्राप्त होती रही हैं। कौशल्या जब बाल्यकाल में विद्यालय में अध्ययन करती थी तो वह यह विचारती रहती थी, कल्पना करती रहती थी कि मैं इस संसार में गृह में प्रवेश होना नहीं चाहती। अध्ययन चलता रहा। आचार्य तत्त्व मुनि महाराज के द्वारा उनके चरणों में ओत-प्रोत होकर के पठन-पाठन होता रहा। उनके ही संरक्षण में वे यह वाक् कहा करती थी कि हे पितर! मैं इस संसार में, गृह में प्रवेश करना नहीं चाहती। ऋषि यह ही कहा करते थे कि यह तो एक मानवीय विचारधारा है। जैसी जिसकी विचारधारा इस संसार में बन जाती है, वैसी ही वह कल्पना करता रहता है। और उसी के अनुसार उसके जीवन की पद्धति का निर्माण होता रहता है।

त्याग में उच्चता

मेरे प्यारे! जब ऋषि ने यह वाक् कहा तो कुछ समय शांत होने के पश्चात् कौशल्या के मस्तिक में ये वाक् पुनः आया कि गृह में प्रवेश होना कोई पाप नहीं है। यदि मैं पितृ-याग करने वाली बनूं तो यह भी मेरा एक सौभाग्य होगा। तो माता कौशल्या ने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से पुनः कहा कि हे प्रभु! मैं गृह में प्रवेश तो होना चाहती हूँ परन्तु मेरे लिए कोई आज्ञा ऐसी प्रकट कीजिए जिससे गृह में प्रवेश होकर मेरा नामोकरण ऊर्ध्वा में गति करने वाला हो।

तो ऋषि तत्त्व मुनि महाराज ने एक पोथी, जिसको महर्षि पारा मुनि जी ने लेखनी बद्ध किया था। और उस पोथी में ब्रह्मचारियों की कल्पना मात्र वार्ताएं और उन वार्ताओं का वर्णन था। उन्होंने कहा हे पुत्री! यह संसार त्याग से ऊँचा बनता है। हे पुत्री! तुम्हारे में त्याग होना चाहिए और त्याग यह है कि मन को पवित्र बनाना है और मन पवित्र उस काल में बनता है जब त्याग होता है, और त्याग के द्वारा जब यह मन पवित्र होता है तो उस मानव के जीवन में पुष्पांजलि आ जाती है।

मेरे प्यारे! यह वाक् कौशल्या जी ने अपने में स्वीकार कर लिया और स्वीकार करने के पश्चात् कुछ समय पश्चात् पठन-पाठन की पद्धति जब समाप्त हुई, कुछ ब्रह्मचारियों में वे उर्तीण आती रही, प्रथमता में, कुछ में द्वितीय श्रेणी को प्राप्त किया। विद्यालय से पूर्व विद्या प्राप्त करने के पश्चात् आचार्य उन्हें दीक्षांत उपदेश दिया करते हैं। उस समय महर्षि तत्त्व मुनि महाराज ने एक दीक्षांत में उपदेश दिया और ये कहा कि हे ब्रह्मचारीणियो! तुम इस विद्यालय को त्याग करके गृह में प्रवेश होने जा रही हो। परन्तु जिस विद्या का तुमने अध्ययन किया है, जिस विद्या को पठन-पाठन की पद्धति बनाया है, वह पद्धति तुम्हारे जीवन में कार्य रूप में होनी चाहिए। जो कार्य रूप बना लेता है, वह ब्रहचारी तपस्वी कहलाता है। मातृ शक्ति का वैदिक साहित्य में बड़ा महत्व आया है और वह महत्व क्या? ''ब्रह्मे कृतो देवत्यां लोकः'' देवताओं के लोक को प्राप्त होना है और देवताओं का लोक उस काल में प्राप्त होता है, जब मानव की देव प्रवृत्ति बन जाती है। देव प्रवृत्ति उस काल में बनती है जब आचार्य और गुरूओं का दिया हुआ दीक्षांत उपदेश को कार्यरूप देना प्रारंभ हो जाता है, तो वह महान् बन जाता है।

पुरुषार्थ और कला कौशल का जीवन

यह उपदेश देकर बेटा! उन्होंने वहाँ से उत्तीर्ण किया और कौशल्या जी गृह में पहुंची। कुछ समय के पश्चात् रघुवंश में उनका संस्कार हुआ। संस्कार होने के पश्चात् बेटा! माता कौशल्या के गर्भस्थल में जब राम की पुनीत आत्मा का प्रवेश हो गया तो माता कौशल्या का यह नियम था, जिस समय उनका संस्कार हुआ था। तो आचार्य ने उन्हें यह उपदेश दिया था कि तुम्हें पुरूषार्थ और कला कौशलता में ही जीवन व्यतीत करना चाहिए। अपने जीवन को आत्म निर्भरता में लगाना चाहिए। जो आत्म-विश्वासी नहीं होता, आत्मा से स्वाभिमानी नहीं होता वह मानव इस संसार में पामर कहलाता है। उसका कोई मूल नहीं होता। इसलिए अपने स्वाभिमान को रखे और पराधीन नहीं बनना चाहा। माता कौशल्या का यह नियम बन गया था कि स्वयं कला-कौशल करती हुई पान करती रहती थी। पदार्थों का पान, अन्नाद का पान करती रहती थीं। माता कौशल्या राज का अन्न ग्रहण नहीं करती थीं। वह स्वयं कला-कौशल करती हुई अपने जीवन का उपार्जन करती थी। अपने में वह महानता को प्राप्त होती रही।

मन की पवित्रता

परन्तु जब यह सूचना राजा दशरथ को प्राप्त हुई कि राजा लक्ष्मी राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं कर रही हैं। तो राजा दशरथ राष्ट्र गृह में पहुंचे, और देवी से कहा-हे देवी! तुम राष्ट्र अन्न को ग्रहण करो। उन्होंने कहा-मैं नहीं कर पाऊंगी। उन्होंने कहा-क्यों? देवी ने कहा राजन्! राष्ट्र का जो अन्न होता है वह रजोगुण, तमोगुण से सना हुआ अन्न होता है और जो उन रजोगुण और तमोगुण से सना हुआ होता है, उस अन्न से मन का निर्माण नहीं होता, उससे मन पवित्र नहीं बनता। भगवन्! मानव का उद्देश्य इस संसार में है कि हम अपने मन को पवित्र बनाएं, और मन को पवित्र बना करके प्राण सूत्र में इसको पिरोना है, और प्राण सूत्र में पिरो करके दोनों का समावेश करने से बुद्धि की जो ग्रंथियां हैं उनका स्पष्टीकरण हो जाएगा, और जो गर्भ में होने वाला बाल्य है वह प्रखर बुद्धि का होना चाहिए, जिससे उसकी उड़ान इस संसार में निर्भयता को प्राप्त होकर के देव प्रवृत्ति वाली हो जाए।

राजा दशरथ मौन हो गए। दशरथ वहाँ से भ्रमण करने सायं काल को निकले। उन्होंने कहा-मैं महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज से प्रार्थना करूंगा, कि वह उसे अन्न का पान कराएं। नगर से दूरी उनका वास था। आश्रम में माता अरुन्धती और वशिष्ठ दोनों विद्यमान थे। माता अरुन्धती और वशिष्ठ मुनि महाराज दोनों का उपदेश चल रहा था। माता अरुन्धती प्रश्न कर रही थीं और वशिष्ठ उनका उत्तर दे रहे थे।

माता अरुन्धती ने कहा-कि प्रभु! माता के गर्भस्थल में जो बालक की बुद्धि का निर्माण होता है उस बुद्धि का जो तारतम्य है वह कहाँ से होता है? महर्षि वशिष्ठ मुनि बोले हे देवी! बालक की जो बुद्धि का निर्माण होता है वह परमाणुवाद में जो संस्कार होते हैं उन संस्कारों के आधार पर निर्माण होता है। परन्तु उनका समन्वय कहाँ से रहता है? उनका समन्वय अंतरिक्ष से रहता है और उन परम्पराओं की गतियों के आधार पर बुद्धि का निर्माण होता रहता है और भी उन्हें सूक्ष्मतम में ले गए। उन्होंने कहा-देवी! माता की और पिता की जैसी बुद्धि होती है, और वह जो बिंदु, जिस बिंदु से बालक का निर्माण होना है, उसमें कुछ बुद्धि के तंतु भी होते हैं क्योंकि विज्ञान यह सिद्ध करता है कि एक-एक परमाणु में सर्वत्र ब्रह्माण्ड परोक्ष रूप से परिणत हो रहा है तो उस ब्रह्माण्ड की आभा में बुद्धि का निर्माण होता है। कुछ लोकों का संबंध भी होता है, जैसे अरुन्धती मंडल है, स्वाति नक्षत्र है। छटे माह का जब प्रारंभ होता है तो माता की बुद्धि के द्वारा ब्रह्मरंध्र के स्थान में एक स्वातिक नाम की नाड़ी कहलाती है उस नाड़ी का संबंध पुरातत् नाम की नाड़ी से होता हुआ पिंगला के द्वार से मिलान करती हुई बालक की बुद्धि से उन नाड़ियों का संबंध रहता है। अब वह जो परमाणु पूर्व प्रवेश हो गए उनका विभाजन होता है। उस नाड़ी का संबंध लोकों से होता हुआ उसकी ग्रंथि में स्पष्टीकरण आकर के वे निर्माणित हो जाते हैं।

प्राणों का विभाजन

बेटा! मैं कहाँ चला गया हूँ? विचार बहुत गंभीर नहीं देना है। माता अरुन्धती ने कहा-प्रभु! मैं इसको स्वीकार कर रही हूँ। परंतु मैं यह जानना चाहती हूँ कि यह प्राणों का विभाजन माता के गर्भ में कैसे होता है? उन्होंने कहा-देवी! तुम इतना भी नहीं जानती ये तो विभाजन पंच महाभूतों के साथ में होता रहता है। पंच मात्रा में वह जो दस प्राणों का समूह सूक्ष्म शरीर में रहता है और सूक्ष्म शरीर एक परमाणु के रूप में प्रवेश करता है माता के गर्भ स्थल में। ये वाक् प्रश्न करने लायक नहीं। ये तुष्ठित कहलाता है। ये वाक् अरुन्धती के मस्तिष्क में आ समाहित हुआ।

परमाणुओं का समूह

परंतु उन्होंने लोक-लोकांतरों की भी चर्चा की। उन्होंने कहा-कि यह मानव का जो शरीर है, यह जो बाह्य जगत में आता है, विद्या का अध्ययन करता है। तो यह लोक-लोकातंरों की वार्ता मानव के शरीर में, बुद्धि में कैसे समाहित हो जाती है? वशिष्ठ मुनि बोले-देवी! जब प्रभु इस मानव शरीर का निर्माण करता है, तो यह परमाणुओं का समूह कहलाता है। परंतु एक-एक परमाणु में ब्रह्माण्ड की चित्रावली विद्यमान है। और ब्रह्माण्ड की चित्रावलियों में सर्वत्र लोक-लोकांतरों का मंडल आ गया है। सर्वत्र ब्रह्मांड परमात्मा के सन्निधान मात्र से क्रिया कलाप कर रहा है। परंतु पिंड और ब्रह्मांड की कल्पना एक ही मात्र मानी गई है जो गति वायुमंडल, ब्रह्मांड में हो रही है प्रत्येक लोक-लोकांतरों का तंतु मानव के शरीर में विद्यमान है। उनको उद्बुद्ध करना ही उद्बुद्ध स्वाग्ने ज्ञान रूपी अग्नि को लेकर के उन संस्कारों को जागरूक बनाना है। उनको क्रिया रूप देना है। अरुन्धती प्रसन्न हो गई। परंतु इसी विचारधारा में प्रातःकाल हो गया।

प्रातःकाल होते ही राजा दशरथ गुरू के समीप गये उनकी वार्ता सर्वत्र रात्रि श्रवण करते रहे। आनंद आता रहा। परंतु प्रातः काल होते ही वशिष्ठ बोले-हे राजन्! आइये, आपका आगमन कैसे हुआ? उन्होंने कहा कि महाराज! कौशल्या राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं कर रही है और मेरी इच्छा यह है कि उसे राष्ट्र का अन्न ग्रहण करना चाहिए।

माता अरुन्धती और वशिष्ठ मुनि महाराज अपनी क्रियाओं से निवृत्त होकर के, दोनों ने राजा के संग गमन किया और भ्रमण करते हुए अयोध्या में आ गए। और उस कक्ष में जा पहुंचे जहाँ राज लक्ष्मी विद्यमान हैं। राज लक्ष्मी कौशल्या ने तीनों महापूज्यों को दृष्टिपात् करते हुए, तीन आसन प्रदान कर दिये। उन्होंने कहा-विराजिए! वे विराजमान हो गए। राजा दशरथ अपने कक्ष में जा पहुंचे कुछ सूक्ष्म विश्राम करके माता अरुन्धती और वशिष्ठ दोनों विद्यमान हो गए।

स्वाभिमान की जागरूकता

माता कौशल्या ने चरण स्पर्श करते हुए कहा-कहो भगवन्! कैसे आज आगमन हुआ? ऋषिवर पूज्यपाद! मेरे लिए कोई आज्ञा कीजिए। वशिष्ठ बोले-हे पुत्री! हम इसलिए आये हैं कि तुम राष्ट्र का अन्न ग्रहण नहीं कर रही हो, तुम राष्ट्र का अन्न ग्रहण करने लगो। उन्होंने कहा कि-हे प्रभु! मैं जब विद्यालय में अध्ययन करती थी तो मैंने यह संकल्प किया है कि मैं राष्ट्र के अन्न को ग्रहण नहीं करूंगी। मैं अपने स्वाभिमान को जागरूक बनाना चाहती हूँ। मैं अपने में अपनेपन को प्राप्त करना चाहती हूँ। उन्होंने कहा-पुत्री! है तो यह यथार्थ। मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव महर्षि तत्त्वमुनि महाराज के आश्रम में यह संकल्प किया हुआ है देवी कौशल्या ने पुनः कहा-एक मैंने श्रृंगी ऋषि के द्वारा जब पुत्रेष्टि याग हुआ था उस समय मैंने यह संकल्प किया कि ये जो सर्वत्र ब्रह्माण्ड है, यह एक संकल्प मात्र है। माता के गृह में पुत्र का जन्म होता है न तो आत्मा किसी का पुत्र बन सकता है और न यह परमाणुवाद किसी का पुत्र बनते हैं। परंतु जो पुत्र पुत्रियों का विचार है यह माता-पिता का संकल्प मात्र है। संकल्प से ही पुत्र और

पुत्री बने हुए हैं। यदि माता-पिता का संकल्प नहीं होगा तो यह पुत्र-पुत्रियां नहीं बनते।

आत्मा का ह्रास

मेरे प्यारे! ऋषि आश्चर्य में हो गए और उन्होंने यह कहा-कि मैंने यह संकल्प किया है, और मैं इस संकल्प से यदि ह्रास हो जाती हूँ तो मेरी आत्मा का ह्रास हो जाएगा। ऋषि वशिष्ठ ने कहा-पुत्री! यह तो सर्वत्र वाक् तुम्हारा मान्य है। परंतु राजा को कष्ट होता है, और राजा कहते हैं कि राष्ट्र का अन्न पान करना चाहिए। कौशल्या ने कहा-हे प्रभु! मैं राष्ट्र का अन्न इसलिए ग्रहण नहीं कर रही हूँ कि राजा के राष्ट्र में महाराजा दिलीप, राजा सगर से लेकर के अब जो इनका वंश है सबमें उच्चतम अन्न का चलन होता रहा है। रजोगुणी अन्न, तमोगुणी अन्न कोष में नहीं होता था। परंतु राजा दशरथ के होने पर इस अन्न में महाराजा हमारे राष्ट्र पिता थे, महाराजा अज, अज के काल से ही इसमें रजोगुणी, तमोगुणी अन्नप्रदान हो गया है। महाराजा दिलीप के यहाँ ऐसा नहीं था। मैंने उस साहित्य का दर्शन किया है। राजा सगर के यहाँ जब राष्ट्रीय अन्न दूषित हुआ तो महर्षि कपिल ने उनके राजकुमार, उनकी साठ हजार सेना अपने यंत्रों से नष्ट कर दी। मैं आज उस साहित्य में जाना नहीं चाहती हूँ।

गऊओं की रक्षा

जब राजा के अन्न में दूषितपन आ जाता है, संसार के वैभव को संग्रहित करने वाला राष्ट्र बन जाता है, तो उस राष्ट्र में रक्त भरी क्रांतियों का समावेश आ करके वह नष्ट हो जाता है। तो हे प्रभु! मैं ऐसा नहीं चाहती। मैं चाहती हूँ कि यह दिलीप प्रणाली बनी रहे। हमारे महापिता महाराजा दिलीप गऊओं की सेवा करते रहे। हम भी सेवा करते हैं परंतु महाराज दिलीप बारह-बारह वर्षों तक गऊओं की सेवा करते रहे और उन गऊओं की सेवा से परिणाम क्या कि हम अपनी गऊओं की रक्षा करते रहे। गऊओं की किस प्रकार से रक्षा की जाए? गऊ एक पशु है, दुग्ध देने वाला पशु है और एक राष्ट्र की जो प्रजा है, प्रजा में जो इंद्रियां है, इंद्रियों का जो बल है उसको सर्वशासन में लाना और प्रजा में कर्त्तव्य के पालन के लिये उपदेश मंजरी देना, क्रिया रूप देना ही, चरित्र मानवीयता का आ जाना ही गऊओं की रक्षा है। महाराजा दिलीप का यह नियम रहा है। तो हे प्रभु! मैं पुनः से चाहती हूँ।

मुझे स्मरण है जब महर्षि शृंगी ने पुत्रेष्टि यज्ञ कराया, महर्षि विभाण्डक, महर्षि सोमभान, अगींरस गोत्रीय ऋषि, श्वेतकेतु और महर्षि दद्दड़ और उद्दालक गोत्र में श्वेतांम्बरी और भारद्वाज गोत्र में श्वेताश्वेतर और वायु गोत्रीय कवन्धी ऋषि महाराज और महाराज शिव और ब्रह्मा की उपाधि को प्राप्त करने वाले बिन्डुक ऋषि महाराज। ये सर्वत्र एक स्थल पर विद्यमान हुए और उन्होंने इस याग में यह घोषणा की थी कि यह याग उस काल में सफल होगा, जबकि चरित्रवान सन्तानों का जन्म होगा। और पुनः से राष्ट्रों में पुष्पांजलियों की वर्षा होनी चाहिए।

संकल्प में ब्रह्माण्ड

तो मैंने ऋषि-मुनियों के मध्य में यह संकल्प किया था कि मैं इस संकल्प को नष्ट नहीं कर सकूंगी। क्योंकि संकल्प में ही सर्वत्र ब्रह्मांड है। यह जो प्राण रूपी संकल्पों से यह संसार गुथा हुआ है, यह जो एक-दूसरे में ही दृष्टिपात हो रहा है। देखो,! सूर्य अपना प्रकाश दे रहा है, सूर्य से चंद्रमा प्रकाशित हो रहा है। चंद्रमा अमृत देता है तो सूर्य तेज देता है। माता वसुंधरा है। पृथ्वी पर जहाँ सूर्य का प्रकाश आता है, वह अपने में प्रकाश को सींच करके अपने में नाना प्रकार का खनिज दे रही है। उसी प्रकार यह वायु गति कर रहा है। अग्नि उसमें समाहित हो रही है। वायु प्राण दे रहा है तो अग्नि तेज दे रही है। मेरे प्यारे! विदुषी कहती है कि यह तो संसार एक-दूसरे में गुथा हुआ है। यह एक-दूसरे में संकल्पित हो रहा है। तो जब संकल्प में दुनिया, संसार रमण कर रही है तो प्रभु! मेरे संकल्प को क्यों नष्ट करना चाहते हो? मैं अपने संकल्प को नष्ट नहीं करना चाहती, क्योंकि मेरा यह संकल्प

बन गया है।

जब यह वार्ता प्रकट होती रही तो ऋषि मौन हो गया और ऋषि से कहा, प्रभु! आप मौन हो गये हैं। माता अरुन्धती और आपका किसी काल में संस्कार हुआ था, और संस्कार में एक संकल्प होता है और उस संकल्प से ही पति और पत्नी बनते हैं। उस संकल्प मात्र से ही तुम्हारा जीवन अखंड ज्योति वाला बन गया है। उसी में पितृ याग गुथा हुआ है उसी संकल्प में पति और पत्नी-वाद है। उसी संकल्प में गृह-वाद है। उसी संकल्प में राष्ट्रवाद कहलाता है। तो हे प्रभु! मैं आपकी आज्ञा का पालन कर सकती हूँ। परंतु यह मेरा दुर्भाग्य है, मैं आपकी आज्ञा का पालन नहीं कर रही हूँ। क्यों नहीं कर रही? क्योंकि संकल्प नष्ट हो गया तो संसार समाप्त हो जाएगा। संकल्प चला गया तो संसार चला गया, संसार न रहा। माता-माता नहीं रहेंगे, पुत्र-पुत्र नहीं रहेगा, यदि संकल्प नहीं रहेगा। तो इसलिए भगवन्! मेरे संकल्प को ज्यों का त्यों रहने दीजिये। इसी में मेरा जीवन है। इसी में मेरी आभा है। हां, संकल्प मैं उस काल में नष्ट कर सकती हूँ जबकि माता अरुन्धती और आप अपने संकल्प को नष्ट कर दें। अब न माता, न पत्नी भाव में रहे और न पति भाव में रहें, दोनों की विकल्पता हो जाए तो मैं भी अपने संकल्प को नष्ट कर दूंगी।

अन्न की पवित्रता का आधार

वशिष्ठ मुनि मौन हो गये और वशिष्ठ ने कहा-धन्य, हे पत्री! तुम्हारी बुद्धि की ग्रंथियां स्पष्ट हो गई। तुम्हारा इस अन्न के द्वारा मन पवित्र हो गया है और मन ज्ञान की आभा को लेकर के वाणी के द्वारा उच्चारण हो रहा है, वाणी उद्गीत गा रही है। मैं बहुत प्रसन्न हो रहा हूँ। तुम्हारे ये विज्ञानमयी तर्क, वार्ताओं को लेकर के मेरा हृदय प्रसन्न हो गया है। हे देवी! तुम्हारा संकल्प सदैव महान् बना रहे।

यह उपदेश देकर के बेटा! वशिष्ठ ने वहाँ से प्रस्थान किया। मेरे प्यारे! यह सर्वत्र ब्रह्मांड एक संकल्प मात्र है। संकल्प में यह जगत् गुथा हुआ सा दृष्टिपात हो रहा है। सृष्टि के पिता ने, सृष्टि के प्रारम्भ में संकल्प से संसार को सुगठित किया है। प्रत्येक अणु, परमाणु एक संकल्प में गति कर रहे हैं। अपनी आभा में रमण कर रहे हैं। लोक-लोकान्तर क्या, प्रातः कालीन सूर्य उदय हो रहा है। चंद्रमा संकल्प से किरणों को ले करके कांति को लेकर के प्रकाशित हो रहा है। सूर्य से विद्युत लेकर के संसार को प्रकाशित कर रहा है। शनि बहत्तर मंडलों को लेकर के संकल्प के द्वारा प्रकाश दे रहा है। एक-एक मंडल विचित्र कहलाता है नाना किरणें प्रकाश देती हुई खनिजों का निर्माण कर रही है केवल संकल्प मात्र से, वह प्रभु का संकल्प है। प्रभु की व्यवस्था है उस व्यवस्था का नाम संकल्प कहलाता है। मेरे प्यारे! संकल्प मात्र से जगत् अपनी आभा में रमण कर रहा है। मानव के मुखारबिन्दु से वाणी का उपार्जन हो रहा है। संकल्प की धाराओं में रमण कर रहा है। वशिष्ठ आशीर्वाद देकर के अपने गृह में प्रवेश हो गए विचार क्या? बेटा! हम परमपिता परमात्मा के संकल्पमयी जगत् की दृष्टिपात् करते हुए अपनी मानवीयता को विचारते हुए प्रभु के राष्ट्र में जाने का प्रयास करें ज्ञान और विज्ञान में रमण करते हुए हम प्रभु की गोद में चले जाऐं जिससे हमारा जीवन एक महान् पवित्रता को प्राप्त होता हुआ इस संसार सागर से पार हो जाये।

यह है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या? कि हमें परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार होना चाहिए। यह है बेटा! आज का वाक्, अब समय मिलेगा तो शेष चर्चाए कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पाठ होगा।11.02.1982 लोधी रोड, नई दिल्ली

८ चरित्र और मानवता—12 02 1982

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद-मंत्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में उस मेरे देव, जो विज्ञानमयी स्वरूप माना गया है जिसका विज्ञान ही आयतन माना है। उस प्रभु की महिमा का गुणगान गाते रहते हैं। क्योंकि प्रत्येक वेदमंत्र उसकी गाथा गा रहा है। प्रत्येक परमाणु उसकी गति में गति कर रहा है। मानव उस प्रभु के गर्भाशय में विद्यमान होकर के भिन्न-भिन्न प्रकार की क्रीड़ा कर रहा है। जिस प्रकार माता के गर्भस्थल में शिशु ओत-प्रोत रहता है, और वहीं से वह नाना प्रकार के पदार्थों को पान करता रहता है। इसी प्रकार हम जितने भी प्राणी इस संसार में हैं, वह उस परमपिता परमात्मा के गर्भाशय में क्रीड़ा कर रहे हैं। क्योंकि हमारा मानवीय जीवन सदैव आभा में परिणत रहा है।

देवत्व

मुझे नाना प्रकार की प्रेरणाएं प्राप्त होती रहती हैं। परंतु वेद मंत्र उस परमपिता परमात्मा की आभा में रमण कर रहा है। क्योंकि यह उसका ज्ञान है और उसी का विज्ञान है। जिस ज्ञान और विज्ञान में रमण करता हुआ मानव अपने में प्रसन्न रहता है। इसी प्रकार प्रत्येक अपनी-अपनी ध्वनियों में, परमात्मा के राष्ट्र में गति कर रहा है। तो आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वेद-मंत्र क्या कह रहा है? वेद का मंत्र कहता है, हे मानव! तू अपनी आयु को दीर्घ बनाने वाला बन, और आयु तेरी उस काल में दीर्घ बनेगी, जब तू देवता बनेगा और देवता कैसे बनता है? जब प्रभु का चिंतन करता हुआ, अपनी इंद्रियों को संयम में करता हुआ, इंन्द्रियों से सुदृष्टि पान करता है। प्रत्येक इंद्रियों में जो विज्ञान है, उस विज्ञान को कार्य रूप देता है। तो तेरी आयु ऊर्ध्वा बनेगी और तू देवता बन जाएगा। यही देवता बनने का सहज मार्ग है क्योंकि मन इंद्रियों के ऊपर शासन कर रहा है। मन को पवित्र बनाना है और आहार और व्यवहार के द्वारा यह मन पवित्र बनता है और जब आहार और व्यवहार तुम्हारा पवित्र होगा, तो इंद्रियों में तपश्चर आ जाता है। ब्रह्मवर्चोसि आ जाता है। और इंद्रियां सुदृष्टिपान करने लगती हैं। तो वह मानव इस संसार में देवत्त्व को प्राप्त होता है। जो आंतरिक हृदय में विराजमान होने वाली आत्मा है, वह आत्मा सदैव प्रसन्न रहेगी और उसकी प्रसन्नता प्रभु से मिलान कराती है। तो इसलिए हमें एक-एक वेद के मंत्र के ऊपर प्रायः अध्ययनशील होना चाहिए। अपने जीवन को अध्ययन शील बनाना चाहिए। आज विशेष चर्चाएं देने नहीं आया हूँ। मेरे प्यारे महानंद जी अपने विचार व्यक्त करेंगे। जिनमें वह अपने उद्गार तो देते ही रहते हैं और उनके उद्गार की जो प्रणाली है, वे कुरीतियों के ऊपर अपने विचार देते रहते हैं।

पूज्य महानन्द जीः मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मंडल! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी-अभी मानव को देवता बनाने की चर्चा कर रहे थे। क्योंकि प्रत्येक वेदमंत्र देवता बनने के लिए कह रहा है। परंतु जब तक शिक्षा प्रणाली और मानव का वातावरण विशुद्ध नहीं बनेगा, तब तक मानव देवता कैसे बने? आज मैं पूज्यपाद गुरुदेव के विचारों पर टिप्पणी देना नहीं चाहता हूँ। विचार-विनिमय क्या? आज जिस स्थली पर हमारी आकाशवाणी जा रही है, वहाँ प्रातःकालीन याग का चलन और आयु की कामना की गई। परंतु आयु की कामना करना बहुत प्रियतम है। वेद का मंत्र कहता है, वेद की आभा, वेद का एक-एक शब्द महान् कहलाया गया है। मुझे स्मरण आता रहता है, पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में वर्णन कराया, कि मेरी प्यारी माताएं अपने पुत्र की कामना करने वाली गर्भ से ही तपस्या प्रारम्भ कर देती है। आधुनिक काल में तो यह चलन इतना विशाल नहीं रहा है परंतु यदि हम द्वापर के काल में और त्रेता के काल में, सतोयुग के काल में माताओं के जीवन पर दृष्टिपात् करते हैं तो प्रायः ऐसा

दृष्टिपात् होने लगता है कि वे माताएं अपने पुत्र के लिये कितना तप और कितना ज्ञानोपार्जन करती रही हैं। क्योंकि माताओं को ज्ञान होना चाहिये। अपने गर्भस्थल में जो अपनी अन्तरात्मा को, अंतर्ज्योति से अपने को दृष्टिपात् करने वाली रही हैं।

धर्म का मर्म

बहुत काल हुए माता कुन्ती का जीवन स्मरण आता रहता है। माता कुन्ती के गर्भ में आत्मा प्रवेश करती रही तो माता के हृदय में यह कामना जगी कि मुझे अपने पुत्रों को देवता बनाना है। तो धर्म की उपासना करने लगी और धर्मराज बनाने की उसकी चेष्टा बनी कि जो धर्म का पालन करने वाला हो। धर्म का पालन वही करता है जो सत्यवादी होता है। सत्यवादी ही धर्म के मर्म को जानता है। तो माता धर्म की उपासना करती रहती है। धर्म के ऊपर उनका बल रहता रहा। परंतु इंद्र की उपासना करने वाली, वही माता इंद्र की उपासना करती थी। इंद्र से अर्जुन और वायु जैसे पवन वेग में गति कर रहा है। अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कई काल में प्रकट कराते हुए कहा था कि जैसे पवन वेग में गति करने वाला है इसी प्रकार माता अपने पुत्रों को जन्म देने वाली बनी है। क्योंकि माता देवता बनाती है। परंतु माताओं को ज्ञान होना चाहिये। आयुः वेद का अध्ययन होना चाहिये। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में यह प्रकट कराया है कि संसार में आयु को देने वाली माता है यदि माता यह चाहती है कि मेरे पुत्र की मृत्यु न हो, तो माता उसे मृत्युजंय बना देती है। ब्रह्मवर्चोसि बना देती है। मैं यह कहू कि हे माता! तू वर्चोसि बन करके ब्रह्मचर्य को धारण करती हुई संतान को उपार्जन करने वाली बन। जिससे संसार में कुरीति न आ जाये। यहि राष्ट्र का भी निर्माण है। तो राष्ट्र भी जीवित होना चाहिए समाज के द्वारा।

विवेकी पुरुषों का निर्माण

मैं आधुनिक काल के जगत् को दृष्टिपात करता रहता हूँ मैं यह दृष्टिपात करता हूँ कि माताओं के गर्भ से होने वाली जो सन्तान है अथवा पुत्र-पुत्रियां हैं, उनमें मुझे नैतिकता सूक्ष्म दृष्टिपात् आती है। विद्यालयों में प्रवेश करता हूँ तो शिक्षा प्रणाली, लुप्त-सी मैं दृष्टिपात् करता हूँ। तो यह कहता रहता हूँ अपने मन ही मन में कि यह समाज कैसा बन गया है? नैतिकता क्यों नहीं रहती? माता की शिक्षा नहीं रही। पिता का अनुशासन नहीं रहा, राष्ट्र की नियमावली नहीं रही। तो समाज अस्त व्यस्त हो जाता है। मुझे स्मरण है जिस समय राजाओं का निर्वाचन होता रहा है तो धर्म की रक्षा के लिए और पुरुषों के लिये एक राष्ट्रकोष रहता है। और उस राष्ट्रकोष से विवेकी पुरूषों का निर्माण होता रहा है क्योंकि वेद का पठन-पाठन करने वाले और उनकी परीक्षा देने वाले बुद्धिमान होते रहे हैं। राष्ट्र की आभा कृतियों में मैं यह विचारता रहता हूँ कि राष्ट्रकोष में मूर्ख बनाने के लिये तो कोष बहुत है। परंतु बुद्धिमान और विवेकी बनाने के लिये द्रव्य का अभाव हो जाता है। यह वर्तमान समाज की एक प्रणाली है। हमारे वैदिक साहित्य में, हमारे यहाँ यह रहा है कि राष्ट्र, धर्म की रक्षा करने के लिये होता है। दर्शन की रक्षा करना राष्ट्र का मुख्य उद्देश्य होता है। परंतु वहाँ मूर्खवाद का निर्माण किया जाता है। वह राष्ट्रीय प्रणाली नहीं होती। जहाँ नैतिकता नहीं दी जाती वह गृह नहीं होता। जब बालक को शिक्षा में परिणत नहीं किया जाता तो वह मेरी प्यारी माता विशुद्ध नहीं होती।

माताओं का श्रृंगार

तो विचार विनिमय क्या? आज इस संबंध में कि मेरी प्यारी पुत्रियों और माताओं का श्रृंगार होना चाहिये। परंतु पदार्थों का श्रृंगार नहीं होना चाहिये। श्रृंगार होना चाहिये माता का, आभूषण माता की संतान है, पुत्रियां है, पुत्र हैं, जिनके कंठ में विद्या सजातीय हो जाती है। स्वर का आभूषण बहुत प्रिय है परंतु कण्ठ का आभूषण उससे भी विशेष प्रिय होना चाहिये। जिससे कंठ में विद्या हो और वह आचरणीय पुत्र होना चाहिये। वह विद्या, अनुशासन

में होनी चाहिये जिससे समाज में नैतिकता आकर के और बाल्य-बालिका अपने चरित्र का निर्माण करते हुए इस समाज की प्रणाली को ऊँचा बनाते रहे।

मुझे स्मरण आता रहा है। राजा दशरथ के यहाँ माताओं ने पुत्रों को नैतिकता दी थी, प्रभुत्व दिया। जब विद्यालय में विद्या अध्ययन करते थे तो अपने राष्ट्र में भी भ्रमण करते थे। गुरु की आज्ञा से, और राष्ट्र में अपने विचार देते हुए समाज को चरित्र की आभा में परिणत कराने में लगे रहते थे। मुझे स्मरण है मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में प्रकट कराया है कि ऋषि मुनि हिमालय की कंदराओं में, कजली बनो में निर्भय होकर के तपस्या करते थे और तपस्वी किसी-किसी काल में आते और राजाओं के यहाँ अपना उपदेश देकर के चले जाते थे। समाज को महान् बनाने में अपनी आभा प्रकट करते रहे हैं। मैं आज यह चर्चा इसीलिये कर रहा हूँ कि मेरी प्यारी माता! आज एक शिशु को अपनी शुभकामना प्रकट करने आया हूँ आयुष्मति वाला बाल्य देखो, दीर्घता को प्राप्त होता रहे।

मानवीयता की महानता

परंतु मैं उस काल की चर्चा कर रहा हूँ जिस काल में माता अपने पुत्रों को आचार्यों को समर्पित कर देती थीं और वह ब्रह्मचारी विद्यालय में नैतिकता को लेकर के आध्यात्मिकवाद को लेकर के, धर्म और मानवता की रक्षा के लिये अपने जीवन को न्यौछावर करते रहे हैं। राष्ट्र में चरित्रता को लाने के लिये और धर्म का प्रसार और मानवीयता को ऊँचा बनाते हुए अपनी मानवीयता को महान् बनाते रहे हैं। परन्तु यहाँ इस समाज को ऊचा बनाने में मेरी प्यारी माताओं का बहुत उर्ध्वा में सहयेग रहा है। परम्परागतों से ही माता अपने गर्भ से लेकर के और पांच वर्ष की आयु तक बालक की अपनी शिक्षा और उसको महान आयुष्मति बनाने, देवता बनाने की प्रेरणा देती रही है।

मगध राष्ट्र में भ्रमण

मुझे स्मरण है एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव और हम दोनों मगध राष्ट्र में पहुंचे। मगध राष्ट्र में महर्षि भद्रकेतु महाराज तपस्या कर रहे थे और भद्रकेतु ऋषि महाराज को 101 वर्ष तपस्या करते हो गये थे। उनके आश्रम में मृगराज भी आते, सिंहराज भी आते। जो दूसरे का भक्षण करने वाला सिंह हो जो मृग का भक्षण कर जाता हो, परन्तु वह ऋषि का विचित्र आश्रम, जहाँ सब एक पंक्ति में विद्यमान हों। ऋषि की यह एक धारणा बनी हुई थी, वह वेद ध्वनि को गाते थे। सामगान गाते थे, उनकी इतनी पवित्र ध्वनि थी और इतनी शुद्ध थी कि आत्मा से आत्मा का मिलान करने के लिये। आत्मा सब में होता है। मृगराज में भी है, सिंहराज में भी है। अहिंसा में परिणत होने वाला शब्द मानव को अहिंसा परमोधर्मी बना देता है। परंतु ऋषि के वे विशुद्ध तपस्या मयी शब्द सिंहराज और मृगराज एक पंक्ति में होकर के श्रवण कर रहे थे।

महर्षि शौनक का आश्रम

जब पूज्यपाद गुरुदेव और हम उस ऋषि के द्वार पर पहुंचे तो ऋषि से पूज्यपाद गुरुदेव ने यह प्रश्न किया कि हे ऋषिवर! यह आभा तुम्हें कहाँ से प्राप्त हुई है? तो ऋषि ने यह उत्तर दिया कि मैं भद्रकेतु ऋषि, हमारा जो गोत्र है वह अंगीरस कहलाता है। और अंगीरस गोत्र में जो मेरी प्यारी माता भद्रेशमी कहलाती है। जब मैं माता के गर्भ में था तो माता अपने गृह को त्याग करके भयंकर कजली बन में चली गई थी। वहाँ शौनक नाम के ऋषि रहते थे। शौनक नाम के ऋषि शांत मुद्रा में थे। उनके चरणों में ओत-प्रोत होकर के वह गान गाने लगी। ऋषि ने कहा पुत्री! तू धन्य है। निर्भयता में उनका इतना विवेक जागा कि एक समय सिंहराज जब उनके समीप आया तो सिंहराज से प्रार्थना कर रही है माता और कह रही है हे सिंहराज! क्या तू मुझे भक्षण करना चाहता है? मेरी आयु

अध्यात्मवाद

अभी दीर्घ है तू मुझे भक्षण नहीं कर सकता। परंतु यदि तू मुझे भक्षण करना चाहता है तो यह तेरी धारणा अशुद्ध है। माता एक विवेकमयी शब्दों का उच्चारण कर रही थी। निर्भय हो करके, प्रभु के मध्य में विद्यमान होकर वह तपस्विनी, गायत्री छंदों में रमण करती रही। निर्भयता की आभा में रमण करती हुई सत्य उच्चारण करना और वेद की ध्वनि में रत रहना। शौनक ऋषि महाराज उसको शिक्षा देते रहे। और जब वह गान गाती थी तो मृगराज, सिंहराज पंक्तियों में ओत-प्रोत होकर के, सर्प राज उनके शब्दों को ग्रहण करते रहे हैं। उस समय माता के गर्भस्थल में, माता की निर्भयता, माता का ज्ञान मेरे अंतःकरण में अंकित होता रहा। गर्भ से पृथक् हुआ तो माता जब लोरियां पान कराती रहती, तो गान गाती रहती, और शौनिक के आश्रम में बालक की पालना हुई। जब पालना हुई तो मैं बाल्यकाल में था ऋषिवर! तो मैं कजली बन में चला जाता, सिंहनी के पुत्र और पुत्रियों को लाकर के मैं उनसे विनोद करता रहा, निर्भयता का जो उपदेश है यह माता से प्राप्त होता है। यह आचार्य के चरणों में जाने से प्राप्त हुआ। उनका उच्चारण किया हुआ वाक् मेरे हृदय में अंकित हो गया और अंकित हो जाने के पश्चात मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से कहा-कि क्या माता इतनी शिक्षा दे सकती हैं? पूज्यपाद गुरुदेव ने कहा कि वातावरण मानव को बाध्य कर देता है, उसकी जो धारणा बन जाती है, वह धारणा उसे वैसा ही बना देती है। और उसको निर्माणित कर देती है। पूज्यपाद गुरुदेव और मैंने, दोनों ने निर्भयता और ऋषि भद्रकेतु के आचरणों को अपने में धारण करते हुए वहाँ से गमन किया।

देखो, ऋषि-मुनियों की आभांए विचित्र रही है। मेरी प्यारी माताओं का कितना सहयोग रहा है, ऋषियों को अहिंसा परमोधर्मी बनाने के लिये। परन्तु माताएं ऐसी भी होती हैं जो कई दैत्यों का निर्माण भी करती रही हैं। दैत्य, जो हिंसक रहे हैं, हिंसा करते रहे हैं। आत्मा की प्रेरणा को शांत करने वाले ही दैत्य कहलाते हैं। अन्तरात्मा से प्रेरणा जागती है, उसको दमन करते रहते हैं। जब दमन करने में अति हो जाती है तो वे दैत्य बन जाते हैं। परन्तु जो आत्मा की प्रेरणा को ग्रहण करते हैं, उसका पालन करते रहते हैं, और पालन करते-करते देवता बन जाते हैं।

ज्ञान की धारा

मैं आज पूज्यपाद गुरुदेव की आभा में प्रारम्भ का जो वेदमंत्र है, उसके ऊपर अपनी कुछ विवेचना दे रहा हूँ। पूज्यपाद गुरुदेव तो सदा से ही परम्परागतों से ही अपनी ज्ञान की धारा, जैसे गंगा प्रवाह में गति करती है, जल प्रवाह से जा रहा है, इसी प्रकार ज्ञान का जो स्रोत है, वह इतना महान् गति कर रहा है, वह महान् है। जब मैं आधुनिक काल की माताओं को लेता हूँ तो माता श्रृंगार करने में तो प्रियतम है, परन्तु जब कंठ के श्रृंगार के ऊपर कोई प्रश्न करता हूँ कि कितना ज्ञान है, कितना विवेक है और विवेक के साथ में बालक को कितनी विवेकमयी धाराओं का प्रतिपादन करा रही है, तो उसमें माता शून्य बिन्दु हो जाती है, शून्यता को प्राप्त होती रहती है। हे माताओं! संसार के निर्माण में, इस राष्ट्र के निर्माण में, संसार की रचना में इन मेरी माताओं का विशेष हाथ रहा है। हे बालक! तू आयु में दीर्घ होने वाला, सुमति स्वंजनः आभा को प्राप्त होता रहे। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाने वाला हूँ। आज हमारे वाक् ये क्या कह रहे हैं? मैं विशेष आधुनिक जगत् की श्रेष्ठता का वर्णन नहीं कर रहा हूं। क्योंकि मैं विद्यालय में जाता हूँ, आधुनिक जगत् में, राष्ट्र में जाता हूँ, विज्ञानशालाओं में गति करता हूँ, तो कर्त्तव्य से समाज विहीनता को प्राप्त होता जा रहा है। वह तो मैंने पूज्यपाद गुरूदेव से प्रश्न किया था। वायुमंडल यह कह रहा है कि आधुनिक जगत् को रक्त में जाने में कोई दूरी नहीं है। क्योंकि जब कर्त्तव्यवाद में विहीनता आ जाती है तो समाज में अशुद्धता आ जाती है। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरूदेव से आज्ञा पाऊंगा। आज मैं केवल इतना वाक् उच्चारण करने आया हूँ।

अध्यात्मवाद

पूज्यपाद गुरुदेव मेरे प्यारे ऋषिवर! आज मेरे प्यारे महानंद जी ने बहुत परम-प्राचीन गाथा को लिया। यह गाथाएं बड़ी विचित्र है। मेरे पुत्र के हृदय में वेदना रहती है, और यह वेदना एक ऐसी वेदना है जो चरित्र और मानवता की वेदना है, इन वेदनाओं के ऊपर प्रत्येक को अपना विचार विनिमय करना ही चाहिये। आज कोई विशेष चर्चाएं हमें उच्चारण नहीं करनी है। मानव को मंगलमय रहने के लिये, प्रभु की उपासना करते हुए मनके की भांति अपने को सूत्र में पिरोते हुए अपने मानवत्व को ऊँचा और महान् बनाने के लिए हमें उत्सुकता रहनी चाहिये। यह आज का वाक् अब समाप्त होने जा रहा है। अब वेदों का पठन-पाठन होगा, इसके पश्चात् यह वार्ता समाप्त होगी।12.02.1982 लोधी रोड, नई दिल्ली

९ परमात्मा का आयतन—28 02 1982

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद-मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद-मंत्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद-वाणी में उस मेरे देव, जो यज्ञमयी स्वरूप माना गया है उस ब्रह्म का यज्ञ ही आयतन माना गया है।

आज का हमारा वेद मंत्र उस परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसके यज्ञमयी स्वरूप का वर्णन कर रहा था। हमारे यहाँ नाना प्रकार के यागों का चयन परम्परागतों से होता रहा है। ऋषि मुनियों ने, इन अनुसंधानवेत्ताओं ने वेद के मंत्रों को लेकर के ऊंची-ऊंची उड़ान उड़ी है। इस याग के संबन्ध में एक ब्रह्माण्ड की आभा का वर्णन किया है। क्योंकि जैसे परमपिता परमात्मा ने इस ब्रह्मांड की रचना की है और रचना करने के पश्चात् वही रचनामयी संसार उसका आयतन बन गया है। उसका गृह बन गया है। इसी प्रकार ऋषि-मुनियों ने भी यह माना है कि यह जो याग है, नाना प्रकार के यागों का चलन परम्परागतों से मानव मस्तिकों में रहा है और ऋषि-मुनियों ने ऊंची-ऊंची उड़ान उड़ी है।

विज्ञानमयी धाराएँ

कहीं बेटा! यजमान विद्यमान हो करके, जल का सिंचन कर रहा है, वह समुद्र की कल्पना कर रहा है। दक्षिण में विद्यमान होकर के वह अपने विचारों की विद्युत धाराएँ दिशाओं में ओत-प्रोत कर रहा है। कहीं पश्चिम दिशा में वह वरूण की कल्पना कर रहा है सरस्वती और सोम उत्तर में मानव को प्राप्त होता रहा है। यह भिन्न-भिन्न प्रकार की उड़ान ऋषि मुनियों ने वेद की धाराओं से प्राप्त की है और वेद-मंत्रों के ऊपर उन्होंने अपने विचार को विस्तृत करते हुए मानवीयता की आभा में रमण किया है। समाज की आभा में उसको परिणत कर दिया है क्योंकि समाज का उससे कल्याण होता है। परन्तु वैज्ञानिक जनों ने इसी कल्पना को जब ऊर्ध्वा में लिया और उन्होंने जब इसके ऊपर उड़ान उड़ी, तो मुनिवरो! कहीं प्रकाश की कल्पना कर रहा है, अग्नि में प्रवेश कर रहा है, कहीं दक्षिण में प्रवेश करके विद्युत की तरंगों को जान रहा है, कहीं पश्चिम दिशा में वह सोम और अन्न के भंडार की आभा को परिणत कर रहा है। उसी को लेकर के उस प्राण में सोम की कल्पना कर रहा है। वह सोम में रमण करता हुआ विज्ञान की तरंगों को जान रहा है और उन्हीं धाराओं को लेकर के वैज्ञानिकों ने नाना प्रकार की विज्ञानमयी धाराओं का वर्णन किया है।

सर्वोपरी याग

मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! हमारे यहाँ राजा और प्रजा मिल करके दोनों का विचार समन्वय होता रहा है और विचार-विनिमय करने वालों ने याग को सर्वोपरी माना है। राजाओं के यहाँ, जब अश्वमेघ यागों का वर्णन होता है तो प्रजा के कल्याण के लिये राजा अपना चयन करता है और याग का जब चयन करता है तो समाज का चरित्र उससे ऊँचा बनता है। क्योंकि राजा जिस क्रिया कलाप में अपने को ले जाता है प्रजा भी उसी के अनुसार अपने जीवन को परिवर्तित करने लगती है। मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा जब मैं त्रेता के काल में चला जाता हूँ और मुझे सामाजिक व्यवस्थाएँ स्मरण आने लगती हैं, राजाओं की पद्धतियां, उनके गृह के क्रिया-कलाप जब स्मरण आते हैं तो मुझे प्रायः ऐसा दृष्टिपात् होता है जैसे मैं उस काल में अपने को अनुभव कर रहा हूँ।

तीन प्रकार के प्राणी

मुनिवरो! त्रेता के काल में राजा रावण के यहाँ याग होता रहता था। वह प्रातः कालीन यागों में रत रहते थे। एक समय महारानी मंदोदरी और राजा रावण अपने गृह की सुंदर यज्ञशाला में विराजमान थे जिसमें भिन्न-भिन्न प्रकार के आसन लगे हुए थे क्योंकि हमारे यहाँ तीन प्रकार के प्राणी होते हैं कुछ जिज्ञासु होते हैं, कुछ ब्रह्मवेत्ता होते हैं और कुछ ब्रह्मनिष्ठ होते हैं। मेरे प्यारे! सर्वत्र उस यज्ञशाला में विद्यमान होकर के इसका चयन करते रहते थे। एक समय प्रातःकालीन अपनी यज्ञशाला में याग कर रहे थे। नाना ब्रह्मवेत्ता और महर्षि भारद्वाज उनकी यजशाला में विद्यमान थे। जब राजा रावण और मंदोदरी याग कर रहे थे तो महर्षि भारद्वाज मुनि ने एक प्रश्न किया कि तुम यह जो याग कर रहे हो इसमें क्या अनुपम रहस्य है? उन्होंने कहा कि यह जो हम याग करते हैं यह हमारा कर्त्तव्य माना गया है, हम अपने कर्त्तव्य का पालन करते हैं। क्योंकि यह आत्मा का भोजन है। यह आत्मा का कर्म है। जहाँ आत्मा का कर्म आता है वहीं पंच महाभूतों का वर्णन आता है। वेद के ऋषि कहते हैं कि आत्मा का लोक ही पंच महाभूत माना गया है और जो पंच महाभूत है उसका कर्म भी याग माना गया है क्योंकि याग ही ब्रह्म का आयतन माना गया है ब्रह्म उसमें वास करता रहता है।

तो मेरे पुत्रो! जहाँ ब्रह्म की याचना आती है, जहाँ ब्रह्म की रचना का वर्णन आता है, जहाँ आत्मा के लोकों की चर्चाएं आती हैं उसके कर्म की महानता आती है तो वहाँ मुनिवरो! यह आत्मा ही सिद्ध होता है। क्योंकि आत्मा ही एक ऐसा है जो प्रभु का आश्रय लेकर यह पंच महाभौतिक पिंड है, यह इसका गृह है इस गृह से वह उपराम हो सकता है अन्यथा नहीं होगा।

वायुमण्डल की पवित्रता

उन दोनों ने महर्षि भारद्वाज को यह उत्तर दिया। भारद्वाज मुनि ने कहा हे रावण! इस याग का विज्ञान से क्या सम्बन्ध है? उन्होंने कहा यह सर्वत्र जितना भी याग कर्म है, यजमान जैसे विद्यमान होता है उसका विज्ञान से सम्बन्ध है क्योंकि उसमें तरंगें हैं। जितना परमाणुवाद है, वह परमाणुवाद गति करता रहता है और जो भी हम विचारों से परमाणुओं को देते हैं और साकल्य के परमाणुओं को अग्नि की विद्युत् धाराओं पर विद्यमान करके हम जब वायुमंडल में प्रसारित कर देते हैं तो वायुमंडल पवित्र हो जाता है जैसे गृह में मानव सद्विचारों से रहता है उन्हीं विचारों को लेकर के जब वह अपने गृह को पवित्र बनाता है तो माता-पिता जिस चयन से अपने गृह में वास करते हैं वही चयन उसके स्वर्ग का और स्वर्ग उसका आश्रय बन जाता है। प्रत्येक बाला-बालिका मानवत्व उसी से आश्रित होकर के अपने क्रिया-कलाप में लग जाते हैं।

मौलिक धारा

जब उन्होंने यह वाक् प्रकट किया तो ऋषि मौन हो गए और ऋषि ने कहा विज्ञान से इसका कोई समन्वय नहीं हुआ। राजा रावण ने कहा भगवन्! और श्रवण कीजिए विज्ञान मानव की एक मौलिक धारा है, जिस विज्ञान में मानव सदैव रमण करता रहता है। माता के गर्भ से बालक का जन्म होता है। ज्यों-ज्यों संसार के वायुमंडल में आता है। वह अपना विकास करके वैज्ञानिक तथ्यों को प्राप्त करने लगता है। परन्तु वही मानव जो गंभीर धाराओं में रमण करता है तो विज्ञान की बहुत-सी मौलिक विद्युत धाराएँ उसके अंग संग आकर के, उसके अंग संग हो करके निर्माणित करती रहती हैं।

जब यह वाक् चलता रहा तो महारानी मंदोदरी से ऋषि ने यह कहा-हे देवी! तुम जो यह याग करती हो इसका तुम्हारे मौलिक जीवन से क्या सम्बन्ध है? महारानी मंदोदरी ने कहा-कि हे प्रभु! जब मैं याग कर्म करती हूँ तो मेरा अन्तरात्मा प्रसन्न होता है अन्तरात्मा में धाराएं जन्म लेने लगती है और गृह, माता अपने पुत्र और पुत्रियों का यदि विधिवत् निर्माण कर सकती हैं तो यह याग के द्वारा ही हो सकता है। जब अग्निहोत्र करते हैं बाल्य-

बालिका तो वह गृह स्वर्ग गामी बन जाता है, स्वर्गवत् बन जाता है। भारद्वाज इस उत्तर को पान करके मौन हो गये।

तो विचार-विनिमय क्या? हमारे यहाँ, राजा-महाराजाओं के यहाँ प्रजा के सुखार्थ याग होते रहे हैं क्योंकि प्रजा भी याज्ञिक बन जाये और राजा भी तो वहाँ एक दूसरे के शासन की प्रवृत्ति नहीं होती। जहाँ शासन प्रवृत्ति नहीं रहती, वहाँ कर्त्तव्यवाद परिणत हो जाता है। मुझे स्मरण है बेटा! राजा रावण का राष्ट्र। एक समय ऐसा हो गया था जब दूसरे राजा उससे शिक्षा ग्रहण करते हुए अपने को धन्य स्वीकार करते रहे हैं। ऋषि-मुनि आते, चर्चाएँ होती रहती। विवेकी पुरुष वेदामृत का पान करते रहते थे, अग्न्याधान हो रहा है।

राजा रावण द्वारा अश्वमेध याग

एक समय बेटा! राजा रावण ने एक अश्वमेघ याग भी कराया था जब उनके पुत्र मेघनाद ने इन्द्र को विजय कर लिया था। विजय करने के पश्चात् पातालपुरी में अहिरावण का राष्ट्र हो गया। सोमतीति राष्ट्र में नारान्तक का राष्ट्र हो गया। इस महाद्वीप में राजा रावण की आभा छा गयी क्योंकि उसकी अच्छाइयाँ, उसकी मानवता और उसके क्रिया कलाप को दृष्टिपात् करके संसार में उसकी विशेषता महान बन गयी। एक समय मुनिवरो! उन्होंने अश्वमेध याग किया जब अश्वमेघ याग किया तो उन्होंने अश्वमेघ याग का जो क्रिया कलाप है उस प्रकार का कर्म किया। अश्वमेघ स्वर्ण से सजातीय अश्व को त्याग दिया जाता है और वह सर्वत्र राष्ट्रों में भ्रमण करता है। जब कोई राजा यदि उसको अपने में ग्रहण कर लेता है तो उस राजा को उससे संग्राम करना होता है या मनोनीत होकर के कर्त्तव्यवाद में उसकी आभा में विचार विनिमय परस्पर हो जाते हैं तो जब यह अश्वमेघ याग करने के लिये तत्पर हुए तो अश्व को त्याग दिया। इस सर्वत्र पृथ्वी पर अश्व ने भ्रमण किया परन्तु उस घोडे को, अश्व को कोई भी ग्रहण करने वाला नहीं रहा। जब कोई भी ग्रहण करने वाला नहीं रहा तो जब अश्व उनके राष्ट्र में आ गया तो उस समय उन्होंने अपने पूज्य गुरुओं से कहा-कि महाराज! मेरे यहाँ एक अश्वमेघ याग होना चाहिये। राजा रावण की प्रजा में भ्रमण किया कि कोई एक-दूसरे का ऋणी तो मेरे राष्ट्र में नहीं है, क्योंकि ऋण भी कई प्रकार के होते हैं। जैसे माता-पिता है माता-पिता अपने पुत्र के ऋणी तो नहीं हैं, पुत्र माता-पिता का ऋणी तो नहीं है। मेरे प्यारे! आचार्य शिष्यों का ऋणी तो नहीं है, और शिष्य आचार्य का ऋणी तो नहीं है।

ऋण

मेरे प्यारे! ये ऋण कई प्रकार के होते हैं। ये कैसे ऋण हैं? जैसे माता है, माता-पिता यदि सन्तान को जन्म देते हैं और जन्म देने के पश्चात् उसको सुयोग्य नहीं बनाते, ऊँचा प्रदर्शक नहीं कराते तो वे माता-पिता उस पुत्र के ऋणी हो गये। जो पुत्र योग्य बनने के पश्चात् सुयोग्य बनकर माता-पिता की सेवा नहीं करता, माता-पिता के अनुसार अपने जीवन को व्यतीत नहीं करता वह पुत्र माता-पिता का ऋणी कहलाता है।

मेरे पुत्रो! इसी प्रकार आचार्य है। यदि आचार्य के कुल में ब्रह्मचारी अध्ययन कर रहा है, यदि आचार्य उस ब्रह्मचारी को सुयोग्य नहीं बनाता, उसको उस पथ का प्रदर्शन नहीं कराता, जिस पथ को वह ब्रह्मचारी चाहता है, जिस पथ का वह इच्छुक है। मुनिवरो! यदि उसको वह विद्या उस प्रकार की नहीं दे सकता तो मानो वह ब्रह्मचारी का ऋणी बन जाता है। और यदि आचार्य कुल में ब्रह्मचारी सुयोग्य, मनोवांछित शिक्षा पाने के पश्चात् यदि वह माता-पिता की, आचार्य की आज्ञा अनुसार अपने ज्ञान के अनुसार अपने जीवन को व्यतीत नहीं कर रहा है, तो वह आचार्य का ऋणी बन रहा है। वह ऋणी कहलाता है तो यहाँ एक-दूसरे का मानव ऋणी तो नहीं है।

देव ऋण

हमारे यहाँ देव ऋण भी होता है। देव ऋण किसे कहते हैं? हमारे इस मानव शरीर में देवता अपना कार्य

कर रहे हैं। मानो जैसे अग्नि, जल, तेज वायु है यह सभी देवता है। चैतन्य देवता, आचार्य गुरूजन है यदि हम देव पूजा नहीं कर रहे हैं याग नहीं कर रहे हैं, सुगन्धि नहीं दे रहे हैं। दुर्गन्धि दे रहे हैं तो हम देवताओं के ऋणी बन रहे हैं। देव ऋण से उऋण होने के लिये हमें याग करना है, हमें सुगन्धि देना, हमें अपने को सुगन्धित बनाना है और इस समय को सुगन्धित बनाना है। तो देव ऋण से हम उऋण हो जाते हैं।

ब्रह्मदान

मुनिवरो! हम दानी बनें। दान किसका होता है? बेटा! दान कई प्रकार का होता है। जैसे ब्रह्मदान अप्रतम् कहलाता है यह ब्रह्म दान, ब्रह्म विद्या इस तरह की ब्रह्म विद्या नहीं देता है तो मुनिवरो! वह ऋणी है। ब्रह्मदान को देना चाहिये। यदि द्रव्य किसी के द्वारा है और उस का सदुपयोग करके पूजा की जाती है तो उससे सम्मति कर्म होता है, समूह एकत्रित होकर के सद् विचार होते हैं, राष्ट्र और मानवता का कल्याण होता है वह दान इस संसार में, मानवता का कल्याण करता है। वह दान इस संसार के लिये, वह दानी महान परम दानी कहलाता है। अन्न का दान देना चाहिये क्योंकि अन्न को देने से सर्वत्र दान में प्रवृत्ति हो जाती है। तो इसी प्रकार बेटा! मानव को एक-दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिये। ऋण से उऋण रहना चाहिये। क्योंकि जो मानव ऋण से उऋण हो जाता है वह मानव इस संसार में धन्य हो जाता है।

राजा का कर्तव्य

मुझे स्मरण आता रहता है। राजा रावण के यहाँ जब अश्वमेघ याग हुआ अश्वमेघ याग वही राजा कर सकता है जिस राजा के राष्ट्र में एक-दूसरे का मानव ऋणी नहीं रहेगा और जो इस ऋण से उऋण होता रहेगा वह राजा अश्वमेघ याग करता है। यदि राजा की प्रजा ऋणों में रहती है तो राजा का कर्त्तव्य है कि राजा समाज को उस मार्ग पर लाने का कार्य करें। समाज को उस परिस्थिति में लाकर के परिणत करे जिससे समाज का कल्याण हो जाये, समाज धन्य हो जाये, ऋणी न रहे। प्रत्येक मानव दूसरे मानव का सहयोगी बनकर के इस समाज को उत्थान और जीवन देने वाला बने।

अश्वमेध का विधान

मेरे पुत्रो! कुछ ऐसा स्मरण है कि राजा रावण ने अपने राष्ट्र में भ्रमण किया कि मेरे राष्ट्र में कोई ऋणी तो नहीं है, तो माता बाल्यकाल में ही अपने बालक को शिक्षा दे रही है। हर गृह में, हर नगर में एक महान बुद्धिमान पुरोहित उस काल में था। ऊर्ध्वा में गति करने वाला है राष्ट्रीय व्यवस्था उसके साथ रहती। राजा रावण का राष्ट्र एक व्यवस्थित कहलाता था इसलिये बिना संग्राम के, बिना किसी कृतियों के सर्वत्र उस के राष्ट्र में सूर्य अस्त न होता था। कहीं न कहीं सूर्य का प्रकाश किसी राष्ट्र में रहता था। मेरे प्यारे! राजा रावण ने अश्वमेघ याग किया। अश्वमेघ याग का विधान है, कि जब राजा अश्वमेघ याग करता है तो ब्रह्मा का स्थान सर्वत्र ऊर्ध्वा में होता है। परन्तु, जिस समय अश्वमेघ याग होता है, बेटा! अश्व कहते हैं। राजा को, और मेघ कहते हैं प्रजा को। जो प्रजा के सुखार्थ राजा क्रिया कलाप बनाता है उसको अश्वमेघ याग कहते हैं। राजा रावण के यहाँ, जब नाना ऋषि-मुनियों का समूह एकत्रित हुआ। संकेतु मुनि महाराज उस याग के ब्रह्मा बने और महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज उद्गाता बने। कवन्धी इत्यादि ब्रह्मचारियों का चयन हुआ, चयन होने के पश्चात् वह याग होता है तो इसका विधान यह है कि जब याग पूर्णता को प्राप्त होता है तो उस समय एक राज्याभिषेक होता है और राजा उस स्थान पर विद्यमान होता है जहाँ ब्रह्मा यज्ञशाला में विद्यमान होता है। उस स्थली पर राजा को नियुक्त किया जाता है। उसका राज्याभिषेक होता है। राज्याभिषेक होने के पश्चात् वह वहां नीचे विद्यमान होता है? क्योंकि उस राजा के राष्ट्र में, वह ब्राह्मण भी, ब्रह्मा पद को प्राप्त होने वाला भी, प्रजा की संज्ञा में परिणत हो जाता है। प्रजा की संज्ञा में जब

परिणत हो जाता है तो ऐसी राष्ट्रीय व्यवस्था अपने अपने युगों में होती है।

तो परिणाम क्या? यह व्यवस्था होती रही है। हमारे यहाँ अश्वमेघ यागों का वर्णन आज के वेद पठन-पाठन में प्रायः आ रहा था हमें अश्वमेघ याग करने चाहिये। अश्वमेघ याग करने वाला, प्रजा में ह्रस नहीं होता। प्रजा उसके चरणों में रहती है। विवेकी पुरुष विवेकी बने रहते हैं। समाज में बुद्धिमता होती है। परन्तु उसमें एक राष्ट्रीय व्यवस्था, बुद्धिमान और राष्ट्र दोनों सामूहिक राष्ट्रीयता को परिणत कर देते हैं। मुझे स्मरण है राजा रावण ने अश्वमेघ याग किया। अश्वमेघ याग एक ऐसा याग है जिसमें प्रजा और राजा दोनों समन्वित होकर के प्रजा, संसार अपने कर्त्तव्य के पालन में संलग्न हो जाते हैं। उनकी क्रिया-कलाप महानता में परिणत होती रहती है।

इन्द्र

मेरे पुत्रो! आज का विचार क्या? याग, मैं तुम्हें यह विचार देने जा रहा हूँ कि संसार में अश्वमेघ याग होने चाहिये। वाजपेयी याग भी राजा रावण ने किया था। वाजपेयी याग ब्रह्मयाज्ञियों में, ब्रह्मवेताओं में एक याग होता है। एक ही अश्वमेघ याग नहीं हुआ है उस काल में। महाराजा मेघनाद ने भी एक अश्वमेघ याग किया था त्रिपुरी में। त्रिपुरी में जहाँ इन्द्र वास करता था। इन्द्र को विजय करने के पश्चात् वह इन्द्र विजयी कहलाये गये। इन्द्र को विजय उन्होंने तपस्या से किया था। अपनी मानवता की आभा से उन्होंने इन्द्र को विजय किया था। सब राजाओं का एक शिरोमणि राजा होता है उसका नाम इन्द्र कहलाता है। हमारे यहाँ इन्द्र एक उपाधि मानी गई है। परमात्मा का नाम भी इन्द्र कहलाता है, दक्षिण दिशा को भी इन्द्र कहते हैं, हमारे यहाँ आत्मा को भी इन्द्र माना गया है। परन्तु जो राजाओं के ऊपर एक राजा होता है उसका नाम इन्द्र कहलाता है, इन्द्र लोक भी होते हैं। परन्तु आज केवल मैं तुम्हें पर्यायवाची नाम देता हुआ, केवल यह कि इन्द्र नाम हमारे यहाँ राजा को कहा गया है जो राजा सब राजाओं के ऊपर होता है वह राजा इन्द्र की उपाधि को पान करने वाला होता है। इस प्राप्त करने वाले राजा रावण के पुत्र मेघनाद भी रहे हैं। उन्होंने इन्द्र को विजय किया।

विज्ञान का नृत्य

मेरे प्यारे! नाना प्रकार की विधाएं उस काल में थीं। मेघनाद जहाँ विज्ञान में परिणत थे वहाँ वह गान विद्या में भी महान् थे। जब गान विद्या गाते थे वह दीपक-दीपावली राग भी जानते थे, मल्हार राग भी जानते थे। वह अश्व-कृतिभा राग भी जानते थे। अणु का विभाजन करना भी महाराजा मेघनाद जानते थे। विज्ञान में रत रहते थे। तो जहाँ वह राजा थे, वहाँ विज्ञानवेत्ता भी थे। सर्वत्र विज्ञान उनके समीप आकर के नृत्य करते रहे हैं। क्योंकि विज्ञान का नृत्य होना ही मानव के जीवन में मानवीय सफलता कहलाती है।

तो मेरे प्यारे! आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं कोई व्याख्याता नहीं हूँ। केवल परिचय देने के लिये आया हूँ। परिचय देना ही हमारा कर्त्तव्य माना गया है। हमारे यहाँ याग होने चाहिये। क्योंकि याग ही आत्मा का लोक माना गया है। आत्मा का कर्म भी याग ही माना गया है। वह परमात्मा का आयतन माना गया है परमात्मा याग में ही वास करता है। क्योंकि संसार में जितनी शुभकामना हैं, सुविचार हैं, उस सर्वत्र कर्मों में यागों की प्रतिभा कहलाती है। आज मैं विशेष चर्चा तुम्हें देने नहीं आया हूँ विचार यह देने के लिये आया हूँ कि हमें याग में रत रहना चाहिये। हमें याज्ञिक बनना चाहिये, क्योंकि याज्ञिक बनने वाले की संसार में मृत्यु नहीं होती। याग कर्म करने वाला संसार में देव लोक को प्राप्त होता है। देवताओं की सभा में वह सुशोभनीय होता है। वह महानता में रमण करने वाला होता है।

मुझे स्मरण आता रहता है जहाँ अश्वमेघ याग त्रेता काल में होते रहे हैं, वहाँ महाराजा रावण उनकी पत्नी महारानी मन्दोदरी जब प्रातः कालीन याग करते थे। तो उन दोनों के विचार-विनिमय भी होते थे कि महाराज! यह

जो याग है, यह हमारा जो विचार है यह हमें कहाँ पहुँचाता है? रावण कहा करते थे-कि यह हमें देव-लोक में पहुँचाता है, हम देवताओं की सभाओं में सुशोभितता को प्राप्त होते हैं, हम देव लोक को प्राप्त होकर के वायुमंडल में, द्यौ लोकों में अपनी आभा को ले जाते हैं। क्योंकि द्यौ लोक ही प्रभु का तेजोमयी है, वह तेजोमयी कहलाता है। जैसे वायु-अग्नि है यह प्रभु की तेजोमयी है, इसी प्रकार द्यौ लोक भी महान् तेजोमयी है उसी से द्यौ लोक में जब हमारे सुविचार, हमारी शुभकामना जाती है, वही धाराएँ क्योंकि चन्द्र, सूर्य, द्यौ लोक से सहायता लेता है, द्यौ लोक से प्रकाश लेता है। वही प्रकाश पृथ्वी पर आता है पृथ्वी में नाना प्रकार के खनिजो का निर्माण होता है। स्वर्णमयी, नाना धातुओं का निर्माण होता है। वही तरंगवाद वायु में गति करता हुआ सूर्य की किरणों के साथ गति करता रहता है लोकों में भी यह चित्रावलियां किरणों के साथ गति करती हैं। विज्ञान की धाराएं महानता में रमण करती रही हैं।

आज मैं तुम्हें विशेषता में ले जाना नहीं चाहता हूँ। विचार-विनिमय क्या? कि हम परमपिता परमात्मा की आभा में रमण करते रहें और विज्ञान में रमण करते हुए अपनी विज्ञानमयी तरंगों में भाषित होते रहें जिससे संसार एक महान् सांसारिक आभा में रमण करता हुआ, अपने कर्त्तव्य का पालन करता हुआ, अपने जीवन को याग में ले जाता हुआ, और स्वाहा कह करके अग्नि की धाराओं पर अपने शब्द को अन्तरिक्ष में परिणत कराने वाला हो। यह है बेटा! आज का वाक्। अब मुझे समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रकट करूंगा।

कर्तव्य का पालन

आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या? कि हम परमपिता परमात्मा की आभा में रमण करते रहे और सदैव यागों में और अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए एक-दूसरे के ऋणी न बने क्योंकि ऋण ही संसार में मानव की अन्तरात्मा को नष्ट कर देता है। आत्म बल को नष्ट कर देता है। उसमें आत्म बल नहीं रहता, जो ऋणी रहता है इस संसार में जो उऋण होता है, वह स्वतंत्र रहता है वह अपनी मानवता में रमण करता रहता है वह देवताओं की सभाओं में भी चला जाता है। वहाँ भी देवत्व को प्राप्त होता है। राजा प्रजा और कोई भी एक-दूसरे का ऋणी इस संसार में नहीं रहना चाहिये। यह है बेटा! आज का हमारा वाक्। अब मुझे समय मिलेगा तो शेष चर्चाएँ कल प्रकट करूंगा। आज का वाक् समाप्त। अब वेदों का पठन-पाठन होगा।28.02.1982 लाक्षागृह, बरनावा

१० दानशीलता--28.04.1984

जीते रहो, देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मंत्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद वाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महिता का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी है। वह महान और चैतन्यवत् कहे जाते हैं। हमारे आचार्यों ने परमपिता परमात्मा की विवेचना करते हुए कहा है कि कोई भी स्थली ऐसी नहीं है जहाँ वह परमपिता परमात्मा नहीं है, समुद्रों की कोई भी तरंगे ऐसी नहीं है, पर्वतों की कोई गुफा ऐसी नहीं मानी जहाँ वह मेरा देव विद्यमान न हो।

प्रकाश की प्रतिष्ठा

तो इसीलिए हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं, क्योंकि वेदों का प्रत्येक मंत्र ज्ञान और विज्ञान की उड़ान उड़ता रहता है, प्रत्येक वेद मंत्रों में उस महानता का वर्णन आता रहता है जिसको जान करके मानव पवित्र और महान बनता रहता है। क्योंकि मानव का प्रकाश में जाना ही उसका एक लक्ष्य है और जहाँ प्रकाश में प्रकाश की प्रतिष्ठा हुई, मानव की मनोनीत यात्रा समाप्त हो जाती है। जैसे एक यात्री गमन कर रहा है जब वह अपने लक्ष्य पर चला जाता है तो यात्रा समाप्त हो जाती है इसी प्रकार मेरे पुत्रो! यह मानव इस संसार में आया है तो यात्रा करने के लिए आया है। यहाँ प्रत्येक मानव यात्री बनना ही चाहता है। यात्रा का अभिप्राय यह है कि गमन और भ्रमण को दृष्टिपात् करता हुआ मानव यहाँ से गमन कर जाता है, अन्तिम चर उसका सान्त्वना को प्राप्त हो जाता है। जब हम इन वाक्यों पर विचार विनिमय करते हैं कि यह संसार क्या है? तो बहुत ऋषि मुनियों ने अपनी-अपनी कल्पनाएं अपने-अपने विचार व्यक्त किये।

तो बेटा! आज मैं उन विचारों में तो तुम्हें ले जाना नहीं चाहता हूँ केवल यह विचार विनिमय करना है कि हम परमपिता परमात्मा की महती, अथवा उसका यह गान गाया जा रहा है, एक ध्वनि पर ध्वनि प्रतिष्ठित हो रही है और उस ध्वनि में मानव ध्वनित हो रहा है। जैसा हमने पुरातन काल में इससे पूर्वकाल में भी उस संगतिकरण के संबंध में विवेचना हो रही थी। क्योंकि यागों का चलन हमारे यहाँ परम्परागतों से ही माना गया है। यागां ब्रह्मवाचों देवब्रहाः देवमृतम्' यह जो याग कर्म है यह सृष्टि के प्रारम्भ से ही इसकी कल्पना प्रारम्भ हुई और आचार्यों ने इसके ऊपर अन्वेषण करते हुए यह कहा है

कि यदि याग हमसे चला गया तो हमारा प्राण चला गया। क्योंकि हमारा जो याग है वही प्राण है और जो प्राण है वही सूत्र है, वही याग है।

संसार का सुकर्म

तो विचारा गया कि ब्रह्मवाचों इतना व्यापक देने का अभिप्राय यह है 'यागां ब्रह्म वाचो देवां जितना भी संसार का सुकर्म है, सुचिन्तन है, वह सर्वत्र क्रिया कलाप का नामोकरण याग माना गया है। हमारे यहाँ अग्नि में प्रवेश करने से अग्न्याधान करना भी अग्नि को साकल्य देना देवताओं के लिए प्रदान करना है, जिससे वायुमंडल में एक महानता की प्रतिभा आती है। बेटा! इस सम्बन्ध में मैं अपनी कोई विवेचना देने नहीं आया हूँ। केवल विचार-विनिमय यह है इससे पूर्वकाल में कुछ संगतिकरण के संबंध में कुछ विवेचनाएं हो रही थीं और कुछ याग के संबंध में भी चर्चाएं मानो उसका उद्घोष भी उच्चारण किया गया। उस उद्घोष में बेटा! कुछ ऐसा स्मरण है, ऐसा कुछ भान होता है कि मानव को अपने जीवन की प्रतिभा में शुभकर्म करना है, सुचिन्तन करना है अथवा संगतिकरण

करना है। संगतिकरण में मैंने इससे पूर्व काल में बहुत से तथ्य तुम्हें उद्धृत किये, परन्तु आज भी मुझे स्मरण आ रहा है।

संगतिकरण

बेटा! देखो, संगतिकरण नाना प्रकार के साकल्यों को कहा जाता है चाहे वह साकल्य मेघों के अस्वतों में रहने वाला हो। चाहे वह साकल्य गुरुत्व में परिणत होने वाला हो। परन्तु होता वह साकल्य ही है। किसी साकल्य में अग्नि प्रधान है तो किसी में वायु प्रधान है। परन्तु और भी नाना प्रकार की पुष्टियों को ले करके जब मानव व्यापक याग में परिणत हो करके अग्नि में प्राणस्तु करने लगता है, तो मेरे प्यारे! वह संगतिकरण की प्रतिभा बन जाती है। संगतिकरण के ऊपर बेटा! मैंने बहुत पुरातनकाल में तुम्हें एक वाक्य भी प्रगट कराया था।

इस संगतिकरण की चर्चा एक समय महर्षि भारद्वाज मुनि के यहाँ हुई। भारद्वाज मुनि के यहाँ ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धी दोनों विद्यमान थे परन्तु जब संगतिकरण की चर्चाएं हुई। तो उन्होंने कहा भगवन्! वेद का मंत्र कुछ कहता है, वह संगति की चर्चा कर रहा है। परन्तु देखो, हम उस संगति को जानना चाहते हैं महर्षि भारद्वाज मुनि ने ब्रह्मचारी कवन्धी और सुकेता ने अपने में चिन्तन करना प्रारम्भ किया और चिंन्तन करते करते उसको क्रिया में लाना प्रारम्भ किया।

तो उन्होंने मेरे पुत्रो! देखो, गुरुत्व आकर्षण के ऊपर, किस प्रकार ये इतने असंख्य और महाभीमकाय विशाल लोक-लोकान्तर अन्तरिक्ष में भ्रमण कर रहे हैं! इस पर चिन्तन करते करते वे बहुत दूरी चले गये। तो उन्होंने एक यान का निर्माण किया वह नाना साकल्य ले करके उनका संगतिकरण किया, संगतिकरण का अभिप्राय यह हो गया कि वह ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ने लगा। ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ता हुआ अपने में महानता की प्रतिष्ठा में प्रतिष्ठित हो गया। तो मेरे पुत्रो! परमाणुओं में संगतिकरण की चर्चा इसलिए कर रहा हूँ कि वैज्ञानिक भी इसके आश्रित रहते हैं। वैज्ञानिक जन मिलान में एक दूसरे में कुछ लगाते हैं। तो उसी का नाम संगतिकरण बन जाता है।

परमपिता का दान

परन्तु आज मैं विशेष विवेचना न देता हुआ केवल आज तुम्हें ये चर्चा कर रहा हूँ कि हमारे यहाँ जहाँ संगतिकरण आता है वहाँ त्याग की बड़ी विवेचना आती है, मानव को दानी बनना चाहिए। दान किसे कहते हैं? कोई दानी नहीं बन रहा है, बेटा! कोई दानी बन नहीं पाता है क्योंकि दानी किसे कहते हैं? जो दान देता है वह दानी कहलाता है, परन्तु मैं जब बेटा! इसके ऊपर विचार करता हूँ तो एक वेद मंत्र स्मरण आता है और वह वेद मंत्र कहता है 'ब्रह्मा वर्चो देव ब्रहे वाचनां सूर्याणि गच्छतं ब्रह्म वाचा' परन्तु देखो, यह वाक् आता है, वेद का मंत्र कहता है कि हे मानव! तू दान में जाना चाहता है, तो तू उस परमपिता परमात्मा के दान की चर्चा कर। जो एक-एक वस्तु में पिरोया हुआ, परमाणु में पिरोया हुआ है और उसके पश्चात् वह दानेषु बना हुआ है।

चेतना का स्रोत

बेटा! वह कैसा दान कर रहा है? प्रकाश आ रहा है, सूर्य से प्रकाश आ रहा है और सूर्य में प्रकाश द्यौ से आ रहा है और द्यौ से प्रकाश चेतना में बद्ध हो करके आ रहा है और उस चेतना का जो स्रोत है वह ब्रह्म माना गया है। तो विचार विनिमय क्या? कि वह कैसा विचित्र दानी है, बेटा! कैसा महान है? प्रकाश दे रहा है, मानव उसमें रत हो रहा है, प्रकाश को पान कर रहा है, वह प्रकाश का दान दे रहा है, वह कैसा अमूल्य दानी है। पुत्रो! अमृत का प्रसारण कर रहा है, अमृत दे रहा है, वह दान दे रहा है। दान किसका मानो 'ब्रह्म वाचो देवाः दानं ब्रह्म वाचम्' इसको हम दान नहीं कहते। इसे कहते हैं कि यह उसका क्रिया कलाप है। स्वतः उसकी प्रतिभा मानी जाती है।

द्रव्य का सदुपयोग

तो विचार आता है कि दान क्या है? मेरे पुत्रो! देखो, दान उसे कहते हैं जो देवपूजा कर रहा है, परन्तु उसे यह भान है कि वह देवपूजा कर रहा है वह तो अपने हृदय का शोधन कर रहा है, अपने हृदय का सदुपयोग कर रहा है। अब यदि द्रव्य का सदुपयोग होता है तो उसको क्या हम दान कह सकते हैं? वह क्या है! परन्तु विचार आता है कि 'ब्रह्म वाचो देवाः' मेरे प्यारे! देखो, वह दान नहीं कहलाता, वह तो यजमान बन करके वह देवताओं को हवि दे रहा है। क्योंकि देवता उसके शरीर में क्रिया कलाप कर रहे हैं, ब्रह्मांड में क्रिया कलाप कर रहे हैं। तो देवताओं को भोज नहीं दिया जायेगा तो किसे दिया जाये? तो यह अग्नि अपने में धारण होती है अग्नि अपने में प्रकाश देती हुई सूक्ष्म रूप बना देती है। क्या यह दान कहलायेगा? परन्तु वेद का मंत्र कहता है, यह दान नहीं कहलाता, यह तो अपने हव्य का सदुपयोग कर रहा है। क्योंकि द्रव्य का सदुपयोग करने को हम दान कहते है।, परन्तु यह हमारे विचार में नहीं आता।

प्राणों की हवि

परन्तु आगे अनुसंधानवेत्ताओं ने कहा है दानां दयितं ब्रह्मे दानेषु, दानी वह कहलाता है जो मेरे प्यारे! अपने प्राणों की हवि प्रदान कर देता है। प्राण कौन न्यौछावर करता है? कौन प्राण की धारा को अपने में प्रणव बनाता है? मेरे पुत्रो! वह आत्म चेतनावादी है। वह आत्मा का प्रतिष्ठित कहलाता है, परन्तु वास्तव में दानी वह कहलाता है जो उद्गीत गा रहा है, उद्गान गा रहा है। अपनी आत्मा को इतना बलिष्ठ बनाता है कि सिंहराज, मृगराज मौन हो करके उसकी वाणी का श्रवण करने लगे, उसकी वाणी को अपने में ग्रहण करने लगे। तो वह दानेषु कहलाता है।

दान की प्रतिभा

परन्तु देखो, जो वायुमंडल को पवित्र बना रहा है, जो हिंसक प्राणियों को अहिंसा परिणत कर रहा है, वह दान की एक प्रतिभा कहलाती है। परन्तु देखो, इससे भी सूक्ष्मरूपों में जाते हैं तो यहाँ राजा शिव की चर्चाएं आती रहती हैं। यहाँ मुनियों का जीवन स्मरण आता रहता है। ऋषि मुनि तप रहे हैं, त्यागी तपस्वी बन रहे है, परन्तु उस त्याग और तपस्या से वायुमंडल का शोधन हो रहा है। अपने विचारों को महानता में परिणत कर रहा है। तो वह विचारों का दान दे रहा है, वह अपने जीवन का उद्घोष कर रहा है। उसका परिणाम यह होता है कि वायुमंडल में पवित्रता आ जाती है। तो आज वह दान कौन माता कर रही है।

माता का पवित्र दान

मैंने कई काल में माताओं की चर्चाएं की है। कई काल में माता दान दे रही है। माता के गर्भस्थल में शिशु पनप रहा है। माता अपने विचारों को दे रही है, बालक को राष्ट्रीयवादी बना रही है, बालक को वेद के मर्म को जानने वाला ब्रह्मवेत्ता निर्धारित कर रही है। जब वह ब्रह्मवेत्ता बना देती है तो मानो वह माता कितना पवित्र दान दे रही है, वह कितना पवित्र दान दिया जा रहा है राष्ट्र, समाज को। माता लोरियों का पान कराती रहती है, बुद्ध और शुद्ध की विवेचना करती रहती है। ब्रह्मज्ञान की विवेचना करती रहती है कि हे पुत्र! यह ब्रह्म क्या है? जो सर्वत्रता में परिणत रहने वाला है। वह रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण में जो आयतन बनाए हुए, विद्यमान है, उसी का नामोकरण मेरे पुत्रो! उन्होंने मानो देखो, ब्रह्म की घोषणा की। जब ब्रह्मा की इस प्रकार घोषणा होने लगी तो वह परमपिता परमात्मा को साक्षी बना करके अपने विचारों को माता अपने में वह दानक प्रतिव्रता वह समाज को चाहती है, वह समाज को अर्पित करना चाहती है।

ब्रह्म की प्रतिभा

मेरे पुत्रो! वह काल मुझे स्मरण आता रहता है। माता कौशल्या का जीवन भी तपोमय कहलाया जाता था। माता क्या दे देती है संसार को? मुझे वह काल स्मरण आता रहता है बेटा! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज का जीवन। वशिष्ठ मुनि महाराज की माता का जीवन, मेरे पुत्रो! देखो, बालक माता के गर्भ में प्रवेश हो गया था तो माता मुनिवरो! देखो, ब्रह्मज्ञान का अध्ययन करती रहती थी। अपनी वेदी बनाकर के विवेचना में परिणत रहती और ब्रह्मज्ञान का अनुसरण करती रहती कि ब्रह्म क्या है? कहीं उन्होंने बेटा! रजोगुण को, तमोगुण को ही ब्रह्म की उपाधि प्रदान की। कहीं उन्होंने मुनिवरो! देखो, सतोगुण की उपाधि प्रदान की। परन्तु देखो, जब यह विचारा गया कि रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण इन तीनों गुणों पर अनुशासन करने के पश्चात् ब्रह्म की प्रतिभा का भान होता है। ब्रह्मवादी वह बनता है जो विवेकी बन जाता है, जो शून्यता को प्राप्त हो जाता है। मानो देखो, वह माता कितना प्रिय याग कर रही है कि वह शून्यता में ब्रह्म का चिन्तन कर रही है। प्रत्येक प्राण सूत्र को ''प्राणं ब्रह्म वाचः'' बेटा! प्रत्येक श्वांस की प्रतिभा को मुनिवरो! देखो, ब्रह्म में पिरोना चाहती है। वह ब्रह्म में पिरोती हुई शून्यवाद को प्राप्त हो करके उसमें जागरूकता आ गई है कि मुझे दान देना है, मुझे दान करना है। तो अपनी प्रवृत्तियों का दान दे रही है। बालक पनप रहा है और प्रकाश पा रहा है, ब्रह्मजान का प्रकाश पा करके जब यह माता के गर्भ को त्याग कर और पृथ्वी माता के गर्भ में प्रवेश करता है तो उस समय वह जो माता का दिया हुआ उद्बुद्ध जो ज्ञान है, उद्बुद्ध जो अग्नि है उसे देकर के वह माता का धन्यवाद करता है। वह विचारता है कि माता ने यह पवित्रता की प्रतिभा प्रदान की है।

मेरे प्यारे! देखो, मुझे ऐसा स्मरण है कि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज ब्रह्मवेत्ता बने। वह ब्रह्मचारियों में नहीं वह ब्रह्मवेताओं में उपाधि प्रदान करते थे। माता अपना उद्घोष कर रही है। लोरियों का पान कराती है, तो एक समय माता यह चिन्तन कर रही थी कि यह जो संसार है यह क्या है? इसमें मानो देखो, इस संसार में प्रयुक्त रहता है। मैं इस संसार को जानना चाहती हूँ। बालक लोरियां का पान कर रहा है, नेत्रों को शान्तना में पान करके माता के उद्गानों को अपने में उद्गीत रूप में लाना चाहता है। माता अपने में चिन्तन कर रही थी कि यह संसार क्या है? यहाँ जो मानव इस संसार को जिस प्रतिभा में दृष्टिपात् करता है वह ही दृष्टिगोचर आने लगता है। जैसे इस संसार को एक मानव दानों के रूप में स्वीकार करता है कि यह संसार तो दान का क्षेत्र हैं, प्रत्येक मानव देखो, दानी बना हुआ है, आदान-प्रदान हो रहा है। प्राणियों के आदान-प्रदान को दे करके उन्होंने कहा यह दानेषु हो रहा है, यह दान हो रहा है। जहाँ परमाणुओं का एक आदान-प्रदान हो रहा है, द्वितीय परमाणु आदान-प्रदान की प्रतिभा में रत हो रहा है।

देवताओं की प्रसन्नता

तो विचार-विनिमय क्या? वह दानेषु बना हुआ है। माता अपने में चिन्तन कर रही है कि यह संसार तो यज्ञवेदी है मैंने अपनी वेदी पर विद्यमान हो करके साकल्यों से देवताओं को प्रसन्न किया है, परन्तु विचारा गया कि यह देवताओं का प्रसन्न होना ही संसार है। परन्तु आगे विचारा गया कि यह संसार तो एक ब्रह्मवेताओं का समूह है। यहाँ प्रत्येक मानव विवेक चाहता है मेरी प्यारी माता विवेक चाहती हैं और विवेकी बनाना चाहती है। जो इस विवेक में आकर के एक मानव विवेकी बनकर के अपने विवेक का दान दे रहा ह, अपनी प्रतिभा में रत हो करके अपनी मानवीयता का एक चित्रण कर रहा है।

तो मुनिवरो! देखो, माता अपने में चिन्तन कर रही है और विचार रही हैं कि मैं राष्ट्र को कुछ देना चाहती हूँ, मैं मानव समाज को कुछ देना चाहती हूँ, ब्रह्मवेताओं को कुछ देना चाहती हूँ। तो जो माता दान कर रही हैं वह कोई दानी नहीं बन पाती। क्योंकि देखो, यह कोई द्रव्य, दानेषु बना हुआ है। यह विशेषता का वाक्य नहीं हैं। परन्तु

दान वह देता है जो अपने विचारों को दे करके लेखनीबद्ध करके चला जाता है। लेखनी उद्गीत गाने लगती है तो अपने में प्रतिभा गीत बन जाता है।

विचार-विनिमय क्या? मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जहाँ भगवान् कृष्ण और महारानी रूक्मणी दोनों विद्यमान रहते थे और दोनों विद्यमान रह करके समाज में एक समय यह विचारने लगे कि भगवन्। यह जो संसार है यह एक समय देखो, मां काली के रूप में आने वाला है। भगवान् कृष्ण ने कहा-हां प्रियतम प्रायः ऐसा ही है। हमें क्या करना है? तो वह ज्ञानी बन गए और विज्ञान के उन तथ्यों को उन्होंने अपने में निर्धारण किया। जो हमारे यहाँ बेटा! सोम-भानु का सोमवृद्धि की कुछ विधाओं का उन्होंने अपने में भान किया। विज्ञान में अणुवाद का संग्राम हो रहा है। अणु-परमाणुओं को घोषित किया जा रहा है उनका उद्गान किया जा रहा है। परन्तु देखो, वह ऐसा यंत्र है जो उनके विषय में परमाणुओं को अपने में शोषण कर रहा है।

तो बेटा! वैज्ञानिक कितना विशाल काम कर रहा है। वह ज्ञानी बन रहा है, समाज की रक्षा करने के लिए, राष्ट्र की रक्षा करने में लगा हुआ है। वह एक समाज को दूसरे समाज में पिरोना चाहता है। तो मैं दान की चर्चा करता दूरी चला गया। विचार यह दे रहा था कि माता मुनिवरो! देखो, सोमभानु की माता ने अपने पुत्र को जिनको कभी श्रेणा धारा भी कहते थे, माता अपने बालक को पनपा रही है, बना रही है। तो वह दान दे रही है। वह दानेषु बनी हुई है।

तो मुनिवरो! देखो, एक मानव, मानव को ऊँचा बनाना चाहता है अपना उद्घोष करना चाहता है तो वह दान किया जा रहा है। दान की चर्चा करते हुए आचार्यों ने कहा कि जब मानव देव पूजा करता है तो तीनों वाक्य उसमें समाहित हो जाते हैं। मेरे पुत्रो! देखो, मानव अपने में प्रतिष्ठित कल्पना करने लगता है, ऊंची से ऊंची कल्पना करना यह दानेषु कहलाया जाता है।

किरणों के साथ में यन्त्र

मुझे स्मरण आता है महर्षि वशिष्ट मुनि महाराज का जीवन। एक समय महर्षि वशिष्ट मुनि महाराज जहाँ ब्रह्मवेत्ता थे वहाँ वह विज्ञान वेत्ता भी विशेष माने जाते हैं। एक समय माता अरुन्धती के समीप विद्यमान होकर के अपने विद्यालय में यंत्र का किसी काल में निर्माण किया था और उस यंत्र का जब निर्माण किया तो यंत्र में यह विशेषता हमारे यहाँ मानी गई 'सम्भवाः देवो ब्रह्मवाचोवर्णाप्रतिदेवाः' मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वशिष्ट मुनि महाराज ने यंत्र का निर्माण किया इसको उषेरमणि यंत्र कहते थे, इसमें विद्यमान हो करके, एक ऊषा नाम की किरण होती है सूर्य की, मेरे प्यारे! ऊषा किरण के साथ-साथ वह यंत्र गति कर रहा है। वह यंत्र गमन कर रहा है, वायु मंडल में गमन हो रहा है, किरणों के साथ में यंत्र गमन कर रहा है, परन्तु यंत्र में यह विशेषता हैं कि वह किसी के परमाणुओं को निगलता चला जा रहा है और शुद्ध वायुमंडल का प्रसारण कर रहा है। मेरे प्यारे! इतना विशाल याज्ञिक बना हुआ है वह, कितना विशाल दानेषु बना हुआ है, वह दान कर रहा है, अपने को ऊर्ध्वा में सूर्य की किरणों में रमण कर रहा है। तो विचार क्या, मुनिवरो! देखो, यागो में रमण करना, एक-एक याग में रमण करना अपने को दानेषु बनाना है।

उत्तम महादानी

बेटा! उस समय यह विचार हुआ कि संसार में कौन दानी है? कौन दान करता है? तो विचारते विचारते ऋषियों ने यह कहा कि सबसे उत्तम महादानी वह प्रभु है, वह चैतन्य देव है, जब सृष्टि का सृजन हुआ, सृष्टि का प्रारम्भ हुआ तो एक-एक परमाणु को एक-एक सूत्र में पिरो दिया। जब एक-एक परमाणु को एक-एक सूत्र में पिरो दिया, तो कोई सूत्र ऐसा नहीं जो एक दूसरे का मोहानी व्रत हो। किसी को दुखद हो। परमाणुओं का आदान-

प्रदान हो रहा है, विचारों की प्रतिभा में, विचारों के परमाणुओं को अर्पित किया जा रहा है। जो विचार यह कि वह विशालता में एक दानेषु परमपिता परमात्मा जो प्रकाश देता है। रात्रि आ जाती है तो चन्द्रमा का प्रकाश आता है, वह भी तो अमृतमयी देने वाला है।

प्रभु का याग

प्रभु ने ऐसा कहा जाता है कि जब सृष्टि का प्रारम्भ हुआ तो प्रभु ने एक याग किया था उस काल में, वह जो याग था उस याग का नाम था अग्निहोत्री याग। उस याग में आत्मा को यज्ञमान बनाया गया, आत्मा को यजमान बना करके वह जो ब्रह्म बने और वायु को उद्गीत गाने वाला निर्धारित किया और अग्नि मेरे प्यारे! द्रव्यों को प्रदान कर रही थी और पृथ्वी साकल्य की प्रतिपदा कहलाती है। विचार आ गया कि मुनिवरो! देखो, प्रभु ने कोई उद्गाता बनाया, वह उद्गीत गाने वाला, कोई प्रकाश देने वाला, कोई वह प्रिय यागां ब्रह्म यागाः मेरे प्यारे! वह ब्रह्मा का याग माना गया है। वह ब्रह्मयाग कर रहा है, उसी को ले करके यह संसार का चक्र चल रहा है, यह संसार गतिशील हो रहा है, नाना परमाणुओं का आदान-प्रदान हो रहा है। परमाणु का विभाजन किया गया तो मुनिवरो! देखो, उसमें से सर्वत्र ब्रह्मांड दृष्टिपात् हुआ।

समाज का निर्माण

तो विचारने से प्रतीत हुआ कि वह मेरा देव परमपिता परमात्मा सर्वत्र ज्ञानी है, वह तो सर्वत्रदानी बना हुआ है, दान दे रहा है, उद्गीत गा रहा है, उद्घोष हो रहा है। जिस उद्घोष को पा करके मानव कुछ अपना निर्णय देता रहता है।

तो आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूँ। विचार यह देने के लिए आया हूँ कि यहाँ प्रत्येक मानव मां का दानेषु बने हुए हैं, चन्द्रमा तारा मंडलों का प्रकाश आ रहा है, एक दूसरे प्रकाश की प्रतिष्ठा हो रही है। तो वह कैसा प्रिय याग हो रहा है। कैसा प्रिय वह दान दिया जा रहा है कि उससे समाज का निर्माण होता है। माता के गर्भ में शिशु जाता है, तो आकाशगंगा की छाया आ जाती है, लघु मस्तिष्क में छाया आ जाती है, माला बन जाती है तारा मंडलों की। इसलिये वह वैज्ञानिक बन करके अपने जीवन को महान बना सकते हैं। तो विचार विनिमय क्या? मुनिवरो! देखो, यही प्रत्येक दशा में दान दिया जा रहा है। याज्ञिक, यजमान याग कर रहा है, अपना याग कर रहा है, अपने को साक्षी बना रहा है और अग्नि में साकल्य प्रदान कर रहा है, वायुमंडल का शोधन कर रहा है। तो वह दानेषु बना हुआ है, दानं ब्रह्म वाचो देवाः।

एक देखो, पांडितत्य है, वह पांडित्य क्या है? इस समाज में त्रुटि नहीं होनी चाहिए। समाज में विचित्रता आ जाये। तो वह अपने विचारों को उद्घोषित करता हुआ पवित्रता में दृष्टिपात् करना चाहता है। तो वह प्रिय यागों में परिणत हो रहा है। आज मैं विशेषता में जाना नहीं चाहता हूँ, केवल विचार यह देने के लिए आया हूँ कि हमें दानं ब्रह्म वाचो। बेटा! हमारे यहाँ ऐसे दानी हुए हैं जिन्होंने पत्नी के बदले में बेटा! अपने शरीरों को प्रदान कर दिया है और कहा कि एकाकी यही मेरे समीप है, मैं इसको प्रदान करने वाला हूँ।

महादान

बेटा! मुझे एक गाथा स्मरण आती है एक समय देखो, महर्षि प्रवाहन महर्षि शिलक और महर्षि दालम्य यह तीनों माता मल्दालसा के पुत्र कहलाते थे। जब माता अपने विद्यालय में ब्रह्मवेत्ताओं को उपाधि प्रदान कर रही थी तो एक समय जब वह गृह की स्थलियों से माता की आज्ञा से त्याग दिया तो सोमकेतु ऋषि महाराज थे जो वायु गोत्रीय कहलाते थे। वह उनके समीप जाकर के अध्ययन करने लगी। वह अपने में रत होने लगी तो मुनिवरो! देखो, जब वे तीनों विधाता अध्ययन कर रहे थे तो महर्षि प्रवाहण एक समय बेटा! भ्रमण करते हुए गंगा के तट

पर पहुंचे। गंगा के तट पर जैसे ही विद्यमान हो गये तो वह सन्धि का काल था, तो सन्ध्या करने लगे तो बेटा! मुझे स्मरण है कि उसमें एक कृतिकमयी ग्राह था जो एक प्राणी को तपस्या करते हुए स्वाति ब्रह्मवेत्ता को अपने में धारण करने लगे।

अपने में जब धारण कर लिया तो मैंने यह श्रवण किया है कि उस समय महर्षि प्रवाहण ने तपस्या में यह अपने में मनन किया और देखो, प्रार्थना की कि हे ग्राह! तुम इस ब्रह्मचारी को छोड़ दो, अन्यथा यह बड़ा अनर्थ हो जायेगा। कहा कि मैं इसको नहीं त्यागूंगा। उन्होंने कहा किसी प्रकार तुम इसको त्याग सकते हो? कहा-कि एक प्रकार से त्याग सकता हूँ यदि इसके बदले में मुझे मेरा भोज्य प्राप्त हो जाए। क्योंकि यह ब्रह्मचारी मेरा भोज्य बन गया है, यह मेरा भोज्य है। इससे मेरा प्राण गति करेगा। महर्षि प्रवाहण ने कहा-कि तुम मुझे आहार करो। उन्होंने कहा मैं तुम्हें आहार कर सकता हूँ। अप्रतम् मुझे इसके बदले अपना मानसिक प्रिय सभी कुछ प्रदान करूँ।

उस समय जब वे प्रदान करने लगे तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है, ऐसा श्रवण किया है कि उन्होंने अपने श्वांस की प्राण सूत्र को सूत्रित होते हुए मेरे प्यारे! देखो, उदर में प्रवेश कर गये। जब उदर में प्रवेश कर गये तो उन्होंने ब्रह्मचारी को त्याग दिया। तो वह समाधिष्ठ हो गये। तो ऐसा बेटा! मुझे स्मरण है कि वह व्यान प्राण को जानते थे। वह व्यान प्राण को मूलाधार से ले करके अपने प्राण को मुनिवरो! देखो, रीढ़ के साथ-साथ गमन करा करके ब्रह्म इन्द्र में प्रवेश कराना जानते थे; कृतिकाओं में घृणित होना जानते थे। तो तीन दिवस उसके उदर में रहे। परन्तु ग्राह ने यह प्रार्थना की कि प्रभु मैं प्रतिभाषित हो गया हूँ। मैं दुखित हो गया हूँ। तुम मेरे शरीर से दूर चले जाओ।

मुझे कुछ ऐसा स्मरण है कि वह योगेश्वर, वह योगी मुनिवरों! देखो, कौन है? ऋषि प्रवाहण उसके उदर से दूरी हो गये। तो यह कितना महान 'दान' है जो प्राणी की रक्षा करने के लिए अपने प्राणों की बलि प्रदान कर रहे हैं। अपने प्राणों का दान दे रहे हैं। यह सर्वत्र दानेषु बने हुए ऋषि है।

तपस्या का प्रभाव

तो विचार विनिमय क्या? आज मैं तुम्हें यह विचार देने के लिए आया हूँ हमें विचारना है अनुसंधान, अन्वेषण करना है, हमें अपने जीवन को किस प्रकार महान बनाना है, पवित्र बनाना है। बेटा! हमें दान देना है, प्रवृत्तियों का, हमें अहिंसा परमोधर्मः में परिणत हो जाना है। तो विचार विनिमय क्या? द्रव्य का दान, जहाँ मानव द्रव्य का सदुपयोग करता है, उसे भी हम दान कहते हैं। परन्तु एक मानव भावना से प्राणों की रक्षा करता है, प्राणों से प्राणों का संचालन कर रहा है, वह भी एक मुनिवरो! दानेषु बना हुआ है। आज मैं विशेष विवेचना तुम्हें देना नहीं चाहता हूँ। आज मैं भयंकर वन में चला गया हूँ। बेटा! विचार क्या? माता दानेषु बनी हुई है, राजा अपनी प्रजा के लिए तपस्या कर रहा है। राजा प्रजा को ऊँचा बनाना चाहता है और देखो, अपनी प्रवृत्तियों का अपने तपों में रत रह करके वह दानेषु बन जाता है प्रजा के लिए। और प्रजा उसका अनुसरण करके उसके लिए दानेषु बन जाती है और राज्य ऊर्ध्वा में गति करने लगता है।

बेटा! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब किसी काल में महाराजा अश्वपति के यहाँ बेटा! अध्यापन कार्य और क्रिया कलाप करते रहते थे। तो महाराजा अश्वपति एक समय विद्यालय में आये और विद्यालय में आ करके उन्होंने-कहा कि मैं अपने राष्ट्र को दानेषु बनाना चाहता हूँ। वह कैसे बन सकता है? तो उस समय सर्वत्र मानों ब्रह्मवेत्ताओं ने अपने कंठ से उद्गमृता उत्पन्न करते हुए कहा कि तुम तपस्या को चले जाओ। तो महाराजा अश्वपति ने 12 वर्ष का तप किया, और 12 वर्ष तक वेद के छन्दों में रमण करते रहे। उसका परिणाम यह हुआ कि उनका राष्ट्र सर्वत्र गायत्री की गोद में जाने के लिए तत्पर हो गया। क्योंकि प्रत्येक प्राणी गायत्री का पठन पाठन

कर रहा है, वेद की ध्वनि को ध्वनित कर रहा है। तो महाराजा अश्वपति ने यह विचारा कि वास्तव में इस क्रिया कलाप को हम स्वतः करेंगे। वह प्रजा उसी के अनुसार पनपने लगेगी। यदि हमारा क्रिया कलाप अशुद्ध होगा तो प्रजा अशुद्ध होगी, यदि हमारा विचार, क्रिया कलाप पवित्र रहेगा, ऊंची उड़ान उड़ने वाला होगा तो प्रजा भी ऊंची उड़ान उड़ने वाली बनेगी।

राष्ट्र उत्थान में सहायक

यह अपने में उन्होंने धारण किया, अपने में यह उद्घोष किया कि वास्तव में हमें अपने को महान बनाने के लिए वास्तव में तपस्वी बन करके दानेषु बनना है जिससे प्रजा अपना अनुशरण करने लगे। राजा दान दे रहा है, दूसरों को प्रेरणा प्राप्त हो रही है और इस प्रकार राजा एक दूसरे का परस्पर अनुशरण करने से सर्वत्र प्रजा यज्ञ और दान की महिमा से मण्डित होकर राष्ट्र उत्थान में सहायक होती है।

सृष्टि की सहायक

आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या कि हम सभी दानेषु को अपना-अपना कर्त्तव्य मानें। दानेषु केवल द्रव्य का ही नहीं होता। सबसे बड़ा और महान् दानी वह परमपिता परमात्मा का है जो इस विशाल सृष्टि की रचना करके कितना बड़ा दानी बना हुआ है। मानव को उसकी प्रतिभा के ऊपर मनन-चिन्तन करके उस प्रभु के ज्ञान-विज्ञान में रमण करना चाहिये।

द्वितीय देखो, हमारी माता भी दानी बनी हुई है; किस प्रकार अनेक कष्टों को सहन करके वह शिशु का पालन-पोषण करती है और प्रभु की सृष्टि में महान् सहायक बन रही है। माता का कितना बड़ा त्याग और बलिदान है-मानव आज इसको दान ही नहीं समझता। यह कैसी विड़म्बना है और माता के प्रति, नारी जाति के प्रति अपने कर्त्तव्य को नहीं निभाता; नित्यप्रति अधिक उदासीन होता जा रहा है। इसी प्रकार मानो देखो, सूर्य, चन्द्रमा और अनन्त तारागण अपनी-अपनी प्रभा से इस सृष्टि को प्रकाश का, ज्योति का दान करके आभायित बना रहे हैं। क्या पृथ्वी, क्या समुद्र, क्या पर्वत और क्या नदियां, सभी निज-निज क्षेत्र में जैसा-जैसा परमात्मा ने इनको कार्य सौंपा है, उसको कर रहे हैं। यह संसार चक्र एक विराट यज्ञ का स्वरूप है, यह एक महान् यज्ञशाला है, जिसमें सभी पंचभूत तथा अन्य प्रकृति के तत्त्व निज-निज सामर्थ्यानुसार अपनी-अपनी आहुति देते है, साकल्य प्रदान करते हैं।

तो मुनिवरो! देखो, आज के हमारे वाक् का केवल यही अभिप्राय है कि मानव को भी यज्ञ करना अनिवार्य है और इसी में दान व संगतिकरण और देवपूजा तीनों का सम्मिलन हो जाता है। अब हमारा वाक् समाप्त होने जा रहा है, समय मिलेगा तो शेष चर्चाएं कल करेंगे। अब वेद के मन्त्रों का पठन-पाठन होगा। 28.04.1984 केसर भवन, वजीरपुर